दुर्गार्चनपद्धति

आचार्य शिवदत्त मिश्र



दुर्गार्चनपद्धति भाषा-टीका

'शिव' ग्रन्थमाला : ग्रन्थाङ्क-३१

दुर्गार्चन-पद्धतिः

अर्थात्

दुर्गा-रहस्यम्

(गणेशपूजनादारभ्य-पूर्णाहुतिपर्यन्त-दुर्गापूजन-सम्बन्धि-
विविध-विषय-विशिष्ट-परिशिष्ट-विभूषिता)
'शिवदत्ती'-हिन्दी-व्याख्या-सहिता



लेखक तथा सम्पादक :
व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-तन्त्ररत्नाकर-
आचार्य पं० श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री
(शताधिक ग्रन्थों के लेखक-सम्पादक एवं अनुवादक)



प्रकाशक :
श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार
कचौड़ीगली, वाराणसी-२२१००१

प्रकाशक :

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी – २२१००१

फोन : 2392543, 2392471

●

मूल्य : १२० रुपये

डीलक्स मूल्य : १४० रुपये

●

पी – :

'Shiva' Granthamala : Granthank-31

The Durgarchan-Paddhatih OR Durga-Rahasyam

With the
['SHIVADUTTI' Hindi Commentary]

•

By :
Acharya Pt. Shri SHIVDUTTA Mishra Shastri
Vyakarṇacharya, Sahityavaridhi

•

Published By :
Shree Thakur Prasad Pustak Bhandar
Kachourigali, Varanasi - 221001

प्रकाशक :
श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार
कचौडीगली, वाराणसी - २२१००१
फोन : 2392543, 2392471



मूल्य : १२० रुपये
डीलक्स मूल्य : १४० रुपये



'Shiva' Granthamala : Granthank-31

The Durgarchan-Paddhatih
OR
Durga-Rahasyam

With the
['SHIVADUTTI' Hindi Commentary]



By :
Acharya Pt. Shri SHIVDUTTA Mishra Shastri
Vyakarnacharya, Sahityavaridhi



Published By :
Shree Thakur Prasad Pustak Bhandar
Kachourigali, Varanasi - 221001

Publishers :
Shree Thakur Prasad Pustak Bhandar
Kachourigali, Varanasi - 221001

Phone 2392543, 2392471

•

Price : 120/=
Delux Price : 140/=

Printer :
BHARAT PRESS
Kachourigali
Varanasi - 221001

दुर्गार्चन-पद्धतिः



लेखक तथा सम्पादक :

आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री

प्रस्तावना

'**कलौ चण्डी-विनायकौ**' के अनुसार कलियुग में चण्डी–दुर्गा एवं विनायक-गणेश जी की प्रधानता सिद्ध है। उसमें सर्वप्रथम दुर्गा का ही उल्लेख है। वस्तुतः जगज्जननी माता दुर्गा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ को प्रदान करने वाली हैं। अखिल ब्रह्माण्डनायिका मातेश्वरी दुर्गा परमेश्वर की उन प्रधान शक्तियों में-से एक हैं, जिनको समय-समय पर अपनी आवश्यकतानुसार प्रकटित कर परब्रह्म परमात्मा ने विश्व का कल्याण किया है। यथा -

'एकैव शक्तिः परमेश्वरस्य, भिन्नाश्चतुर्धा व्यवहारकाले।
पुरुषेषु विष्णुर्भोगे भवानी, समरे च दुर्गा प्रलये च काली।।'

इनकी आराधना मनुष्य श्रद्धा-भक्ति पूर्वक '**यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्**' के अनुसार जिस कामना से जिस वस्तु की इच्छा करता है, अल्पप्रयास से ही उसकी अवश्य सिद्ध होती है। उसी परमात्मा की आद्या शक्ति दुर्गा की उत्पत्ति एवं माहात्म्य का वर्णन महर्षि वेदव्यास रचित मार्कण्डेय पुराण के सावर्णिक-मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवी-माहात्म्य में किया गया है।

वही अंश जगत्प्रसिद्ध दुर्गा सप्तशती के नाम से प्रत्येक आस्तिकजन के मानस में कामधेनु के समान व्याप्त है। इसीलिए तो किसी प्रकार की आपत्ति प्राप्त होने पर राजा, रंक आदि सभी एक मात्र इसी का आश्रय ग्रहण करते हैं।

इस दुर्गा सप्तशती में मातेश्वरी दुर्गा का चरित्र-चित्रण, कार्य-कौशल एवं देवी-माहात्म्य का वर्णन सात सौ श्लोकों में किया गया है। इसके पाठ-पूजन एवं अनुष्ठान-आराधन द्वारा देवी की कृपा से मनुष्य को सारी सिद्धियाँ हस्तामलक हो जाती हैं।

इस युग में ही भगवती दुर्गा के कृपापात्र सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र परमपूज्य

अनन्त श्रीविभूषित आद्य-शंकराचार्य, संस्कृत साहित्य के अद्वितीय रत्न कालिदास, रामकृष्ण परमहंस, छत्रपति शिवाजी, लोकमान्य तिलक एवं मदनमोहन मालवीय आदि महामानव तो विश्वकल्याण और अपनी अमरकीर्ति स्थापित कर ही चुके हैं, वर्तमान समय में भी आशुतोष भगवान् भूतभावन की भव्यनगरी वाराणसी के निवासी, उत्तर प्रदेश के सर्वश्रेष्ठ कर्णधार, सरयूपारीण ब्राह्मणकुल-भूषण पण्डित श्री कमलापति जी त्रिपाठी, भूतपूर्व मुख्यमंत्री (उत्तर प्रदेश) हैं, जिन्होंने भगवती (विन्ध्यवासिनी) दुर्गा की असीम अनुकम्पा से ही बहुमुखी प्रतिभा, विश्वविख्यात एवं लोकसभा में सर्वोच्च पद पर आसीन हैं। अर्थात् आद्याशक्ति भगवती दुर्गा अपने उपासक भक्तों को सदैव सकल पदार्थ प्रदान करती हैं, यह निश्चयात्मक तथ्य है । जैसे - राजा सुरथ एवं समाधि नामक वैश्य सफल मनोरथ हुए। उदाहरण स्वरूप इनकी संक्षिप्त कथाएँ, दुर्गा सप्तशती के अन्तर्गत तीन चरित्रों में वर्णित हैं, जो इस प्रकार हैं ।

प्रथम चरित्र

दूसरे मनु के राज्यकाल में सुरथ नामक एक बहुत प्रतापी राजा हुए थे। उनका राज्य मन्त्रियों के दुष्टाचरण के कारण उनके हाथ से निकल गया। वह राजा व्यथित हृदय होकर जंगल में चला गया। वहाँ उसकी भेंट 'मेधा' नामक मुनि से हुई। मुनि ने राजा को बहुत आश्वस्त किया, फिर भी राजा का मोह दूर न हुआ। इन्हीं ऋषि के आश्रम में 'समाधि' नामक एक वैश्य से राजा का परिचय हुआ। राजा की भाँति वैश्य भी अपने परिवार के द्वारा निर्वासित था। इतना होने पर भी वह वैश्य अपने परिवार के लिए व्याकुल रहा करता था।

इन दोनों मोहग्रस्त व्यक्तियों ने मुनि से अपने अज्ञान दूर न होने का कारण पूछा। तब मुनि ने उत्तर में कहा कि, महामाया भगवती ही जीवों के चित्त को अपनी ओर अनायास आकृष्ट कर लेती हैं और वही अन्त में कृपापूर्वक भक्तों को वर देकर उनका उद्धार भी करती हैं ।

तब राजा सुरथ ने ऋषि से पूछा कि वह महामाया देवी कौन हैं, उनकी उत्पत्ति कैसे हुई और उनका प्रभाव क्या है ?

राजा से मुनि ने कहा -

"नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ।"

अर्थात् उनकी मूर्ति नित्यस्वरूपा है तथा उन्हीं के द्वारा सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है। परन्तु देवों की अभीष्ट सिद्धि के निमित्त उनके प्रादुर्भाव का कारण बतलाया गया है।

जब भगवान् विष्णु प्रलयकाल के उपरान्त शेषशय्या पर योगनिद्रा में निमग्न हुए तभी उनके कानों की मैल से मधु और कैटभ नामक दो महादैत्य उत्पन्न हुए। वे दोनों दैत्य भगवान् के नाभि-कमल में स्थित ब्रह्मा जी को मारने के लिए उद्यत हुए। तब ब्रह्मा जी ने योगनिद्रा का स्तवन करके उन्हें प्रसन्न कर उनसे तीन याचनाएँ कीं : १. भगवान् विष्णु का जागृत होना, २. असुरों के संहार के लिए तत्पर होना और ३. असुरों को मुग्ध करके नाश कराना ।

भगवती की कृपा से भगवान् निद्रा त्याग कर उन दैत्यों से युद्धरत हुए। तत्पश्चात् उन असुरों ने मोहग्रस्त होकर भगवान् से वर माँगने को कहा और अन्त में अपने दिए हुए वरदान के द्वारा ही वे मार डाले गये।

तदनन्तर राजा सुरथ और समाधि नामक वैश्य के लिए मेधा मुनि भगवती की उपसना तथा ज्ञानयोग के भेदों का वर्णन करने लगे ।

मध्यम चरित्र

इस चरित्र में ऋषि ने राजा सुरथ तथा समाधि नामक वैश्य के प्रति निष्काम उपासना के द्वारा कामोपासना द्वारा उपलब्ध फलों का निराकरण किया है, जिसकी कथा निम्न प्रकार से है।

पूर्वकाल में महिष नामक एक अत्यन्त बलशाली दैत्य हुआ। उसने समस्त देवों को पराजित कर दिया और स्वयं इन्द्रासनारूढ़ हो गया। राज्यच्युत होने के कारण सभी देवगण दुःखी होकर पृथ्वी पर भटकने लगे।

अन्त में ब्रह्मा जी के साथ देवताओं ने भगवान् विष्णु और शिव जी से अपनी विपत्तियों का वर्णन किया। उन देवों की विपत्ति सुनकर भगवान् के मुख से एक महान् तेज निर्गत हुआ। इसी प्रकार क्रमशः सभी देवों के शरीर से अलग-अलग तेज प्रकट हुआ। अन्त में, उन सभी तेजों का सम्मिलन एक देवी के रूप में परिवर्तित हो गया। तब उन प्रकाशमयी देवी को सभी देवों ने अपने-अपने अमोघ अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये। अस्त्र धारण कर देवी ने घोर अट्टहास किया, जिससे त्रैलोक्य कम्पित हो गया।

उस घोर गर्जन को सुनकर महिष दानव अपनी विशाल वाहिनी के साथ उस शब्द की ओर दौड़ पड़ा। महाशक्ति देवी को देखकर वह दानव देवी के साथ युद्ध में संलग्न हुआ। भगवती तथा उनके वाहन सिंह के कुपित होने से उसकी विशाल सेना तथा चिक्षुर, ताम्र, दुर्धर, दुर्मुख इत्यादि चौदह सेनापति मारे गये। अन्त में वह महिषासुर-भैंसा, हाथी आदि विविध वेशों में युद्ध करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ। तदनन्तर सभी देवों ने देवी की स्तुति करके वरदान माँगा-'आप विपत्ति काल में हम सभी के सहायक हों तथा जो व्यक्ति आपके इस पुनीत आख्यान को श्रवण या पाठ करे वह सभी ऐश्वर्यों का स्वामी हो ।' इस प्रकार वर देकर भगवती वहीं अन्तर्निहित हो गयीं ।

उत्तम चरित्र

इस चरित्र में मेधा मुनि ने इन्द्रादि देवों के राज्यापहरण, आत्मबल से दुःखों का निराकरण तथा पुनः स्वराज्य प्राप्ति का वर्णन और राजा सुरथ के शोक-मोहादि के नाश हेतु आत्मशक्ति की भक्ति करने का उपदेश दिया है।

प्राचीन काल में शुम्भ और निशुम्भ नामक दो महाबलशाली राक्षस उत्पन्न हुए । उन दोनों भाइयों ने इन्द्र को युद्ध में पराजित कर उनके सिंहासन पर अधिकार जमा लिया । समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया । वे सभी देवता व्यथित होकर त्राण पाने के लिए मनुष्यलोक में आये। यहाँ आने पर उन लोगों ने हिमालय पर्वत पर जाकर दुर्गा देवी की आराधना की । हिमालय पर्वत पर गंगा के किनारे पार्वती ने प्रकट होकर

देवों से पूछा – 'तुम लोग क्या चाहते हो ?' तदनन्दर उन्हीं के शरीर से शिवा प्रादुर्भूत होकर देवों के पराजय की बात बतायी । पार्वती के शरीर से अम्बिका की उत्पत्ति हुई । इनका नाम कौशिकी हुआ और शिवा के निर्गत होने से उनका रंग काला हो गया। ये देवी कालिका के नाम से हिमालय पर रहने लगीं । तब परम रूपवती अम्बिका देवी को शुम्भ-निशुम्भ के सेनाध्यक्ष चण्ड-मुण्ड ने देखा और उनके रूप-लावण्य की प्रशंसा शुम्भ-निशुम्भ से की । उसने भगवती को अपने पास लाने के लिए अपने सुग्रीव नामक दूत को भेजा । सुग्रीव ने देवी से शुम्भ-निशुम्भ की इच्छा जतायी ।

तब देवी ने उस असुर दूत से कहा कि, मेरी ऐसी प्रतिज्ञा है कि 'जो कोई मुझे युद्ध में जीतेगा और मेरे समान ही बलशाली होगा मैं उसी से अपना विवाह करूँगी ।' उत्तर में दूत ने कहा कि 'तुम अभिमानवश इस तरह की बातें कर रही हो, नहीं तो ऐसा कौन है जो इस विश्व में शुम्भ-निशुम्भ के सम्मुख खड़े होने का साहस करे । इसलिए तुम यदि अपना सम्मान चाहती हो तो मेरे साथ चली चलो । इस पर देवी ने दूत से अपना सन्देश शुम्भ-निशुम्भ तक पहुँचाने के लिए कहा ।

दूत ने शुम्भ-निशुम्भ से अम्बिका की बात जाकर बतायी । तब असुर ने क्रोधित होकर धूम्रलोचन नामक दैत्य को देवी को पकड़ लाने के लिए भेजा । देवी ने अपने हुँकार से ही उस राक्षस को भस्म कर डाला और उनके वाहन सिंह ने सेना का विनाश कर दिया । तत्पश्चात् असुर-राज की ओर से चण्ड-मुण्ड नामक राक्षस देवी को पकड़ ले जाने के लिए आए । तब अम्बिका ने कोप करके एक काली को अपने ललाट से उत्पन्न किया । काली ने समस्त सेना का विनाश करके चण्ड-मुण्ड का सिर काट लिया, जिससे उनका नाम चामुण्डा हुआ । चण्ड-मुण्ड का संहार हो जाने पर शुम्भ-निशुम्भ ने एक बहुत बड़ी सेना देवी के पास भेजी । इधर ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, कार्तिकेय आदि देवों की शक्तियाँ भी असुरों से युद्ध करने के लिए देवी के पास आ पहुँची । तब देवी ने शिवजी को दूत बनाकर शुम्भ-

निशुम्भ के पास कहलाया कि यदि तुम अपना हित चाहते हो तो देवों को उनका राज्य वापस कर दो और तुम स्वयं पाताल में जाकर वास करो। मदोन्मत्त असुर ने देवी की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया और युद्ध के लिए रणस्थल में आया। देवी ने दैत्यों का विध्वंस प्रारम्भ कर दिया। उधर रक्तबीज नामक दैत्य ने प्रलय का-सा दृश्य मचा दिया। उसके शरीर से जितने भी रक्तकण पृथ्वी पर गिरते थे उतने ही नये रक्तबीज उत्पन्न होकर युद्ध करने लग जाते थे। अन्त में, देवी ने चामुण्डा से कहा कि तुम रक्तबीज के रक्त को अपने मुख में लेकर पान करो। जिससे कि यह दैत्य रक्तरहित होकर पुनः उत्पन्न न हो। तत्पश्चात् उसके शरीर का रक्त समाप्त होते ही देवी ने उसका मस्तक काट दिया। इसके बाद निशुम्भ घमासान युद्ध करते हुए देवी के हाथों मारा गया। तब उसका भाई शुम्भ देवी से भयंकर युद्ध करने लगा। देवी ने उसे भी अन्त में यमलोक भेज दिया। देवगणों ने अम्बिका की स्तुति करके देवी को प्रसन्न किया। तदनन्तर देवी ने देवगणों से कहा कि जब-जब दानवों द्वारा उपद्रव होंगे तभी मैं अवतार धारण कर निश्चय की उनका विनाश करूँगी। इस प्रकार कहकर देवी वहीं अन्तर्धान हो गयीं। तब मेधा ऋषि ने उन्हीं देवी को चारों फलदायिनी कहकर राजा सुरथ से उनका शरण ग्रहण करने का उपदेश दिया।

राजा सुरथ और समाधि नामक वैश्य ऋषि के उपदेशानुसार नदी के तीर पर जाकर भगवती की उपासना करने लगे। उन लोगों की उपासना से भगवती प्रसन्न होकर उनके मनोरथ सफल कीं। राजा ने भगवती की कृपा से अपने नष्ट राज्य को पुनः प्राप्त किया। समाधि नामक वैश्य ने देवी से मोहजनित अज्ञान के निवारण का वर पाया। उन दोनों भक्तों को अभीष्ट वर प्रदान कर देवी दुर्गा वहीं पर अन्तर्निहित हो गयीं।

खेद की बात है कि, दुर्गापूजन एवं अनुष्ठान-विधान सम्बन्धी ऐसी कोई पुस्तक अब तक प्रकाशित नहीं थी, जिससे सभी दुर्गोपासना प्रेमी पाठक

लाभान्वित हो सकें। इस अभाव को पूरा करने एवं पाठक-वर्ग को समुचित सुविधा प्राप्त होने के लिए ही प्रस्तुत पुस्तक लिखी गयी है। अपने विषय की यह पुस्तक सर्वथा नयी होने पर भी यह दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है कि विधि-विधानपूर्वक मातेश्वरी दुर्गा आराधना एवं पूजन प्रकार का ज्ञान भली-भाँति इस 'दुर्गार्चन-पद्धति' द्वारा हो सकता है।

इसमें : गणेशाम्बिकापूजन, कलशपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्र-जप, नान्दीश्राद्ध, आचार्यादिवरण. दिग्-रक्षण, सर्वतोभद्र मण्डल स्थापन एवं पूजन, प्रधान कलश स्थापन, यन्त्रनिर्माण, पीठपूजा, यन्त्रस्थदेवता स्थापन-पूजन, दुर्गाप्रतिमा प्राणप्रतिष्ठा, षोडशोपचार दुर्गापूजन - आदि से लेकर पूर्णाहुति पर्यन्त दुर्गापूजन-हवन और उपासना-सम्बन्धी सभी आवश्यक विषय दिये गये हैं।

दुर्गासप्तशती, शतचण्डी-सहस्रचण्डी प्रयोग, हवनविधान, सम्पुट-विधान, अनुष्ठान-विधान, देव्यपराध-क्षमापनस्तोत्र, आरती एवं कथा आदि विषय भी इसमें दे देने से प्रस्तुत पुस्तक की उपयोगिता अत्याधिक बढ़ गयी है।

प्रस्तुत संस्करण में वैदिकमन्त्रों एवं पौराणिक श्लोकों की अकारादि श्लोकानुक्रमणी तथा दकारादि दुर्गासहस्रनामांवलि और सर्वतोभद्र, नवग्रहचक्र आदि का समावेश भी पाठक वर्ग के लिए बहुत ही उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा, इसमें संशय नहीं।

आशा है, प्रस्तुत हिन्दी टीका सहित होने से दुर्गाराधना करने वाले साधारण पाठकों, साधकों, दुर्गा तत्त्वान्वेषकों एवं विशेषतः पुरोहितों के लिए तो उपयोगी है ही, पूजनप्रयोग में स-स्वर वैदिक मन्त्रों तथा पौराणिक मन्त्रों का उल्लेख होने से नवचण्डी, शतचण्डी, सहस्रचण्डी तथा लक्षचण्डी आदि विशिष्ट यज्ञ-यागादि कराने वाले वैदिक कर्मकाण्डियों के लिए भी यथेष्ट उपयोगी सिद्ध होगी।

इसका संशोधन-संपादन तथा अनुवाद का कार्य भी मैं बड़ी सावधानी

के साथ किया हूँ, तथापि मानव-दोष से सम्भव त्रुटियों के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ और कृपालु पाठकों से नम्र-निवेदन है कि जहाँ-कहीं किसी प्रकार की त्रुटि रह गयी हो, तो उसे सूचित करें, जिसे मैं अग्रिम संस्करण में उसका सुधार करा सकूँ !

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार, कचौड़ीगली, वाराणसी ने विशुद्ध संशोधन-सम्पादन एवं आकर्षक मुद्रण के साथ प्रस्तुत पुस्तक को प्रकाशित किया है ।

इसके सम्पादन में समय-समय पर डॉ० सत्यव्रत शर्मा, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से मुझे विशेष सहायता और सत्परामर्श प्राप्त हुए हैं, एतदर्थ उनका मैं आभारी हूँ ।

प्रस्तुत पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने एवं प्रूफ-संशोधन आदि कार्य में मेरी आयुष्मती पुत्री श्री पुष्पा मिश्रा बी.ए. (धर्मपत्नी, श्री रमेशचन्द्र मिश्र, पाण्डेयपुर, नईबस्ती, वाराणसी) से भी पर्याप्त सहयोग मिला है । इसके लिए परास्बा जगदम्बा भगवती दुर्गा से उनके सुख-सौभाग्य की मंगल कामना करता हूँ ।

इसके सम्पादन में हमें जिन ग्रन्थों से सहायता मिली है, तदर्थ उन विद्वान् ग्रन्थ-सम्पादकों एवं प्रकाशकों का भी मैं आभार मानता हूँ। तथा इसमें सम्मति प्रदान करने वाले विद्वानों, सन्त-महात्माओं का भी मैं ऋणी हूँ, जिन्होंने अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम में भी मेरे ऊपर असीम अनुकम्पा कर पुस्तक की उपयोगिता व्यक्त की है ।

अन्त में, जिस जगज्जननी मातेश्वरी जयन्ती की असीम अनुकम्पा से यह कार्य पूर्ण कर सका हूँ, उन्हीं के पादारविन्द में यह भेंट समर्पित कर, अपने को कृतकृत्य मानता हूँ ।

— शिवदत्त मिश्र शास्त्री

सा.१८/१२७ एस-२, भरतनगर कालोनी,
मौजा - सारङ्गहाल, पंचक्रोशी मार्ग
पाण्डेयपुर, वाराणसी-७

सकल - निगमागम - पारावारीणानां सर्वतन्त्र - स्वतन्त्राणां वर्तमान - शङ्कराचार्यस्वरूपाणां भारतीय - सनातनधर्म-संस्कृति-सभ्यतोद्धारकाणामनन्त-श्रीविभूषित-पूज्यपाद-(श्रीहरिहरानन्दःसरस्वती) करपात्रस्वामिमहाराजानां

शुभाशीर्वचांसि



इह संसारे, नानाविधानर्थान् नैकविधांस्तदुपभोगांश्चाऽन्ते परमपदञ्चाऽभिलाषुकाणां कृते जगज्जननी जगदीश्वरी श्रीदुर्गाम्बैव परं शरणमिति 'ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे तथा शुभाम्' 'आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गाऽपवर्गदा' 'सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छती'त्यादिभिः सुप्रसिद्धचरमेतत् । अधुनातना लौकिका बहुपुरुषपरम्परात एतदनुतिष्ठन्तस्तदनुसारिफलभाजश्चाऽवलोक्यन्ते । आसेतु-हिमाचलं जगदम्बाराधनार्थं मार्कण्डेय-पुराणोक्तस्य सप्तशतीस्तवस्य माहात्म्यं न तिरोहितम् । अविरलप्रचारत्वात् लोकप्रियताऽपि अस्य ग्रन्थस्य सुप्रसिद्धा । 'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्यया ग्रन्थरत्नमिमं सनाथीकुर्वद्भिः **पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि**-महाभागैः शतचण्डी-सहस्रचण्ड्यादिमहत्तम-प्रयोगोपयोगि-नानाविध-कर्मकाण्डादि-विषयान् उपनिबद्धद्भिः 'दुर्गार्चनपद्धति'नामा निबन्धो ग्रथितः । समेषां जगदम्बाचरणाराधनतत्पराणां हृदयावर्जक एष भूयादिति नारायणस्मरणपूर्वकं शुभाशीराशीभिरभिनन्द्यते शमिति ।

— करपात्र स्वामी

श्रीवृन्दावन बिहारी भवन
मिश्रपोखरा, वाराणसी
पौषकृष्ण ८, गुरुवार, सं० २०२९
(२८-१२-१९७२)

अनन्त-श्रीविभूषित ऊर्ध्वाम्नाय, श्रीकाशी-सुमेरु-पीठाधीश्वर
जगद्गुरु शङ्कराचार्य

स्वामी श्री शङ्करानन्द सरस्वती जी महाराज

का

शुभाशीर्वाद

भारतीय संस्कृत वाङ्मय में भगवती आद्याशक्ति की महिमा का सर्वत्र साम्राज्य है। वेद, स्मृति, पुराणादि समस्त ग्रन्थ एक स्वर में पराम्बा का गान करते हैं।

सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः काऽसि त्वं महादेवि ? ।
साऽब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् ।।

– देवी अथर्वशिरोभाग

समस्त देवताओं ने देवी की अर्चना की और जिज्ञासा प्रकट की, 'हे भगवती ! आप कौन हैं ?'। महादेवी ने उत्तर दिया- मैं परमब्रह्मरूपिणी हूँ। प्रकृति-पुरुषात्मक समस्त जगत् मुझसे ही उत्पन्न होता है।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वेदेवैः ।
अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्म्यहमहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ।।

– ऋ० १० मं०, अ० १०, सूक्त १२५।१

रुद्र, वसु, आदित्य तथा विश्वेदेवों के रूप में मैं विचरण करती हूँ। मैं ही मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि और अश्विनी कुमारों के स्वरूप को धारण करती हूँ। अतः समस्त चराचरात्मक विश्व भगवती का ही विलास है।

आद्याशक्ति ही समस्त देवासुर की पूज्या अथवा आराध्या हैं।

आराध्या परमा शक्तिः सर्वैरपि सुराऽसुरैः ।
नाऽतः परतरं किञ्चिदधिकं भुवनत्रये ।।
पूजनीया पराशक्तिर्निर्गुणा सगुणाऽथवा ।।

– देवी०, १।९।८६-८७

निर्गुणा अथवा सगुणरूपा चित्स्वरूपा परमाशक्ति ही समस्त सुरासुरों की आराधनीया हैं । लोकत्रय में भगवती से बढ़कर दूसरा कोई नहीं है ।

भारतवर्ष में आसेतु हिमाचल भगवती की उपासना विभिन्न रूपों में इस समय सर्वत्र की जाती है।

समस्त चण्डीयागों में दुर्गा सप्तशती ही आधार है । इसके प्रत्येक श्लोक मन्त्रस्वरूप हैं । साधक लोग अपने अभीष्ट की सिद्धि इसके द्वारा करते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में शताधिक ग्रन्थों के लेखक, संशोधक-सम्पादक एवं अनुवादक आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र जी ने प्रायः भगवती की उपासना के विविध स्वरूपों का उल्लेख करते हुए यज्ञ-सम्बन्धी आवश्यकताओं का उपस्थापन बहुत ही सरल एवं सर्वाङ्गीण ढंग से किया है । दुर्गापाठ करने के विविध ढंग साधक-परम्परा में प्रचलित हैं। तथापि समस्त प्रकारों में नवार्णमन्त्र का महत्त्व सर्वज़नीन है। सप्तशती के पाठ करते समय आद्यन्त में नवार्ण मन्त्र का जप तथा अर्थानुसन्धान पूर्वक स्फुट एवं शुद्ध पाठ साधक की अभीष्ट सिद्धि में परमोपयोगी होता है – यह हमारा अपना स्वयं का अनुभव है ।

हम आचार्य श्री मिश्र जी के इस प्रकाशन की सुफलता की हार्दिक कामना करते हैं तथा हमारे धर्म पर आये हुए विपत्ति के बादलों को दूर करने हेतु भगवती की आराधना भारतीय जनता करे – यही जगदम्बा से प्रार्थना है ।

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी
भाद्रपद कृष्ण ८, २०४०
(३१-८-१९८३ ई०)

– शङ्करानन्द सरस्वती
(जगद्गुरु शङ्कराचार्य)

प्रस्तुति

पण्डित श्री शिवदत्त मिश्रजी शास्त्री व्याकरणाचार्य, साहित्य-वारिधि, तन्त्ररत्नाकर द्वारा सम्पादित 'दुर्गार्चन-पद्धति' नामक ग्रन्थ मैंने आद्योपान्त देखा । इसमें पंचांग पूजन, दुर्गाषोडशोपचार पूजन एवं पीठपूजन से लेकर उत्तरपूजन, हवनान्त-तिलकाशीर्वाद पर्यन्त के सभी विषय तो समाविष्ट हैं ही दुर्गासप्तशती, शतचण्डी-सहस्रचण्डी प्रयोग, हवन-विधान एवं अनुष्ठान विधान आदि विषय भी दे देने से ग्रन्थ बहुत ही उपयोगी हो गया है ।

आधुनिक शैली में संशोधन-सम्पादन एवं हिन्दीव्याख्या सहित होने से साधारण विद्वानों का तो इससे लाभ होगा ही साथ ही शतचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी आदि महायज्ञ-यागादि करानेवाले वैदिकों, कर्मकाण्डियों तथा यज्ञाचार्यों के लिए भी यह ग्रन्थ बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा ।

'**कलौ चण्डी-विनायकौ**' के अनुसार कलियुग में दुर्गा की उपासना का विशेष महत्त्व है । इसलिए प्रस्तुत ग्रन्थ द्वारा पूजापाठ, हवन और अनुष्ठान आदि से विद्वद्वर्ग तथा मानव मात्र का कल्याण सम्भव है ।

इस स्तुत्य प्रयास के लिए विद्वान् लेखक को मैं हृदय से साधुवाद देता हूँ एवं मेरी हार्दिक शुभ कामना है कि श्री मिश्र जी का यह सत्प्रयास निरन्तर निर्बाध गति से चलता रहे ।

६३।४३, उत्तर बेनिया बाग,
वाराणसी
२९ दिसम्बर, १९७२

- आचार्य सीताराम चतुर्वेदी
(एम०ए०बी०टी०,
एल्० एल्० बी०, साहित्याचार्य)

विषयानुक्रमणिका

इति विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

नवार्णयन्त्रम्



लिखेदष्टदलं पद्मं चन्दना-ऽगुरु-कुङ्कुमैः ।
पद्ममध्ये लिखेच्चक्रं षट्कोणं चण्डिकामयम् ।।१।।
षट्कोणचक्र-मध्यस्थ-माद्यबीजत्रयं लिखेत् ।
पूर्वादिकोणषट्के तु बीजान्यन्यानि विन्यसेत् ।।२।।

सप्तशती-पूजन-यन्त्र-विधानम्

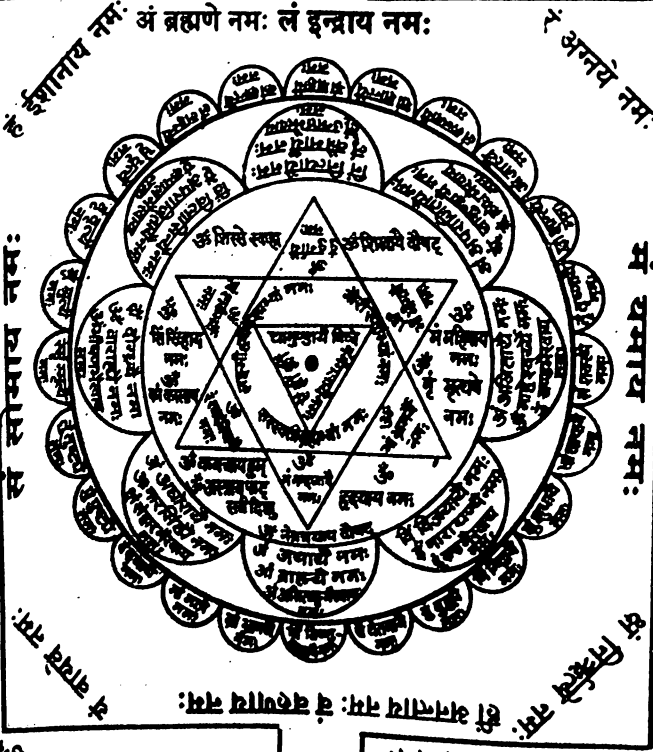
जयादिशक्तिभिर्युक्ते पीठदेवीं यजेत्ततः।
तत्त्वपत्रावृत-त्र्यस्र-षट्कोणाष्ट-दलान्विते ॥१४८॥
त्रिकोणमध्ये सम्पूज्य ध्यात्वा तां मूलमन्त्रतः।
पूर्वकोणे विधातारं सुरया सह पूजयेत् ॥१४९॥
विष्णुं श्रिया च नैर्ऋत्ये वायव्ये तूमया शिवम्।
उदग्-दक्षिणयोः सिंहं महिषं च क्रमाद् यजेत् ॥१५०॥
षट्सु कोणेषु पूर्वादि-नन्दजा रक्तदन्तिकाम्।
शाकम्भरीं तथा दुर्गां भीमां च भ्रामरीं यजेत् ॥१५१॥
सविन्दु-नादाद्यर्णाद्यास्ताराद्याश्च नमोऽन्तिकाः।
नन्दजाद्या यजेच्छक्तीर्वक्ष्यमाणा अपीदृशीः ॥१५२॥
अष्टपत्रेषु ब्रह्माणी पूज्या माहेश्वरी परा।
कौमारी वैष्णवी चाऽथ वाराही नारसिंह्यपि ॥१५३॥
पश्चादैन्द्री च चामुण्डा तथा तत्त्वदलेष्विमाः।
विष्णुमाया चेतना च बुद्धिर्निद्रा क्षुधा ततः ॥१५४॥
छाया शक्तिः परा तृष्णा क्षान्तिर्जातिश्च लज्जया।
शान्तिः श्रद्धा कान्ति-लक्ष्म्यौ धृतिर्वृत्तिः श्रुतिः स्मृतिः ॥१५५॥
तुष्टिः पुष्टिर्दया माता भ्रान्तिः शक्तिरिति क्रमात्।
बहिर्भूगृहकोणेषु गणेशः क्षेत्रपालकः ॥१५६॥
बटुकश्चापि योगिन्यः पूज्या इन्द्रादिका अपि।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेत् सौभाग्यभाजनम् ॥१५७॥

– *मन्त्रमहोदधि, तरंग १८*

सप्तशती-पूजन-यन्त्रम्

(पूर्व)

देव पश्चिमा



दुर्गा-ध्यानम्

ॐ जटा - जूट - समायुक्तामर्धेन्दु-कृत - लक्षणाम् ।
लोचनत्रय - संयुक्तां पद्मेन्दुसदृशाननाम् ।।१।।
अतसीपुष्पवर्णाभां सुप्रतिष्ठां सुलोचनाम् ।
नव - यौवन - सम्पन्नां सर्वाभरण - भूषिताम् ।।२।।
सुचारुवदनां तद्वत् - पीनोन्नत - पयोधराम् ।
त्रिभङ्गस्थान - संस्थान - महिषासुर - मर्दिनीम् ।।३।।
त्रिशूलं दक्षिणे दद्यात् खड्गं चक्रं क्रमादधः ।
तीक्ष्ण - बाणं तथा शक्तिं वामतोऽपि निबोधत ।।४।।
खेटकं पूर्णचापं च पाशमङ्कुशमुर्ध्वजम् ।
घण्टां च परशुं वाऽपि वामतः सन्निवेशयेत् ।।५।।
अधस्तान्महिषं तद्वद् - विशिरस्कं प्रदर्शयेत् ।
शिरश्छेदोद्भवं तद्वद् दानवं खड्गपाणिनम् ।।६।।
हृदि शूलेन निर्भिन्नं निर्दयन्तं विभूषितम् ।
रक्तरक्ती कृताङ्गं च रक्त - विस्फारितेक्षणम् ।।७।।
वेष्टितं नागपाशेन भृकुटी - भीषणाननाम् ।
स - पाश - वामहस्तेन धृतकेशं च दुर्गया ।।८।।
बमद् - रुधिर - वक्त्रं च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ।
देव्यास्तु दक्षिणं पादं समसिंहोपरिस्थितम् ।।९।।
किञ्चिदूर्ध्वं तथा वाममङ्गुष्ठो महिषोपरि ।
स्तूयमानं च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत् ।।१०।।

श्रीदुर्गादेव्यै नमः



ध्यान श्लोक

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतिधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजन-प्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि ! विश्वम् ॥



॥ श्रीमात्रे जयन्त्यै नमः ॥

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचिता

दुर्गार्चन-पद्धतिः

'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्या-विभूषिता



पितरं सन्तशरणं जयन्तीं मातरं तथा ।
नमस्कृत्य प्रकुर्वेऽहं श्रीदुर्गार्चनपद्धतिम् ॥

शुभग्रहेऽनुकूलसमये शुभे दिने शुभे लग्ने च कृतनित्यक्रियो यजमानः शुभासने प्राङ्मुख उपविश्य, स्वदक्षिणतः पत्नीं चोपवेश्य[1] । ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः, इति त्रिराचम्य ।

ॐ पवित्त्रे स्त्थो व्वैष्ष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्प्रसव ऽउत्त्पुनाम्म्यच्छिद्द्रेण पवित्त्रेण सूर्य्यस्य रश्म्मिभिः। तस्य ते पवित्त्रपते पवित्त्रपूतस्य यत्त्कामः पुने तच्छकेयम् ॥

['शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या]

अपने अनुकूल ग्रहादिकों के होने पर, अच्छे दिन एवं शुभ लग्न में प्रतिदिन की नित्यक्रिया से निवृत्त होकर, यजमान अपने दक्षिण तरफ पत्नीसहित शुद्ध आसन पर बैठकर, 'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः' पढ़कर तीन बार आचमन करे।

---

१. संस्कार्यः पुरुषो वाऽपि स्त्री वा दक्षिणतः सदा ।
संस्कारकर्ता सर्वत्र तिष्ठेदुत्तरतः सदा ॥

इति मन्त्रेण कुशादि-निर्मित-पवित्रधारणं कृत्वा, ततः प्राणायामत्रयं कुर्यात् ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु । इत्यात्मानं पूजन-सामग्रीं च सम्प्रोक्ष्य, तण्डुल-पूरित-ताम्रपात्रे मृण्मये वा कुङ्कुमेनाऽष्टदलं कृत्वा, तदुपरि गोमयमयीं गौरीं फलमयं गणेशं च संस्थापयेत् ।

स्वस्तिवाचनम्

हस्ते अक्षत-पुष्पाणि गृहीत्वा, 'आ नो भद्रा०' इत्यादि-स्वस्ति-वाचनमन्त्रान् पठेत् ।

ॐ आ नौ भुद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो ऽदब्धासो ऽअपरीतास ऽउद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधे ऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥१॥

और 'ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ०' से लेकर 'पुने तच्छकेयम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर, कुश आदि की बनी पवित्री दाहिने हाथ की अनामिका अँगुली में धारण कर, तीन बार प्राणायाम करे ।

पश्चात् 'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा०' से 'ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु' तक मन्त्र पढ़कर अपने ऊपर और पूजन-सामग्री पर जल छिड़के। तदनन्तर ताम्र पात्र या मिट्टी के कसोरे में चावल भर कर, उसके ऊपर गोबर की गौरी तथा सोपारी का गणेश बनाकर स्थापित करे।

तदनन्तर दाहिने हाथ में अक्षत और फूल लेकर 'ॐ आ नो भद्रा०' से आरम्भ कर, 'ब्रह्मेशानजनार्दनाः' तक पढ़े।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्त्तताम् । देवानाᳬं सख्यमुपसेदिमा व्वयं देवा न ऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥२॥ तान्पूर्व्वया निविदा हूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिन्दक्षमस्रिधम्। अर्य्यमणं व्वरुणᳫं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥३॥ तन्नो व्वातो मयोभु व्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम् ॥४॥ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम् । पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥५॥ स्वस्ति न ऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥६॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंय्यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निर्जिह्वा मनवः सूरचक्षसो व्विश्वे नो देवाऽअवसागमन्निह ॥७॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬंसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः ॥८॥ शतमिन्नु शरदो ऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥९॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदिति-

म्र्माता स पिता स पुत्त्रः। व्विश्श्वे देवा ऽअदितिः पञ्च जना ऽअदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम् ॥१०॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-रोषधयः शान्तिः । व्वनस्प्पतयः शान्तिर्व्विश्श्वे देवाः शान्तिर्ब्ब्रह्म शान्तिः सर्व्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥११॥

यतो यतः समीहसे ततो नो ऽअभयङ्कुरु ।
शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योऽअभयन्नः पशुब्भ्यः ॥१२॥

सुशान्तिर्भवतु ।

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम् ।
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥१॥
वक्रतुण्ड ! महाकाय ! कोटिसूर्यसमप्रभः ! ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव ! सर्वकार्येषु सर्वदा ॥२॥
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥३॥

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।।४।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
सङ्ग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।५।।
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।६।।
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुराऽसुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः।।७।।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके !।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते।।८।।
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः।।९।।
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि।।१०।।
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः।।११।।
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।१२।।
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।१३।।

स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते ।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ।।१४।।
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ।।१५।।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ स्वस्तिवाचनम् ।

●

सङ्कल्पः

यजमानः जला-ऽक्षत-द्रव्यं चादाय, सङ्कल्पं कुर्यात्।

ॐविष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वतरे अष्टा-विंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बू-द्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे (अविमुक्त-वाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने महाश्मशाने गौरीमुखे त्रिकण्टक-विराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे भागे) विक्रमशके बौद्धा-वतारे अमुकनामसंवत्सरे श्रीसूर्ये अमुकायने अमुकऋतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुक-

---

इसके बाद यजमान दाहिने हाथ में जल, अक्षत और द्रव्य लेकर 'ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः' से 'दुर्गापूजनं करिष्ये' तथा

करणे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा-राशिस्थान-स्थितेषु सत्सु एवं ग्रह-गुणगण-विशेषण-विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकशर्मा (वर्मा, गुप्तः) ऽहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा श्रीदुर्गादेवी-प्रीत्यर्थं सर्वपापक्षयपूर्वक-दीर्घायुर्विपुल-धन-धान्य-पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ-शत्रु पराजय - सदभीष्टसिद्ध्यर्थं श्रीदुर्गापूजनं करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्ति-पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारा-पूजनम् आयुष्मन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्ध-माचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्राऽऽदौ निर्विघ्नता-सिद्ध्यर्थं गणेशाऽम्बिकयोः पूजनं करिष्ये ।

इति सङ्कल्पं कृत्वा, [१]षोडशोपचारैः गणपतिं पूजयेत् ।



'गणेशाऽम्बिकयोः पूजनं करिष्ये' तक संकल्प-वाक्य पढ़े ।

इस प्रकार संकल्प करके षोडशोपचार से गणेशजी का पूजन करे ।

---

१. षोडशोपचारास्तु कर्मप्रदीपे -

आवाहना-ऽऽसने पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
स्नानं -वस्त्रोपवीतं च गन्धमाल्यान्यनुक्रमात् ॥१॥
धूपं दीपं च नैवेद्यं ताम्बूलं च प्रदक्षिणा ।
पुष्पाञ्जलिरिति प्रोक्ता उपचारास्तु षोडश ॥२॥
'फलेन सफलावाप्तिः साङ्गता दक्षिणार्पणात्' । इति ॥

गणेशाऽम्बिकापूजनम्

हस्तेऽक्षतान् गृहीत्वा, गणपतिमावाहयेत् ।
हे हेरम्ब त्वमेह्येहि ह्यम्बिकात्र्यम्बकात्मज ! ।
सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्ष लक्षलाभपितुः पितः ॥१॥
नागास्यं नागहारं त्वां गणराजं चतुर्भुजम् ।
भूषितं स्वायुधैर्दिव्यैः पाशाङ्कुशपरश्वधैः ॥२॥
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः ।
इहाऽऽगत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे ॥३॥

ॐ ग॒णाना॑न्त्वा ग॒णप॑तिꣳ हवामहे प्प्रि॒यं प्प्रि॒याणा॑न्त्वा प्प्रि॒यप॑तिꣳ हवामहे नि॒धीना॑न्त्वा नि॒धिप॑तिꣳ हवामहे व्वसो मम । आहम॑जानि गर्ब्भ॒धम् त्वम॑जासि गर्ब्भ॒धम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धि-बुद्धि-सहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अम्बे॒ ऽअम्बि॒केऽम्बालिके॒ न मा॑ नयति॒ कश्च॒न । ससस्त्यश्श्व॒कः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवा॒सिनीम् ॥

हाथ में अक्षत लेकर 'हे हेरम्ब त्वमेह्येहि०' तथा 'ॐ गणाना-न्त्वा०' से 'गणपतिमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर गणेश जी का आवाहन करे।

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वे देवा स इह मादयन्तामोꣳ प्रतिष्ठ ॥

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।
गणेशाऽम्बिके सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम् ।
विचित्र-रत्न-खचितं दिव्यास्तरण-संयुतम् ।।
स्वर्णसिंहासनं चारु गृह्णीष्व सुरपूजित ! ।।

ॐ पुरुष ऽएवेदꣳ सर्व्वं य्यद्भूतं य्यच्च भाव्यम्। उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥

ॐ गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, आसनं समर्पयामि । (अथवा) आसनार्थेऽक्षतान् समर्पयामि ।

सर्वतीर्थसमुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम् ।
विघ्नराज ! गृहाणेदं भगवन् भक्तवत्सल ! ।।

तथा 'हेमाद्रितनयां देवीं' से 'गौरीमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर गौरी का आवाहन करे ।

'ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य०' से 'वरदे भवेताम्' तक मन्त्र-वाक्य पढ़कर गौरी-गणपति पर अक्षत छोड़कर प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए।

पश्चात् 'विचित्ररत्नखचितं०' से लेकर 'आसनं समर्पयामि' तक पढ़कर गणेशाम्बिका के लिए आसन देवे या अक्षत छोड़े।

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्श्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पाद्यं समर्पयामि ।
गणाध्यक्ष ! नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर ! ।
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम् ॥

ॐ त्रिपादूर्ध्व ऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्ष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने ऽअभि ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, अर्घ्यं समर्पयामि ।
विनायक ! नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दित ! ।
गङ्गोदकेन देवेश ! कुरुष्वाचमनं प्रभो ! ॥

ॐ ततो व्विराडजायत व्विराजो ऽअधि पूरुषः ।
स जातो ऽअत्त्यरिच्च्यत पश्श्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां आचमनं समर्पयामि ।
मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम् ।
तदिदं कल्पितं देव ! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

'सर्वतीर्थसमुद्भूतं०' से 'पाद्यं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश के लिए पाद्य (जल) अर्पण करे ।

पुनः 'गणाध्यक्ष०' से आरम्भ कर 'अर्घ्यं समर्पयामि' तक पढ़कर अर्घ्य चढ़ावे ।

'विनायक ! नमस्तुभ्यं०' यहाँ से लेकर 'आचमनं समर्पयामि' तक कह कर आचमन कराये ।

ॐ तस्म्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्ज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्क्रेव्वायव्व्यानारण्णया ग्ग्राम्म्याश्च्च ये ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां स्नानं समर्पयामि । (अथवा) गणेशाम्बिाकाभ्यां नमः, एतानि पाद्या-ऽर्घ्या-ऽऽचमनीय-स्नानीय-पुनराचमनीयानि समर्पयामि ।

[1]पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं पयो दधि घृतं मधु ।
शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः ।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि । (अथवा)
कामधेनु-समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयःस्नानार्थमर्पितम् ॥

और 'मन्दाकिन्यास्तु०' से 'स्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणपति को स्नान कराये अथवा मेरे द्वारा दिये गये गणेशाम्बिका के लिए ये पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान तथा पुनः आचमन के लिए जल समर्पित है।

'पञ्चामृतं०' से 'पंञ्चामृतस्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणपति को पंचामृत - गौ का दूध, दही, घृत, मधु तथा शर्करा (चीनी) से स्नान करावे ।

यदि अलग-अलग पाँचों वस्तु स्नान कराना हो, तो 'कामधेनु-

---

१. क्षीराद्दशगुणं दध्ना घृतेनैव दशोत्तरम् ।
मधुना तद्दशगुणं सितया तु ततोऽधिकम् ॥

ॐ पयः॑ पृथि॒व्यां पय॒ ऽओष॑धीषु॒ पयो॑ दि॒व्यु॒न्तरि॑क्षे॒ पयो॑ धाः । पय॑स्वतीः प्र॒दिशः॑ सन्तु॒ मह्य॑म् ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां पयःस्नानं समर्पयामि ।
पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देव! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ द॒धि॒क्राव्णो॑ ऽअकारिषञ्जि॒ष्णोरश्व॑स्य व्वा॒जिनः॑ । सु॒र॒भि नो॒ मुखा॑ कर॒त्प्रण॒ ऽआयू॑ꣳषि तारिषत् ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां दधिस्नानं समर्पयामि ।
नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ घृ॒तं मि॑मिक्षे घृ॒तम॑स्य॒ योनि॑र्घृ॒ते श्रि॒तो घृ॒तम्व॑स्य॒ धाम॑ । अ॒नु॒ष्व॒धमाव॑ह मा॒दय॑स्व॒ स्वा॒हा॑ कृ॒तं व्वृ॑षभ व्वक्षि ह॒व्यम् ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां घृतस्नानं समर्पयामि ।

समुद्भूतं०' से 'पयःस्नानं समर्पयामि' तक पढ़ कर दूध से स्नान करावे ।

फिर 'पयसस्तु०' से लेकर 'दधिस्नानं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर गणेशाम्बिका के लिए दधि स्नान करावे ।

'नवनीतसमुत्पन्नं०' से लेकर 'घृतस्नानं समर्पयामि' पर्यन्त

पुष्परेणु-समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ मधु व्वाता ऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माद्ध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः ॥१॥

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥२॥

मधुमान्नो व्वनस्प्पतिर्म्मधुमाँ२ ऽअस्तु सूर्य्यः । माद्ध्वीर्ग्गावो भवन्तु नः ॥३॥

गणेशाम्बिकाभ्यां मधुस्नानं समर्पयामि ।

इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम् ।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ अपाꣳ रसमुद्द्वयसꣳ सूर्य्ये सन्तꣳ समाहितम् । अपाꣳ रसस्य यो रसस्तं व्वो गृह्णाम्म्युत्तममुपयाम-गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टंगृह्णाम्म्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ।

गणेशाम्बिकाभ्यां शर्करास्नानं समर्पयामि ।

पढ़कर घृत-स्नान करावे ।

पुनः 'पुष्परेणुसमुद्भूतं०' से लेकर मधुस्नानं समर्पयामि तक पढ़कर मधु-स्नान करावे ।

'इक्षुरससमुद्भूतां०' से आरम्भ कर 'शर्करास्नानं समर्पयामि' पर्यन्त मन्त्र-वाक्य पढ़कर शक्कर (चीनी) से स्नान करावे ।

ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्ता न ऽऊर्ज्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥ (अथवा) शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्त ऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा ऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्ज्जन्न्याः ॥

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।
गणेशाम्बिकाभ्यां स्नानान्ते आचमनं समर्पयामि ।

ॐ युवा सुवासाः परिवीत ऽआगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः । तं धीरासः कवय ऽउन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ॥

शीत-वातोष्ण-संत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।
देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां वस्त्रं समर्पयामि। गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, आचमनं समर्पयामि ।

पश्चात् 'ॐ आपो हिष्ठा०' मन्त्र तथा 'गङ्गे च यमुने चैव०' से 'शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणपति को शुद्ध जल से स्नान कराये । 'गणेशाम्बिकाभ्यां०' कहकर एक आचमनी जल गिरा दे ।

तथा 'ॐ युवा सुवासाः०' से लेकर 'गणेशाम्बिकाभ्यां वस्त्रं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर वस्त्र तथा 'गणेशाम्बिकाभ्याम् आचमनं समर्पयामि' कहकर आचमन जल चढ़ावे ।

ॐसुजा॒तो ज्ज्यो॒तिषा स॒ह शर्म्म॒ व्वरू॑थ॒मास॑द॒-त्त्स्वः॒ । व्वासो॑ ऽअग्ग्ने व्वि॒श्श्वरू॑प॒ᳪ सं॒व्व्ययस्व व्विभावसो ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, उपवस्त्रं समर्पयामि । गणेशाम्बिकाभ्यां आचमनं समर्पयामि (वा) गणेशाम्बिकाभ्यां वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि । गणेशाम्बिकाभ्यां अलङ्करणार्थेऽक्षतान् समर्पयामि ।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥
नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ! ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।
गणेशाम्बिकाभ्यां आचमनं समर्पयामि ।

'ॐ सुजातो ज्योतिषा०' मन्त्र से शुरू कर 'गणेशा० उपवस्त्रं समर्पयामि' तक कहकर, गौरी-गणपति को उपवस्त्र (दुपट्टा या अँगोछा) समर्पण करे। तथा 'गणेशा० आचमनं समर्पयामि' से जल गिरा दे या 'गणेशाम्बिकाभ्यां रक्तसूत्रं समर्पयामि' पढ़कर वस्त्रोपवस्त्र के अभाव में रक्तसूत्र (नारा) और आभूषण के अभाव में 'गणेशाम्बिकाभ्यां अलङ्करणार्थे अक्षतान् समर्पयामि' कहकर अक्षत अर्पण करे।

'ॐ यज्ञोपवीतं०' से 'गणेशाम्बिकाभ्यां आचमनं समर्पयामि' तक पढ़कर गणेशाम्बिका के लिए यज्ञोपवीत चढ़ाकर जल गिरा दे।

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ त्वांगन्धर्वा ऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः । त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ।

गणेशाम्बिकाभ्यां गन्धं समर्पयामि ।

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ! ।।

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्प्रिया ऽअधूषत । अस्तौषत स्वभानवो व्विप्प्रा नविष्ठया मती योजान्विन्द्र ते हरी ॥

गणेशाम्बिकाभ्याम् अक्षतान् समर्पयामि ।

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयाऽऽहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ ओषधीः प्प्रतिमोदध्वं पुष्प्पवतीः प्प्रसूवरीः ।
अश्श्वा ऽइव सजित्त्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्णवः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां पुष्पमालां समर्पयामि ।

तथा 'श्रीखण्डं चन्दनं०' एवं 'ॐ त्वां गन्धर्वा०' से 'गणेशाम्बिकाभ्यां गन्धं समर्पयामि' तक कहकर गौरी-गणपति को चन्दन लगावे ।

'अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ०' से लेकर 'गणेशा० अक्षतान् समर्पयामि' तक पढ़कर गणेशाम्बिका को अक्षत समर्पित करे ।

दुर्वाङ्कुरान् सुहरितानमृतान् मङ्गलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ! ।।

ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ।
एवा नो दूर्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां दुर्वाङ्कुरान् समर्पयामि ।

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम् ।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्ति यह्वाः । घृतस्य धारा ऽअरुषो न व्वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्म्मिभिः पिन्वमानः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां सिन्दूरं समर्पयामि ।

नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम् ।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारु प्रगृह्यताम् ।।

ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहुं ज्याया हेतिं प्परिबाधमानः । हस्तघ्नो व्विश्वा व्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमाᳬंसं प्परिपातु व्विश्वतः ॥

'माल्यादीनि सुगन्धीनि०' से लेकर 'गणेशाम्बिकाभ्यां पुष्पमालां समर्पयामि' तक कहकर फूल की माला चढ़ावे ।

तथा 'दुर्वाङ्कुरान्०' से लेकर 'गणेशाम्बिकाभ्यां दुर्वाङ्कुरान् समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर गौरी-गणपति को दूर्वा समर्पण करे ।

पुनः 'सिन्दूर शोभनं०' से 'गणेशा० सिन्दूरं समर्पयामि' तक पढ़कर गणेशाम्बिका के लिए सिन्दूर समर्पित करना चाहिए ।

गणेशाम्बिकाभ्यां नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि ।
वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्व्व तं य्योऽस्मान् धूर्व्वति तं धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः । देवानामसि व्वह्नितमꣳ सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ।।

गणेशाम्बिकाभ्यां धूपं समर्पयामि ।
साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश ! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने ।
त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ।।

ॐ अग्निर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्य्यो ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा । अग्निर्व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा । ज्ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्ज्योतिः स्वाहा ।।

गणेशाम्बिकाभ्यां दीपं समर्पयामि । हस्तप्रक्षालनम् ।

'नानापरिमलै०' से 'गणेशा० नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणपति को अबीर-बुक्का चढ़ावे ।

इसके बाद 'वनस्पति०' से लेकर 'गणेशा० धूपं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश को धूप दिखावे ।

'साज्यं च वर्तिसंयुक्तं०' से लेकर 'गणेशा० दीपं समर्पयामि' तक कहकर गौरी-गणेश के निमित्त अक्षत रखकर उसके ऊपर दीप

नैवेद्यं गृह्यतां देव! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम् ।।
शर्कराखण्डखाद्यानि दधि-क्षीर-घृतानि च ।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐनाब्भ्या ऽआसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत ।
पद्भ्यांभूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ऽअकल्पयन् ॥

ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा ।

गणेशाम्बिकाभ्यां नैवेद्यं समर्पयामि। आचमनीयं मध्ये पानीयम् उत्तरापोशनं समर्पयामि ।

चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम् ।
करोद्वर्तनकं देव ! गृहाण परमेश्वर ! ।।

ॐ अꣳशुना ते अꣳशुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो ऽअच्युतः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि ।

रखें। तत्पश्चात् हाथ धो ले।

फिर 'नैवेद्यं गृह्यतां०' से आरम्भ कर 'गणेशाम्बिकाभ्यां नैवेद्यं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर गौरी-गणेश को नैवेद्य (भोग) अर्पण करे और 'आचमनीयं मध्ये० उत्तरापोशनं समर्पयामि' वाक्य पढ़कर भूमि पर थोड़ा जल गिरा दे।

'चन्दनं मलयोद्भूतं०' से 'गणेशा० करोर्द्वतनं समर्पयामि' तक पढ़कर दोनों हाथ की अनामिका अङ्गुली से गन्ध छिड़के।

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यंग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां मुखवासार्थे पूगीफल-ताम्बूलं समर्पयामि ।

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नारिकेलफलं समर्पयामि ।

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

'पूगीफलं महद्दिव्यं' से 'गणेशा० पूगीफल-ताम्बूलं समर्पयामि' तक पढ़कर मुख-शुद्धि के लिए गौरी-गणेश को सोपारी, पान और इलायची चढ़ावे ।

तदनन्तर 'इदं फलं मया०' से 'गणेशा० नारिकेलफलं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश को नारियल समर्पण करे ।

गणेशाम्बिकाभ्यां कृतायाः पूजायाः षाड्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम् ।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ।।

ॐ इदꣳ हविः प्प्रजननं मे ऽअस्तु दशवीरꣳ सर्व्वगणꣳ स्वस्तये । आत्मसनि प्प्रजासनि पशुसनि लोकसन्न्यभयसनि । अग्निः प्प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो ऽअस्म्मासु धत्त । आ रात्त्रि पार्थ्थिवꣳ रजः पितुरप्प्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि बृहती वि तिष्ठस ऽआ त्त्वेषं व्वर्त्तते तमः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां कर्पूरनीराजनं समर्पयामि ।

नाना-सुगन्धि-पुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर ! ।।

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्प्रथमान्न्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥

पुनः 'हिरण्यगर्भगर्भस्थं०' से 'गणेशाम्बिकाभ्यां० द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि' तक पढ़कर दक्षिणा चढ़ावे ।

पश्चात् 'कदलीगर्भसम्भूतं०' से शुरू कर 'गणेशा० कर्पूरनीराजनं समर्पयामि' तक पढ़कर कपूर की आरती करे ।

फिर हाथ में फूल लेकर 'नानासुगन्धिपुष्पाणि०' से 'गणेशा-

ॐ गणानान्त्वागणपतिङ्ग् हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपतिङ्ग् हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिङ्ग् हवामहे व्वसोमम । आहमजानि गर्ब्भधमा त्वमजासि गर्ब्भधम् ॥ ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके नमा नयति कश्चन । ससस्त्यश्श्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पील व्वासिनीम् ॥

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः। ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महा-राज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायि स्यात्, सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात्। पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया ऽएकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या-ऽवसन् गृहे। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ।

ॐव्विश्वतश्चक्षुरुत व्विश्वतोमुखो व्विश्वतो-बाहुरुत व्विश्वतस्प्पात् । सम्बाहुब्भ्यान्धमति सम्पत-त्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव ऽएकः ॥

गणेशाम्बिकाभ्यां मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।
यानि कानि च पापानि ज्ञाता-ऽज्ञात-कृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे पदे ।।

म्बिकाभ्यां मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश को मन्त्रपुष्पाञ्जलि समर्पित करे ।

पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति ।
तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ।।

ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ।
तेषाᳬ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ।।

गणेशाम्बिकाभ्यां प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

विशेषार्घः –

जल-गन्धा-ऽक्षत-फल-पुष्प-दूर्वा-दक्षिणाः ताम्रपात्रे प्रक्षिप्य, अवनिकृतजानुमण्डलं कृत्वा, अर्घपात्रमञ्जलिना गृहीत्वा श्लोकान् पठेत् ।

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष ! रक्ष त्रैलोक्यरक्षक ! ।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ।।१।।
द्वैमातुर ! कृपासिन्धो ! षाण्मातुराग्रज प्रभो !।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद ! ।
अनेन सफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदा मम ।।२।।
गणेशाम्बिकाभ्यां विशेषार्घ्यं समर्पयामि ।

इसके बाद 'यानि कानि च०' से लेकर 'गणेशा० प्रदक्षिणां समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश की प्रदक्षिणा करनी चाहिए ।

विशेषार्घ – तत्पश्चात् ताम्रपात्र, कसोरा या दोने में जल, चन्दन, अक्षत, फल, पुष्प, दूर्वा और दक्षिणा रखकर बायाँ ठिहुना मोड़कर अर्घ्यपात्र दोनों अंजुलि में लेकर 'रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष०' से 'गणेशा० विशेषार्घ्यं समर्पयामि' तक पढ़कर गौरी-गणेश को चढ़ा दे ।

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ! नमो नमस्ते।।१।।
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।२।।
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः।।३।।
विश्वरूप-स्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक!।।४।।
लम्बोदर! नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय!।
निर्विघ्नं कुरु मे देव! सर्वकार्येषु सर्वदा।।५।।
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति
तेभ्यो गणेश! वरदो भव नित्यमेव।।६।।
गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम।।७।।

अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ गणेशाम्बिकापूजनं सम्पूर्णम् ।



कलशपूजनम्

ततः कुङ्कुमादिना भूमौ पद्मं कृत्वा,

ॐ म॒ही द्यौः॑ पृ॑थि॒वी च॑ न ऽइ॒मं य॒ज्ञं मि॑मिक्षताम् ।
पि॒पृ॒तान्नो॒ भरी॑मभिः ॥

इति भूमिं स्पृष्ट्वा,

ॐ ओष॑धयः॒ सम॑वदन्त॒ सोमे॑न स॒ह राज्ञा॑ ।
यस्मै॑ कृ॒णोति॑ ब्राह्म॒णस्तꣳ रा॑जन्पारयामसि ॥

इति [1]सप्तधान्यं विकिरेत् ।

प्रार्थना - तत्पश्चात् दोनों हाथ जोड़कर 'विघ्नेश्वराय वरदाय०' से लेकर 'गणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम' तक पढ़कर गौरी-गणेश की प्रार्थना करें ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत
दुर्गार्चनपद्धति में गणेशाम्बिकापूजन समाप्त ।



कलशस्थापन – कुंकुम (रोली) से भूमि पर अष्टदल कमल बनाकर 'ॐ मही द्यौः पृथिवी च०' से 'भरीमभिः' तक मन्त्र पढ़कर

---

१. यव-गोधूम-धान्यानि तिलाः कङ्गुस्तथैव च ।
श्यामकाश्चणकाश्चैव सप्तधान्यानि संविदुः ॥

ॐ आजिग्घ्र कलशं मह्या त्त्वा व्विशन्त्विन्दवः । पुनरूर्ज्जा निवर्त्तस्व सानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्म्माव्विशताद्रयिः ॥

इति सप्तधान्योपरि कलशं[१] स्थापयेत् ।

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनी स्त्थो व्वरुणस्य ऽऋतसदन्न्यसि व्वरुणस्य ऽऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽऋतसदनमासीद ॥

इति कलशे जलं पूरयेत् ।

ॐत्त्वाङ्गन्धर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वांबृहस्प्पतिः । त्वामौषधे सोमो राजा व्विद्वान्न्यक्ष्मादमुच्च्यत ॥

इति कलशे गन्धं क्षिपेत् ।

भूमि का स्पर्श, 'ॐ ओषधयः समवदन्त०' इस मन्त्र से उस अष्टदल कमल पर सप्तधान्य छींटे और 'ॐ आजिघ्र कलशं मह्या त्वा०' मन्त्र पढ़कर उस सप्तधान्य पर कलश स्थापित कर, 'ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि०' से उस स्थापित कलश में जल भरे।

तथा च

यव-धान्य-तिलाः कङ्गुः मुद्ग-चणक-श्यामकाः ।
एतानि सप्तधान्यानि सर्वकार्येषु योजयेत् ॥

१. कलशलक्षणम् -

स्वर्णं वा राजतं वाऽपि ताम्रं मृण्मयजं तु वा ।
अकालमव्रणं चैव सर्वलक्षणसंयुतम् ॥
पञ्चाशाङ्गुल-वैपुल्यमुत्सेधे षोडशाङ्गुलम् ।
द्वादशाङ्गुलकं मूलं मुखमष्टाङ्गुलं तथा ॥

ॐ या ऽओषधीः पूर्व्वा जाता देवेब्भ्यस्त्रियुगं पुरा ।
मनैनु बब्भ्रूणामहठं. शतन्धामानि सप्प्त च ॥

इति मन्त्रेण कलशे सर्वौषधीः[१] प्रक्षिपेत् ।

ॐकाण्डात् काण्डात् प्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्प्परि ।
एवानो दूर्व्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥

इति कलशे दूर्वाङ्कुरान् क्षिपेत् ।

ॐअश्श्वत्थे वो निषदनं पण्र्णे वोव्वसतिष्कृता ।
गोभाज ऽइत्किलासथयत्त्सनवथ पूरुषम् ॥

इति पञ्चपल्लवान्[२] ।

ॐ पवित्त्रे स्थो व्वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्प्रसव ऽउत्त्पुना-म्म्यच्छिद्द्रेण पवित्त्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्त्रपते पवित्त्रपूतस्य यत्त्कामः पुने तच्छकेयम् ॥

तत्पश्चात् 'ॐ त्वां गन्धर्वा०' से लेकर 'विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर गन्ध (चन्दन), 'ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता०' मन्त्र से 'सप्त च' तक पढ़कर सर्वौषधि, 'ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती०' से 'शतेन च' तक मन्त्र से कलश में दुर्वा तथा 'ॐ अश्वत्थे वो०' से 'पुरुषम्' तक मन्त्र पढ़कर कलश में पञ्चपल्लव छोड़े ।

---

१. मुरा मांसी वचा कुण्ठं शैलेयं रजनीद्वयम् ।
सठी चम्पक-मुस्ता च सर्वौषधिगणः स्मृतः ॥

२. न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थः चूतः प्लक्षस्तथैव च ।

इति मन्त्रेण कलशे पवित्र[१] क्षिपेत् ।

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी ।
यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥

इति सप्तमृदः[२] क्षिपेत् ।

ॐ याः फलिनीर्य्या ऽअफला ऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳ हसः ॥

इति कलशे पूगीफलं प्रक्षिपेत् ।

ॐ परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥

इति [३]पञ्चरत्नानि ।

इसके बाद 'ॐ पवित्रे स्थो०' इस मन्त्र से कुश की पवित्री कलश में छोड़कर, 'ॐ स्योना पृथिवी नो०' से 'शर्म सप्रथा:' मन्त्र पढ़कर सप्तमृत्तिका (सात जगह की मिट्टी), 'ॐ या: फलिनीर्या अफला०' से 'मुञ्चन्त्वꣳ. हस:' तक मन्त्र पढ़कर सोपारी, 'ॐ परि

१. पवित्रलक्षणं कात्यायनेनोक्तं यथा -
नाऽन्तर्गर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च ।
प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र-कुत्रचित् ॥

२. अश्वस्थानाद् गजस्थानाद् वल्मीकात् सङ्गमाद् ह्रदात् ।
राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदमानीय निःक्षिपेत् ॥

३. कनकं कुलिशं मुक्ता पद्मरागं च नीलकम् ।
एतानि पञ्चरत्नानि सर्वकार्येषु योजयेत् ॥

अथवा

वज्र-मौक्तिक-वैडूर्य-प्रवालं चेन्द्रनीलकम् ।
अलाभे सर्वरत्नानां हेमं सर्वत्र योजयेत् ॥

ॐ हि॒र॒ण्य॒ग॒र्ब्भः स॒मव॑र्त्त॒ताग्ग्रे॑ भू॒तस्य॑ जा॒तः प॑ति॒रेक॑ ऽआसीत् । स दा॑धार पृथि॒वीं द्यामु॒तेमां कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ व्विधेम ॥

इति कलशे हिरण्यं क्षिपेत् ।

ॐसुजा॑तो॒ ज्ज्योति॑षा स॒ह शर्म्म॒ व्वरू॑थ॒मास॑द॒त्स्वः॑ । व्वासो॑ऽअग्ग्ने व्वि॒श्वरू॑प॒ᳬ संव्व्य॑यस्व व्विभावसो ॥

इति युग्मवस्त्रेण कलशं वेष्टयेत् ।

ॐ पू॒र्ण्णा द॑र्व्वि॒ परा॑प॒त सुपू॑र्ण्णा॒ पुन॒राप॑त । व्व॒स्नेव॑ व्विक्क्री॑णावहा॒ ऽइष॒मूर्ज्जᳬ॑ शतक्क्रतो ॥

इति कलशोपरि पूर्णपात्रं न्यसेत् ।

'ॐ याः फ॒लिनी॒र्य्या ऽअ॑फ॒ला०' ॥

इति मन्त्रेण कलशोपरि नारिकेलफलं संस्थाप्य ।

ॐ तत्त्वा॑ यामि॒ ब्ब्रह्म॑णा॒ व्वन्द॑मान॒स्तदाशा॑स्ते॒ यज॑मानो ह॒विर्ब्भिः॑ । अहे॑डमानो व्वरुणे॒ह बो॒ध्युरु॑शᳬस॒ मा न॒ ऽआयुः॒ प्प्रमो॑षीः ॥

वाजपतिः०' से 'दाशुषे' तक मन्त्र से पंचरत्न, 'ॐ हिरण्यगर्भः०' से 'हविषा विधेम' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर उस कलश में सुवर्ण (द्रव्य) छोड़कर 'ॐ सुजातो ज्योतिषा०' से 'विभावसो०' तक मन्त्र पढ़कर चारों तरफ से कलश में दो वस्त्र लपेटे ।

तदनन्तर 'ॐ पूर्णा दर्वि०' इस मन्त्र से कलश पर पूर्णपात्र (तांबे या कसोरे में चावल भर कर) रख उस पर 'ॐ या

अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि स्थापयामि। ॐ अपांपतये वरुणाय नमः। इति [१]पञ्चोपचारैर्वरुणं सम्पूज्य, ततो गङ्गाद्यावाहनं कुर्यात् ।

कलाकला हि देवानां दानवानां कलाकलाः ।
संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते ।।१।।
कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।।२।।
कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा च मेदिनी ।
अर्जुनी गोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती ।।३।।
कावेरी कृष्णवेणा च गङ्गा चैव महानदी ।
तापी गोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा ।।४।।
नदाश्च विविधा जाता नद्यः सर्वास्तथापराः ।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशस्थानि तानि वै ।।५।।
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ।।६।।

फलिनी०' इस उपर्युक्त मन्त्र से उस कलश पर (अपने सामने) लाल वस्त्र आदि लपेट कर नारिकेल फल रखे । तथा 'ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा०' से लेकर 'प्रमोषीः' पर्यन्त मन्त्र तथा 'अस्मिन् कलशे०' वाक्य पढ़कर, उस कलश में अंगसहित सपरिवार, सायुध-सशक्तिक वरुण का आवाहन और स्थापन करे। एवं 'ॐ अपांपतये वरुणाय नमः' से वरुण का पंचोपचार से पूजन करे ।

१. गन्ध-पुष्पौ धूप-दीपौ नैवेद्येति पञ्चकः ।
पञ्चोपचारमाख्यातं धूपयेत्तत्त्वविद् बुधः ।।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ।।७।।
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ।।८।।

यजमानः स्वहस्ते अक्षतान् गृहीत्वा,

ॐ मनो॑ जू॒तिर्जु॑षता॒माज्ज्य॑स्य॒ बृह॒स्प्पति॑र्य्य॒ज्ञमि॒मं तनो॒त्वरि॑ष्टं॒ य्य॒ज्ञꣳ समि॒मं द॑धातु ।
व्विश्श्वे॑दे॒वास॑ऽइ॒ह मा॑दयन्ता॒मो३म्प्रति॑ष्ठ ॥

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु । ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। विष्णवाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, इति वा । आसनार्थेऽक्षतान् समर्पयामि । पादयोः पाद्यं समर्पयामि । हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि । आचमनं समर्पयामि । पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि । स्नानाङ्गाचमनं समर्पयामि। वस्त्रं समर्पयामि । आचमनं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं समर्पयामि । आचमनं समर्पयामि । उपवस्त्रं समर्पयामि । आचमनं समर्पयामि । गन्धं समर्पयामि । अक्षतान् समर्पयामि । पुष्पमालां समर्पयामि । नानापरिमलद्रव्याणि

तत्पश्चात् 'कलाकला हि देवानां०' से 'दुरितक्षयकारकाः' तक आठ श्लोकों से उस कलश में गङ्गा आदि नदियों का आवाहन करे ।

यजमान अपने दाहिने हाथ में अक्षत लेकर 'ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य०' से 'विष्णवाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः' तक

समर्पयामि । धूपमाघ्रापयामि । दीपं दर्शयामि । हस्त-प्रक्षालनम् । नैवेद्यं समर्पयामि । आचमनीयं समर्पयामि । मध्ये पानीयम् उत्तरापोशनं च समर्पयामि । ताम्बूलं समर्पयामि । पूगीफलं समर्पयामि । कृतायाः पूजायाः षाड्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि । आर्तिक्यं समर्पयामि । मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि । प्रदक्षिणां समर्पयामि । नमस्कारं समर्पयामि । अनया पूजया वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम ।

कलश-प्रार्थना –

देव-दानव-संवादे मथ्यमाने महोदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ ! विधृतो विष्णुना स्वयम् ।।१।।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।।२।।
शिवः स्वयं त्वमेवाऽसि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः स-पैतृकाः ।।३।।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ! ।
सान्निध्यं कुरु मे देव ! प्रसन्नो भव सर्वदा ।।४।।
नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय
सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय ।

पढ़कर कलश पर अक्षत छिड़ककर 'आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि' से 'प्रीयन्तां न मम' तक पढ़कर प्रत्येक वाक्यों से वरुणाद्यावाहित देवताओं का षोडशोपचार से पूजन करे ।

सुपाशहस्ताय झषासनाय
जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ।।५।।
पाशपाणे ! नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक ! ।
पुण्याहवाचनं यावत् तावत्त्वं सन्निधो भव ।।६।।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ कलशपूजनं समाप्तम् ।

●

पुण्याहवाचनम्

अवनिकृत-जानुमण्डलः कमल-मुकुल-सदृशमञ्जलिं शिरस्याधायाऽनन्तरं दक्षिणेन पाणिना स्वर्णपूर्णकलशं धारयित्वा आशिषः प्रार्थयेत् ।

यजमानः-'दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च।
तेनाऽऽयुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।'

विप्राः- 'अस्तु दीर्घमायुः' ।

कलश-प्रार्थना - पश्चात् 'देवदानवसंवादे०' से आरम्भ कर 'तावत्त्वं सन्निधो भव' पर्यन्त श्लोक पढ़कर कलश की प्रार्थना करनी चाहिए।

इस प्रकार दुर्गार्चनपद्धति में कलशपूजन समाप्त ।

●

पुण्याहवाचन - दोनों घुटनों को पृथ्वी पर मोड़कर, कमल के सदृश अपनी अंजलि को सिर पर रखकर, दाहिने हाथ में सोने आदि के जलपूर्ण कलश को अपने सिर से स्पर्श कर यजमान अपने आशीर्वाद के लिए ब्राह्मणों से प्रार्थना करे ।

यजमान - 'दीर्घा नागा०' से लेकर 'दीर्घमायुरस्तु' तक कहे।

ब्राह्मण लोग कहें - 'अस्तु दीर्घमायुः' ।

ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा ऽअदाभ्यः । अतो धर्म्माणि धारयन् ॥

'तेनायुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु'- इति यजमानः।

'पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु'- इति द्विजाः ।

एवं द्विरपरं शिरसि भूमौ निधाय ।

यजमानः ब्राह्मणानां हस्ते 'ॐ शिवा [१]आपः सन्तु' इति दद्यात् । 'सन्तु शिवा आपः' इति ब्राह्मणाः ।

एवं सर्वत्र वचनोत्तरं दद्युः ।

यजमानः– 'सौमनस्यमस्तु' इति पुष्पम्[२] ।

विप्राः– 'अस्तु सौमनस्यम्' ।

यजमानः– 'अक्षतं चाऽरिष्टं चाऽस्तु' इत्यक्षतान्[३] ।

फिर यजमान कहे - 'ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे०' से 'पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु' तक कहे । पुनः ब्राह्मण कहें - 'पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु' ।

इस प्रकार दो बार सिर से उस कलश का स्पर्श कर यथा स्थान रखे। फिर यजमान ब्राह्मणों के हाथ में 'शिवा आपः सन्तु' कह कर जल दे ।

ब्राह्मण कहें - 'सन्तु शिवा आपः' ।

---

१. अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम् ।
ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु ते ॥

२. लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे ।
सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथाऽस्तु नः ॥

३. अक्षतं चाऽस्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम् ।
यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ॥

विप्राः – 'अस्तवक्षतमरिष्टं च' ।

यजमानः – 'गन्धाः पान्तु' इति गन्धम् ।

विप्राः – 'सुमङ्गल्यं चाऽस्तु' ।

यजमानः – 'अक्षताः पान्तु'। विप्राः – 'आयुष्यमस्तु'।

यजमानः – 'पुष्पाणि पान्तु'। विप्राः – 'सौश्रियमस्तु'।

यजमानः –'सफलताम्बूलानि पान्तु'। विप्राः –'ऐश्वर्यमस्तु'।

यजमानः – 'दक्षिणाः पान्तु'। विप्राः – 'बहुदेयं चास्तु'।

इस प्रकार सब जगह यजमान के कहने पर ब्राह्मण उत्तर-प्रत्युत्तर देवें ।

यजमान- 'सौमनस्यमस्तु' पढ़कर ब्राह्मणों के हाथ में पुष्प दे।

ब्राह्मण कहें- 'अस्तु सौमनस्यम्' ।

यजमान- 'अक्षत चाऽरिष्टं चाऽस्तु' पढ़कर अक्षत देवे ।

ब्राह्मण कहें- 'अस्त्वक्षतमरिष्टं च' ।

फिर यजमान- 'गन्धाः पान्तु' कहकर ब्राह्मणों को चन्दन लगावे।

ब्राह्मण कहें- 'सुमंगल्यं चाऽस्तु' ।

यजमान- 'अक्षताः पान्तु' से ब्राह्मणों के हाथ में अक्षत दे ।

ब्राह्मण कहें- 'आयुष्यमस्तु' ।

यजमान- 'पुष्पाणि पान्तु' से ब्राह्मणों के हाथ में पुष्प प्रदान करे।

ब्राह्मण कहें- 'सौश्रियमस्तु' ।

पुनः यजमान- 'सफल-ताम्बूलानि पान्तु' कहकर ब्राह्मणों को फल और ताम्बूल देवे ।

ब्राह्मण कहें- 'ऐश्वर्यमस्तु' ।

यजमान- 'दक्षिणाः पान्तु' पढ़कर ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ।

ब्राह्मण कहें- 'बहुदेयं चाऽस्तु' ।

यजमानः – 'पुनरत्राऽऽपः पान्तु'। विप्राः – 'स्वर्चितमस्तु'।

यजमानः – 'दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चाऽऽयुष्यं चाऽस्तु'।

विप्राः – 'तथाऽस्तु'।

यजमानः – 'यं कृत्वा सर्ववेद-यज्ञ-क्रियाकरण-कर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोङ्कारमादिं कृत्वा, ऋग्-यजुः-सामा-ऽथर्वा-ऽऽशीर्वचनं बहुऋषिमतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये'।

विप्राः - 'वाच्यताम्'।

करोतु स्वस्ति ते ब्रह्मा स्वस्ति चाऽपि द्विजातयः ।
सरीसृपाश्च ये श्रेष्ठास्तेभ्यस्ते स्वस्ति सर्वदा ।।१।।
ययातिर्नहुषश्चैव धुन्धुमारो भगीरथः ।
तुभ्यं राजर्षयः सर्वे स्वस्ति कुर्वन्तु नित्यशः ।।२।।
स्वस्ति तेऽस्तु द्विपादेभ्यश्चतुष्पादेभ्य एव च ।
स्वस्त्यस्त्वापादकेभ्यश्च सर्वेभ्यः स्वस्ति ते सदा ।।३।।
स्वाहा स्वधा शची चैव स्वस्ति कुर्वन्तु ते सदा ।
करोतु स्वस्ति वेदादिर्नित्यं तव महामखे ।।४।।

यजमान- 'पुनरत्रापः पान्तु' कहकर जल दे ।
ब्राह्मण कहें- 'स्वर्चितमस्तु' ।
पुनः यजमान- 'दीर्घमायुः०' से 'चायुष्यं चाऽस्तु' तक कहे ।
ब्राह्मण कहें- 'तथाऽस्तु' ।
यजमान- 'यं कृत्वा०' से 'पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' तक कहे।
उत्तर में ब्राह्मण- 'वाच्यताम्' तथा 'करोतु स्वस्ति ते ब्रह्मा' से

लक्ष्मीररुन्धती चैव कुरुतां स्वस्ति तेऽनघ।
असितो देवलश्चैव विश्वामित्रस्तथाऽङ्गिराः ।।५।।
वशिष्ठः कश्यपश्चैव स्वस्ति कुर्वन्तु ते सदा।
धाता विधाता लोकेशो दिशश्च सदिगीश्वराः ।।६।।
स्वस्ति तेऽद्य प्रयच्छन्तु कार्त्तिकेयश्च षण्मुखः।
विवस्वान् भगवान् स्वस्ति करोतु तव सर्वदा ।।७।।
दिग्गजाश्चैव चत्वारः क्षितिश्च गगनं ग्रहाः।
अधस्ताद् धरणीं चाऽसौ नागो धारयते हि यः ।।८।।
शेषश्च पन्नगश्रेष्ठः स्वस्ति तुभ्यं प्रयच्छतु ।

ॐ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्प्रचतिष्ठुत। नेष्ट्राद्दृतुभिरिष्ष्यत ॥१॥ सविता त्त्वा सवानाᳬ सुवतामग्निर्ग्गृहपतीनाᳬसोमो व्वनस्प्पतीनाम्। बृहस्प्पतिर्व्वाच ऽइन्द्रोज्ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुब्भ्यो मित्त्रः सत्त्यो व्वरुणो धर्म्मपतीनाम् ॥२॥ न तद्रक्षाᳬसि न पिशाचास्त्तरन्ति देवानामोजः प्प्रथमजᳬह्येतत्। यो बिभर्त्ति दाक्षायणᳬ हिरण्ण्यᳬ स देवेषु कृणुते दीर्ग्घमायुः सम्मनुष्ष्येषु कृणुते दीर्ग्घमायुः ॥३॥ उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्म्यादंदे। उग्ग्रᳬ शर्म्म महि श्रवः ॥४॥ उपास्म्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२॥ ऽइयक्षते॥५॥

लेकर 'अभि देवां इयक्षते' तक श्लोक-मन्त्र पढ़ें।

इत्येता ऋचः पुण्याहे ब्रूयात् ।

'व्रत-जप-नियम-तपः-स्वाध्याय-क्रतु-शम-दम-दया-दान-विशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्' इति यजमानः । 'समाहितमनसः स्मः' इति ब्राह्मणाः ।

'प्रसीदन्तु भवन्तः' इति यजमानः ।

'प्रसन्नाः स्मः' इति ब्राह्मणाः ।

ततो यजमानोब्रूयात्- 'शान्तिरस्तु' इत्यादि। 'अस्त्व'ति द्विजाः। एवं वचनं प्रतिवचनं सर्वत्र दद्युः। ॐ शान्तिरस्तु। ॐ पुष्टिरस्तु। ॐ तुष्टिरस्तु। ॐ वृद्धिरस्तु। ॐ अविघ्नमस्तु। ॐ आयुष्यमस्तु। ॐ आरोग्यमस्तु। ॐ शिवमस्तु। ॐ शिवं कर्माऽस्तु। ॐ कर्मसमृद्धिरस्तु। ॐ धर्मसमृद्धिरस्तु। ॐ वेद-समृद्धिरस्तु। ॐ शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ॐ धनधान्य-समृद्धिरस्तु। ॐ इष्टसम्पदस्तु। (बहिः) ॐ अरिष्ट-निरसनमस्तु। ॐ यत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु। (अन्तः) ॐ यच्छ्रेयस्तदस्तु। ॐ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु। ॐ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धि-

---

फिर यजमान- 'व्रत-जप-नियम०' से 'मनः समाधीयताम्' तक कहे।

ब्राह्मण कहें- 'समाहितमनसः स्मः' ।

फिर यजमान कहे- 'प्रसीदन्तु भवन्तः' ।

ब्राह्मण कहें- 'प्रसन्नाः स्मः' ।

इसके बाद यजमान बायें हाथ में अक्षत लेकर दाहिने हाथ से

रस्तु। ॐ उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम्। ॐ तिथि-करण-मुहूर्त-नक्षत्र-ग्रह-लग्न-सम्पदस्तु। ॐ तिथि-करण-मुहूर्त-नक्षत्र-ग्रह-लग्नाधि-देवताः प्रीयन्ताम्। ॐ तिथिकरणे स-मुहूर्ते स-नक्षत्रे स-ग्रहे स-लग्ने साधिदैवते प्रीयेताम्। ॐ दुर्गा-पाञ्चाल्यौ प्रीयेताम्। ॐ अग्निपुरोगाः विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। ॐ इन्द्रपुरोगाः मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ॐ वसिष्ठपुरोगाः ऋषिगणाः प्रीयन्ताम्। ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम्। ॐ अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम्। ॐ विष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम्। ॐ ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम्। ॐ श्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम्। ॐ श्रद्धामेधे प्रीयेताम्। ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम्। ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम्। ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ सर्वा इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्। (बहिः) ॐ हताश्च- ब्रह्मद्विषः। हताश्च परिपन्थिनः। ॐ हताश्च

'ॐ शान्तिरस्तु' से लेकर 'पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' तक वाक्य पढ़कर कलश पर दो-दो दाना अक्षत चढ़ावे। इन वाक्यों के मध्य 'ॐ अरिष्टनिरसनमस्तु' से लेकर 'तद्दूरे प्रतिहतमस्तु' तथा 'ॐ

विघ्नकर्त्तारः । ॐ शत्रवः पराभवं यान्तु । ॐ शाम्यन्तु घोराणि । ॐ शाम्यन्तु पापानि । ॐ शाम्यन्त्वीतयः । ॐ शाम्यन्तूपद्रवाः । (अन्तः) ॐ शुभानि वर्धन्ताम् । ॐ शिवा आपः सन्तु । ॐ शिवा ऋतवः सन्तु । ॐ शिवा ओषधयः सन्तु । ॐ शिवा वनस्पतयः सन्तु। ॐ शिवा अतिथयः सन्तु । ॐ शिवा अग्नयः सन्तु । ॐ शिवा आहुतयः सन्तु । ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम् ।

ॐ निकामे निकामे नः पर्ज्जन्यो व्वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्च्यन्तां य्योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥

ॐ शुक्रा-ऽङ्गारक-बुध-बृहस्पति-शनैश्चर-राहु-केतु-सोम-सहितादित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् । ॐ भगवान् नारायणः प्रीयताम् । ॐ भगवान् पर्जन्यः प्रीयताम् । ॐ भगवान् स्वामी महासेनः प्रीयताम् । पुरोऽनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु । याज्या यत्पुण्यं तदस्तु । वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु । प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु । एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये, इति यजमानः । 'ॐ वाच्यतामि'ति ब्राह्मणाः ।

ॐ ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् ।
वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः ॥
भो ब्राह्मणाः ! मया क्रियमाणस्य दुर्गापूजनाख्यस्य

हताश्च ब्रह्मद्विषः' से 'ॐ शाम्यन्तूपद्रवाः' तक पढ़कर अलग-अलग कसोरे में अक्षत छोड़े ।

ब्राह्मण- 'ॐ वाच्यताम्' इस प्रकार कहें ।

(शतचण्डी-सहस्रचण्डी-नवचण्डी वा) कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु इति यजमानः। 'ॐ पुण्याहं पुण्याहं पुण्याहम्' इति ब्राह्मणाः ।

'ॐ अस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु' इति यजमानः। 'पुण्याहम्-३' इति ब्राह्मणाः। एवं वचनं प्रतिवचनं च त्रिःपठित्वा ।

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः । पुनन्तु विश्श्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥

-इति ब्राह्मणाः ।

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुरा कृतम् ।
ऋषिभिः सिद्ध-गन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः ॥

भो ब्राह्मणाः! मया क्रियमाणस्य दुर्गापूजनाख्यस्य (शतचण्डी-सहस्रचण्डी-नवचण्डी वा) कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ कल्याणं कल्याणं कल्याणम् ।

ॐ यथेमां व्वाचंकल्याणीमावदानि जनेब्भ्यः। ब्ब्रह्मराजन्न्याभ्याᳬं शूद्राय चार्व्याय च स्वाय

पुनः यजमान- 'ॐ ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च०' से 'भवन्तो ब्रुवन्तु' तक तीन बार कहे ।

ब्राह्मण भी तीन बार 'ॐ पुण्याहं पुण्याहं पुण्याहम्' इस प्रकार कहकर 'ॐ पुनन्तु मा देवजनाः' इस मन्त्र को पढ़ें ।

फिर यजमान के 'पृथिव्यामुद्धृतायां तु०' से 'भवन्तो ब्रुवन्तु' पर्यन्त कहने पर ब्राह्मण तीन बार 'ॐ कल्याणम्', 'कल्याणम्', 'कल्याणम्', कहकर 'ॐ यथेमां वाचं०' मन्त्र पढ़ें ।

चारणाय च । प्प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुप मादो नमतु ॥

इति ब्राह्मणाः पठेयुः ।

सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता ।
सम्पूर्णा सुप्रभावा च तामृद्धिं प्रब्रुवन्तु नः ॥

भो ब्राह्मणाः ! मया क्रियमाणस्य दुर्गापूजनाख्यस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवंतु, इति यजमानः । 'ॐ कर्म ऋध्यताम् ३', इति ब्राह्मणाः।

ॐ सत्रस्य ऽऋद्धिरस्यगन्म ज्ज्योतिरमृता ऽअभूम । दिवम्पृथिव्या ऽअद्ध्यारुहामाविदामदेवाँन्त्स्वज्ज्योतिः ॥

स्वस्तिस्तु या विनाशाख्या पुण्य-कल्याण-वृद्धिदा ।
विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः ॥

भो ब्राह्मणाः! मया क्रियमाणस्य दुर्गापूजनाख्यकर्मणः स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु, इति यजमानः । 'ॐ आयुष्मते स्वस्ति ३' इति ब्राह्मणाः ।

ॐ स्वस्ति न ऽइन्द्रो व्वृद्धश्श्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्श्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्प्पतिर्द्दधातु ॥

फिर यजमान 'सागरस्य तु या०' से 'भवन्तो ब्रुवन्तु' तक पढ़े ।

ब्राह्मण- 'ॐ कर्म ऋध्यताम्' इसे तीन बार कहकर, 'ॐ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म०' मन्त्र को पढ़ें ।

पुनः यजमान के 'स्वस्तिस्तु या०' से 'भवन्तो ब्रुवन्तु' तक

समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका ।
हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः ।।

भो ब्राह्मणाः ! मया क्रियमाणस्य दुर्गापूजनाख्यस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु, इति यजमानः । 'ॐ अस्तु श्रीः ३', इति ब्राह्मणाः ।

ॐ श्रीश्श्च ते लक्ष्मीश्श्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्त्राणि रूपमश्श्विनौ व्यात्तम् । इष्ण्णन्निषाणामुं म ऽइषाण सर्व्वलोकम्म ऽइषाण ।।

मृकण्डसूनोरायुर्यद्ध्रुवलोमशयोस्तथा ।
आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम् ।।

-इति यजमानः। 'शतं जीवन्तु भवन्तः' इति ब्राह्मणाः ।

ॐ शतमिन्नु शरदो ऽअन्ति देवा यत्त्रा नश्श्चक्का जरसन्तनूनाम् । पुत्त्रासो यत्त्र पितरो भवन्ति मा नो मद्ध्या रीरिषतायुर्ग्गन्तोः ।।

पढ़ने पर ब्राह्मण 'ॐ आयुष्मते स्वस्ति' तक पढ़कर 'ॐ स्वस्ति न इन्द्रो०' मन्त्र पढ़ें ।

पुनः यजमान-द्वारा 'समुद्रमथनाज्जाता०' से 'भवन्तो ब्रुवन्तु' तक पढ़ने पर ब्राह्मण 'ॐ अस्तु श्रीः' तीन बार कहकर, 'ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च०' मन्त्र पढ़ें ।

फिर यजमान 'मृकण्डसूनो०' से 'शरदः शतम्' तक पढ़े । उत्तर में ब्राह्मण 'शतं जीवन्तु भवन्तः' ऐसा कहकर 'ॐ शतमिन्नुशरदो०' से 'गन्तोः' तक का पाठ करें ।

शिव-गौरी विवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे ।
धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि ।।

-इति यजमानः । 'ॐ अस्तु श्रीः' इति ब्राह्मणाः ।

ॐ मनसः कामुमाकूतिं व्वाचः सत्यमशीय । पशूनाᳬ रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥

प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट् ।
भगवाञ्छाश्वतो नित्यं नो वै रक्षन्तु सर्वतः ।।

ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम् ।

ॐ प्प्रजापते न त्वदेतान्न्यन्न्यो व्विश्श्वा रूपाणि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽअस्त्वयममुष्ष्य पितासावस्य पिता व्वयᳬस्याम पतयो रयीणाᳬ स्वाहा ॥

आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे ।
श्रिये दत्ताशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ।।

यजमान- 'शिव-गौरी-विवाहे०' से 'अस्तु सद्मनि' तक श्लोक पढ़े । प्रतिवचन में ब्राह्मण 'ॐ अस्तु श्रीः' कहकर, 'ॐ मनसः काममाकूतिं०' मन्त्र पढ़ें ।

फिर यजमान के द्वारा 'प्रजापतिर्लोकपालो०' से 'नो वै रक्षन्तु सर्वतः' तक पढ़ने पर 'ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्' इस वाक्य को ब्राह्मण कहें। तथा 'ॐ प्रजापते न त्वदेतां०' से 'रयीणाᳬ. स्वाहा०' तक मन्त्र पढ़ें ।

- इति यजमानः। 'आयुष्मते स्वस्ति' इति ब्राह्मणाः।

ॐ प्रति पन्थामपद्महि स्वस्ति गामनेहसम् । येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥

स्वस्तिवाचनसमृद्धिरस्तु ।

कृतस्य स्वस्तिवाचन कर्मणः समृद्ध्यर्थं स्वस्तिवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्य इमां दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे ।

अभिषेकः

एकस्मिन् पात्रे वरुणोदकं गृहीत्वाऽविधुराश्चत्वारो ब्राह्मणाः दूर्वा-ऽऽम्रपल्लवैः सकुटुम्बं वामभागस्थितां पत्नीं यजमानं चाऽभिषिञ्चेयुः ।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः

यजमान के द्वारा 'आयुष्मते स्वस्तिमते०' से 'वेदपारगैः' पर्यन्त श्लोक पढ़ने पर ब्राह्मण-गण 'आयुष्मते स्वस्ति' वाक्य उच्चारण कर 'प्रति पन्थामपद्महि०' से 'स्वस्तिवाचनसमृद्धिरस्तु' पर्यन्त पढ़ें।

तत्पश्चात् यजमान- 'कृतस्य स्वस्तिवाचनकर्मणः०' से 'दातुमहमुत्सृजे' तक संकल्प-वाक्य पढ़कर स्वस्तिवाचन करने वाले ब्राह्मणों को दक्षिणा दे।

अभिषेक - तदनन्तर अविधुर (विवाहित, पत्नी जिनकी जीवित हो) ब्राह्मण हाथ में कलश के जल को किसी दूसरे पात्र में लेकर दूर्वा एवं आम्रपल्लव-सहित उस जल से (उत्तरमुख बैठे हुए या

शान्तिर्व्विश्श्वे देवाः शान्तिर्ब्ब्रह्म शान्तिः सर्व्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

यतो यतः समीहसे ततो नो ऽअभयङ्कुरु ।
शन्नः कुरु प्प्रजाब्भ्यो ऽअभयन्नः पशुब्भ्यः ॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रि-विरचितायां दुर्गार्चनपद्धतौ पुण्याहवाचनप्रयोगः समाप्तः ।

●

मातृकापूजनम्

आग्नेय्यां प्रतिमास्वक्षत-पुञ्जेषु वा प्राक्संस्थमुदक्संस्थं वा पीठोपरि मातृकास्थापनं कुर्यात् । तद्यथा-

---

खड़े हुए) सपरिवार बायीं ओर पत्नी सहित यजमान के मस्तक पर 'ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ. शान्तिः०' से लेकर 'अमृताऽभिषेकोऽस्तु' तक के मन्त्रों को पढ़ते हुए जल छिड़कें ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित दुर्गार्चनपद्धति में पुण्याहवाचन समाप्त ।

●

मातृकास्थापन - अग्निकोण में एक पीढ़े पर पश्चिम से पूर्व या दक्षिण से उत्तर तक सोलह जगह अक्षत की ढेरी पर गणेश से आरम्भ कर तुष्टि एवं कुल देवी पर्यन्त मातृका स्थापित कर पूजा करे ।

समीपे मातृवर्गस्य सर्वविघ्नहरं सदा।
त्रैलोक्यवन्दितं देवं गणेशं स्थापयाम्यहम्॥

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्ब्भधमा त्त्वमजासि गर्ब्भधम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

जो इस प्रकार है –

षोडश मातृका-चक्र

पूर्व

उत्तर / दक्षिण

आ.कु.देवता १७	लोकमाता १३	देवसेना ९	मेधा ५
तुष्टि १६	माता १२	जया ८	शची ४
पुष्टि १५	स्वाहा ११	विजया ७	पद्मा ३
धृति १४	स्वधा १०	सावित्री ६	गणेश, गौरी १ २

पश्चिम

'समीपे मातृवर्गस्य०' से 'गणपतिमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर प्रथम अक्षत-पुंज (चावल की ढेरी) पर गणेश के लिए अक्षत छोड़े।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि स्थापयामि ।

पद्माभां पद्मवदनां पद्मनाभोरुसंस्थिताम् ।
जगत्प्रियां पद्मवासां पद्मामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ हिरण्यरूपा ऽउषसो विरोक ऽउभाविन्द्रा ऽउदिथः सूर्य्यश्श्च । आरोहतं वरुण मित्र गर्त्तं ततश्चक्षाथामदितिं दितिं च मित्रोऽसि वरुणोऽसि ॥

ॐ पद्मायै नमः, पद्मामावाहयामि स्थापयामि ।

दिव्यरूपां विशालाक्षीं शुचि-कुण्डल-धारिणीम् ।
रक्तमुक्ताद्यलङ्कारां शचीमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ निवेशनः सङ्गमनो वसूनां विश्वा रूपाभिचष्टे शचीभिः । देव ऽइव सविता सत्यधर्म्मेन्द्रो न तस्थौ समरे पथीनाम् ॥

'हेमाद्रितनयां देवीं' से लेकर 'गौरीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर द्वितीय अक्षत-पुंज पर गौरी के लिए अक्षत छिड़के ।

'पद्माभां पद्मवदनां०' से आरम्भ कर 'पद्मामावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर तीसरे अक्षत की ढेरी पर पद्मा के निमित्त अक्षत छोड़े ।

ॐ शच्यै नमः, शचीमावाहयामि स्थापयामि ।

विश्वेऽस्मिन् भूरिवरदां जरां निर्जरसेविताम् ।
बुद्धिप्रबोधिनीं सौम्यां मेधामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ मेधां मे व्वरुणो ददातु मेधामग्निः प्प्रजापतिः । मेधामिन्द्रश्श्च व्वायुश्श्च मेधांधाता ददातु मे स्वाहा ।

ॐ मेधायै नमः, मेधामावाहयामि स्थापयामि ।

जगत्सृष्टिकरीं धात्रीं देवीं प्रणवमातृकाम् ।
वेदगर्भां यज्ञमयीं सावित्रीं स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ सविता त्त्वा सवानाᳫं सुवतामग्निर्गृहपतीनाᳫं सोमो व्वनस्प्पतीनाम् । बृहस्प्पतिर्व्वाचऽइन्द्रो ज्ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुब्भ्यो मित्त्रः सत्त्यो व्वरुणो धर्म्मपतीनाम् ॥

ॐ सावित्र्यै नमः, सावित्रीमावाहयामि स्थापयामि ।

सर्वास्त्रधारिणीं देवीं सर्वाभरणभूषिताम् ।
सर्वदेवस्तुतां वन्द्यां विजयां स्थापयाम्यहम् ।।

'दिव्यरूपां विशालाक्षीं' से 'शचीमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर चतुर्थ अक्षत-पुंज पर शची का आवाहन करे ।

'विश्वेऽस्मिन् भूरिवरदां०' से 'मेधामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पाँचवे अक्षत-पुंज पर मेधा की स्थापना के लिए अक्षत छोड़े ।

'जगत्सृष्टिकरीं धात्रीं' से 'सावित्रीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर छठे अक्षत-पुंज पर सावित्री के लिए अक्षत छोड़े ।

ॐ विज्ज्यन्धनुः कपर्दिनो व्विशल्यो बाणवाँ२ ।। उत । अनेशन्नस्य या ऽइषव ऽआभुरस्य निषङ्गधिः ।।

ॐ विजयायै नमः, विजयामावाहयामि स्थापयामि ।

सुरारिमथिनीं देवीं देवानामभयप्रदाम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां शुभ्रां जयामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्शिश्चाकृणोति समनावगत्य । इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्व्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्प्रसूतः ।।

ॐ जयायै नमः, जयामावाहयामि स्थापयामि ।

मयूरवाहनां देवीं खड्ग-शक्ति-धनुर्धराम् ।
आवाहयेद् देवसेनां तारकासुरमर्दिनीम् ।।

ॐ इन्द्र ऽआसान्नेता बृहस्पतिर्द्दक्षिणा यज्ञः पुर ऽएतु सोमः। देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्ग्रम् ।।

ॐ देवसेनायै नमः, देवसेनामावाहयामि स्थापयामि।

पुनः 'सर्वास्त्रधारिणीं देवीं०' से 'विजयामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर सातवें अक्षत-पुंज पर विजया के लिए अक्षत छोड़े ।

'सुरारिमथिनीं देवीं०' से 'जयामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर आठवें पुंज पर जया के स्थापनार्थ अक्षत छोड़े ।

'मयूरवाहनां देवीं०' से प्रारम्भ कर 'देवसेनामावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर नवें अक्षत-पुंज पर देवसेना के आवाहनार्थ अक्षत छोड़े ।

अग्रजा सर्वदेवानां कव्यार्थं या प्रतिष्ठिता ।
पितॄणां तृप्तिदां देवीं स्वधामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्षन्पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥

ॐ स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि स्थापयामि ।
हविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति ।
तां दिव्यरूपां वरदां स्वाहामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ स्वाहा प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः। पृथिव्यै स्वाहाग्नये स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहा वायवे स्वाहा । दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा ॥

ॐ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि स्थापयामि ।
आवाहयाम्यहं मातॄः सकलाः लोकपूजिताः ।
सर्वकल्याणरूपिण्यो वरदा दिव्यभूषणाः ।।

ॐ आपो ऽअस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो

'अग्रजा सर्वदेवानां०' से 'स्वधामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर दसवें पुंज पर स्वधा के निमित्त अक्षत छीटें ।

'हविर्गृहीत्वा सततं०' से 'स्वाहामावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर ग्यारहवें पुंज पर स्वाहा के लिए अक्षत छोड़ें ।

घृतप्प्वः पुनन्तु। व्विश्श्वᳬ हि रिप्प्रं प्रवहन्ति देवी-रुदिदाब्भ्यᳬ शुचिरा पूत ऽएमि । दीक्षातपसोस्तनू-रसि तां त्वा शिवाᳬशग्ग्मां परिदधे भद्रं व्वर्ण्णं पुष्ष्यन् ॥

ॐ मातृभ्यो नमः, मातृः आवाहयामि स्थापयामि ।
आवाहयेल्लोकमातृर्जयन्तीप्रमुखाः शुभाः ।
नानाऽभीष्टप्रदाः शान्ताः सर्वलोकहितावहाः ।।

ॐ रयिश्श्च मे रायश्श्च मे पुष्ट्टञ्च मे पुष्ट्टिश्श्च मे व्विभु च मे प्प्रभु च मे पूर्ण्णञ्च मे पूर्ण्णतरञ्च मे कुयवञ्च मेऽक्षितञ्च मेऽन्नञ्च मेऽक्षुच्च मे यज्ञेन कल्प्पन्ताम् ॥

ॐ लोकमातृभ्यो नमः, लोकमातृः आवाहयामि स्थापयामि ।

सर्वहर्षकरीं देवीं भक्तानामभयप्रदाम् ।
हर्षोत्फुल्लास्यकमलां धृतिमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्श्च यज्ज्योति-

'आवाहयाम्यहं मातृः' से लेकर 'मातृः आवाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर द्वादश अक्षत-समूह पर मातृ की स्थापना के लिए अक्षत छोड़ें।

तथा 'आवाहयेल्लोकमातृ०' से 'लोकमातृः आवाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर तेरहवें अक्षत-पुंज पर लोकमाता का आवाहन करें।

रन्तरमृतं प्प्रजासु । यस्मान्न ऽऋृते किञ्चन कर्म्म क्क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्क्कल्प्पमस्तु ॥

ॐ धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि स्थापयामि ।

पोषयन्तीं जगत्सर्वं स्वदेहप्रभवैर्नवैः ।
शाकैः फलैर्जलैरत्नैः पुष्टिमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अङ्गान्न्यात्क्मन्त्रिभिषजा तदश्श्विनात्क्मानमङ्गैः समधात्त्सरस्वती । इन्द्रस्य रूपꣳ शतमानमायुश्श्चन्द्रेण ज्ज्योतिरमृतन्दधानाः ॥

ॐ पुष्ट्यै नमः, पुष्टिमावाहयामि स्थापयामि ।

देवैराराधितां देवीं सदा सन्तोषकारिणीम् ।
प्रसादसुमुखीं देवीं तुष्टिमावाहयाम्यहम् ॥

ॐजातवेदसे सुनवामसोममरातीयतो निर्दहातिवेदः। सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्श्वा नावेवसिन्धुं दुरितात्यग्निः॥

ॐ तुष्ट्यै नमः, तुष्टिमावाहयामि स्थापयामि ।

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे ।
नानाजातिकुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम् ॥

'सर्वहर्षकरीं देवीं०' से 'धृतिमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर चौदहवें अक्षत-समूह पर धृति के लिए अक्षत छोड़ें।

'पोषयन्तीं जगत्सर्वं०' से 'पुष्टिमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर पन्द्रहवें अक्षत-पुंज पर पुष्टि देवी के लिए अक्षत छोड़ें ।

'देवैराराधितां देवीं' से 'तुष्टिमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर सोलहवें पुंज पर तुष्टि के निमित्त अक्षत छोड़ें ।

ॐ प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा ।
चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ॥

ॐ आत्मनः कुलदेवतायै नमः, आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमन्दधातु । व्विश्श्वे देवास ऽइह मादयन्तामोँ३ प्रतिष्ठ ॥

गौर्याद्याः कुलदेवतान्तमातरो गणपतिसहिताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ।

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिः आत्मनः कुलदेवताः ।
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्यास्तु षोडश ॥

ॐ गणपत्यादि-कुलदेवतान्त-मातृभ्यो नमः। इति पठित्वा, षोडशोपचारैः सम्पूज्य, प्रार्थयेत्-

---

और 'पत्तने नगरे ग्रामे०' से लेकर 'आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त श्लोक-वाक्य पढ़कर सत्रहवें अक्षत-समूह पर अपनी कुलदेवी के लिए अक्षत छोड़ें ।

इसके बाद 'ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य०' से आरम्भ कर 'सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु' तक पढ़कर सभी मातृकाओं की प्राणप्रतिष्ठा कर, 'गौरी पद्मा शची मेधा०' से 'कुलदेवतान्तमातृभ्यो नमः' तक पढ़कर षोडशोपचार से पूजन करे। तत्पश्चात्

आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम ।
निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरुध्वं सगणाधिपाः ।।

वसोर्धारापूजनम्

आग्नेय्यां भितौ कुङ्कुमादिना बिन्दुकरणेनाऽलङ्करणं कृत्वाऽऽगामिमन्त्रं पठन्, घृतेन सप्तधाराः प्राक्संस्था उदक्संस्था वा कुर्यात् ।

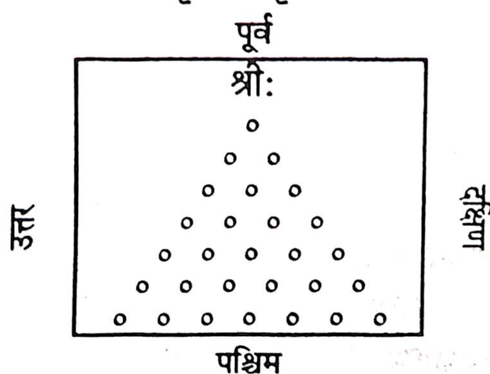
ॐ व्वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः

'आयुरारोग्यमैश्वर्य०' यह श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे ।

वसोर्धारापूजन -

अग्निकोण में दिवाल या पीढ़े पर कुङ्कुम (रोली) से क्रमशः ऊपर से नीचे तक एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह और सात बिन्दुओं को बनाकर अर्थात् ऊपर एक बिन्दु, उसके नीचे दो बिन्दु, पुनः उसके नीचे तीन बिन्दु, इसी प्रकार क्रमशः सात बिन्दु तक निर्माण कर, उन बिन्दुओं के ऊपर भाग में 'श्रीः' लिखे । स्पष्टार्थ के लिए चक्र देखें ।

सप्तघृत-मातृका-चक्र



पुनः उसके नीचे की सात बिन्दुओं में 'ॐ वसोः पवित्रमसि

पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा ॥

इति मन्त्रेण वसोर्धाराः कर्तव्याः । 'कामधुक्षः' इत्येतावता मन्त्रेण (धारामर्धभागेन) गुडेनैकीकरणम् । प्रतिधारामेकैकदेवतामावाहयेत् ।

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय । पशूनाᳬं रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥

ॐ श्रियै नमः, श्रियमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥

ॐ लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬं संस्तनूभि-

---

शतधारं०' से 'सुप्वा' पर्यन्त पढ़कर घृतधारा कर, 'कामधुक्षः' पढ़कर गुड़ के चूरे से सातों घृत-धाराओं को एक में मिला दें।

तत्पश्चात् उन सातों धाराओं में क्रम से एक-एक मन्त्र पढ़ते हुए प्रत्येक पर अक्षत छोड़कर एक-एक देवताओं का आवाहन करें । यथा –

'ॐ **मनसः काममाकूतिं०**' मन्त्र से 'ॐश्रियै नमः, श्रियमावाहयामि **स्थापयामि**' पढ़कर पहली धारा पर अक्षत छोड़कर श्री का, 'ॐ **श्रीश्च ते०**' से 'ॐ लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावाहयामि

व्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः ॥

ॐ धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ मेधां मे व्वरुणो ददातु मेधामग्निः प्प्रजापतिः। मेधामिन्द्रश्च व्वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥

ॐ मेधायै नमः, मेधामावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ प्राणाय स्वाहा ऽअपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा। चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा व्वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ॥

ॐ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्प्रयन्त्स्वः ॥

ॐ प्रज्ञायै नमः, प्रज्ञामावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ पावका नः सरस्वती व्वाजेभिर्व्वाजिनीवती । य्यज्ञं व्वष्टु धियावसुः ॥

स्थापयामि' से लक्ष्मी का, ॐभद्रंकर्णेभिः शृणुयाम०' से 'ॐ धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि स्थापयामि' से धृति का, 'ॐमेधां मे वरुणो०' से 'ॐमेधायै नमः, मेधामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर मेधा का, 'ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा०' मन्त्र से 'ॐ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर स्वाहा का, 'ॐ आयं गौः' से 'ॐ प्रज्ञायै नमः, प्रज्ञामावाहयामि स्थापयामि'

ॐ सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि।
ॐ श्रीर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती ।
माङ्गल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैता घृतमातरः ।।
इति मन्त्रेण वा ।
'ॐ वसोर्धारादेवताभ्यो नमः' इत्यावाह्य,
ॐ मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमं दधातु । विश्वे देवा स ऽइह मादयन्तामोँ ३ प्रतिष्ठ ॥
इति वसोर्धारादेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु । सम्पूज्य, प्रार्थयेत् ।
यदङ्गत्वेन भो देव्यः ! पूजिता विधिमार्गतः ।
कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतुद्भवम् ।।
अनया पूजया वसोर्धारादेवताः प्रीयन्ताम् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ वसोर्धाराप्रकरणम् ।

पर्यन्त पढ़कर प्रज्ञा का, 'ॐ पावका नः सरस्वती०' से 'ॐ सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर सरस्वती का आवाहन करें।

पुनः 'ॐ श्रीर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा०' इस मन्त्र से अथवा 'ॐ वसोर्धारा देवताभ्यो नमः, पढ़कर आवाहन तथा 'ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य०' से 'वरदाः भवन्तु' तक पढ़कर, प्राणप्रतिष्ठा एवं विधिपूर्वक पूजन करना चाहिए। पश्चात् 'यदङ्गत्वेन भो देव्यः' से 'निर्विघ्नेन क्रतुद्भवम्' पर्यन्त पढ़कर प्रार्थना करें।

'अनया पूजया०' से 'प्रीयन्ताम्' तक वाक्य पढ़कर जल छोड़ें।

इस प्रकार वसोर्धारा पूजन समाप्त ।

आयुष्यमन्त्रजपः

यदायुष्यं चिरं देवाः सप्तकल्पान्तजीविषु ।
ददुस्तेनायुषा युक्ता जीवेम शरदः शतम् ।।
दीर्घा नागा नगा नद्योऽनन्ताः सप्तार्णवा दिशः ।
अनन्तेनायुषा तेन जीवेम शरदः शतम् ।।
सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानि च ।
अविनाश्यायुषा तद्वज्जीवेम शरदः शतम् ।।

ॐ आयुष्यं व्वर्च्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम् । इदꣳ हिरण्यं व्वर्च्चस्व ज्जैत्रायाविशता दुमाम् ॥

ॐ न तद्रक्षाᳬसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳह्येतत्। यो बिभर्त्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुꣳ स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥

ॐ यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म ऽआबध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासम् ॥

इति दुर्गार्चनपद्धतौ आयुष्यमन्त्रजपः ।

आयुष्यमन्त्रजप -

इसके बाद 'यदायुष्यं चिरं देवाः०' श्लोक से लेकर 'जरदष्टिर्यथासम्' मन्त्र तक आयुष्य मन्त्र का पाठ करें ।

इस प्रकार आयुष्य मन्त्र जप समाप्त ।

नान्दीश्राद्धम्

तत्पश्चात् साङ्कल्पिकेन विधिना [1]नान्दीश्राद्धं कुर्यात् । तद्यथा-पत्रावलिमध्ये प्रादक्षिण्येन चतुर्षु स्थानेषु ऋजून् कुशानास्तीर्य तदुपरि सङ्कल्पपूर्वकं पूजनं कुर्यात् । इदं श्राद्धं [2]सव्येन एव कुर्यात् ।

पादप्रक्षालनम्

ॐ सत्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ

नान्दीश्राद्धप्रयोग -

तत्पश्चात् सांकल्पिक विधि से नान्दीश्राद्ध करे, जो इस प्रकार है-

पूर्व दिशा की ओर विश्वेदेव के आसन-स्थान पर उत्तराग्र कुशा रखे और तीन आसन दक्षिण से पूर्वाग्र क्रम से- मातृ, पितामही और प्रपितामही के निमित्त प्रथम आसन तथा पितृ, पितामह एवं प्रपितामह के लिए द्वितीय आसन और सपत्नीक मातामह, प्रमातामह और वृद्ध-प्रमातामह के लिए तीसरा आसन रखने का विधान है। ये आसन कुछ दूरी पर हों, अर्थात् एक में सटे न हों । उन रखे आसनों पर विश्वेदेव के सहित अपने पूर्वज-पितरों की पूजा करे । जिसका क्रम इस प्रकार है -

पत्तल पर पूर्व से दक्षिण क्रम से सीधे चार कुशाओं को रखकर, उस पर संकल्पपूर्वक पूजन करे। यह श्राद्ध सव्य से ही करे।

---

१. भविष्यपुराणे -

पिण्डनिर्वपणं कुर्यान्न वा कुर्यान्नराधिप ! ।
वृद्धिश्राद्धं महाबाहो ! कुलधर्मानवेक्ष्य हि ॥

२. अनस्मद्वृद्धशब्दानामरूपाणामगोत्रिणाम् ।
अनाम्नामतिलाद्यैश्च नान्दीश्राद्धं च सव्यवत् ॥

भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। ॐ मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। ॐ पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः।

आसनदानम्

ॐसत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः, नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः । ॐ मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः

पादप्रक्षालन - दाहिने हाथ में जल लेकर 'सत्यवसुसंज्ञकाः०' से 'पादप्रक्षालनं वृद्धिः' तक वाक्य पढ़कर विश्वेदेव के पादप्रक्षालन के लिए, उनके आसन पर जल गिरा दे । इसी प्रकार दक्षिण क्रम से 'ॐ मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः०' से लेकर 'ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः-पादप्रक्षालनं वृद्धिः' पर्यन्त पढ़कर मातृ, पितामही और प्रपितामही, पितृ, पितामह तथा प्रपितामह एवं सपत्नीक मातामह, प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह को पादप्रक्षालनार्थ जल देवे।

आसनदान - तदनन्तर 'ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः०' से आरम्भ कर 'तथा प्राप्नुवामः' तक पढ़कर विश्वेदेव के लिए

इमे आसने वो नमो नमः, नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां तथा प्राप्नुवन्त्यो भवन्त्यः तथा प्राप्नुवामः। ॐ पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः, नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां तथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः । ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः, नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां तथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः ।

गन्धादिदानम्

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

कुशरूप आसन दे और 'मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः०' से 'भवन्तः तथा प्राप्नुवामः' तक पढ़कर मातृ-पितामही-प्रपितामही से सपत्नीक मातामह-प्रमातामह एवं वृद्धप्रमातामह के लिए आसन दे ।

गन्धादिदान - पुनः 'ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः' से लेकर ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ

भोजननिष्क्रयदानम्

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्म-ब्राह्मणभोजन-पर्याप्ता-ऽऽमान्न[१]-निष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्म-ब्राह्मण-भोजन-पर्याप्ता-ऽऽमान्न-निष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्म-ब्राह्मण-भोजन-पर्याप्ता-ऽऽमान्न-निष्क्रय-भूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ॐ मातामह-प्रमातामह - वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ

भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः' तक पढ़कर विश्वेदेव से लेकर सपत्नीक मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामह तक के लिए जल, वस्त्र, यज्ञोपवीत, चन्दन (रोली), अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य (पेड़ा, बतासा आदि), ऋतुफल, पान, सुपारी आदि से पूजन करे ।

भोजन-निष्क्रय-दान - इसके बाद 'ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः' से लेकर 'द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः' तक प्रत्येक वाक्य पढ़कर क्रमशः विश्वेदेव सहित सपत्नीक मातामह-प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह को भोजन-निष्क्रय निमित्त दक्षिणा दे ।

---

१. 'नान्दीश्राद्धे अन्नाभावे आमम्, आमाभावे हिरण्यम्, हिरण्याभावे युग्म-ब्राह्मणभोजनपर्याप्ता-ऽमान्न-निष्क्रयीभूत-यथाशक्ति किञ्चिद् द्रव्यदानं दद्यादि'ति धर्मसिन्धौ ।

भूर्भुवः स्वः इदं युग्म-ब्राह्मण-भोजन-पर्याप्ता-ऽऽमान्न-निष्क्रयभूतं द्रव्यममृत-रूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

स-क्षीरयवमुदकदानम्

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम्। पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्।

जला-ऽक्षत-पुष्पप्रदानम्

चतुर्थ-स्थानेषु–शिवा आपः सन्तु, इति जलम्। सौमनस्यमस्तु, इतिपुष्पम्। अक्षतं चाऽरिष्टं चाऽस्तु, इत्यक्षतान्।

जलधारादानम्

ॐ अघोराः पितरः सन्तु। इति पूर्वाग्रां जलधारां दद्यात्। इति सदाचारः।

दूध-सहित यवादि का दान - पुनः दूध, यव, जल एक में मिलाकर दाहिने हाथ में लेकर, 'ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः०' से आरम्भ कर 'सपत्नी नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्' पर्यन्त वाक्य पढ़कर क्रम से विश्वेदेव पूर्वक सपत्नीक मातामह-प्रमातामह एवं वृद्धप्रमातामह के लिए पृथक्-पृथक् दे।

जल-पुष्प-अक्षत प्रदान - फिर 'शिवा आपः सन्तु' से जल, 'सौमनस्यमस्तु' से पुष्प, 'अक्षतं चाऽरिष्टं चाऽस्तु' से अक्षत विश्वेदेव से सपत्नीक मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामह को क्रमशः अलग-अलग चढ़ाये।

आशी:प्रार्थना

ततो यजमानः कृताञ्जलिः प्रार्थयेत् -

ॐ गोत्रन्नो वर्धतां दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहु देयं च नोऽस्तु। अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन। एताः सत्या आशिषः सन्तु।

ब्राह्मणाः - सन्त्वेताः सत्या आशिष इति।

ततो दक्षिणादानम्

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐभूर्भुवः स्वः कृतस्यनान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठा-सिद्ध्यर्थं द्राक्षा-ऽऽमलक-यव-मूल-निष्क्रयिणीं दक्षिणां

जलधारा - तदनन्तर 'अघोराः पितरः सन्तु' वाक्य पढ़कर समस्त पितरों के लिये अँगूठे की ओर से पूर्वाग्र जल की धारा दे। ऐसा शिष्टाचार है।

आशी:प्रार्थना - तत्पश्चात् यजमान विनम्रभाव से हाथ जोड़कर 'ॐ गोत्रन्नो वर्धतां०' से 'मा च याचिष्म कञ्चन' तथा 'एताः सत्या आशिषः सन्तु' तक पढ़कर अपने पूर्वजों से प्रार्थना करे।

ब्राह्मण कह दें - 'सन्त्वेताः सत्या आशिषः' (अर्थात् तुम्हारे कहे हुए वाक्य सत्य हों - यही आशीर्वाद है)।

दक्षिणादान - पुनः 'ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः०' से 'यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे' तक पढ़कर मुनक्का, आँवला, यव और अदरख मूल आदि का एक-एक संकल्प वाक्य द्वारा

दातुमहमुत्सृजे। ॐ [१]मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दी-मुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फल-प्रतिष्ठा-सिद्ध्यर्थं द्राक्षा-ऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे। ॐ मातामह-प्रमातामह-वृद्ध-प्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठा-सिद्ध्यर्थं द्राक्षा-ऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे।

ॐ उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२॥ इयक्षते। ॐ इडामग्ने पुरुदꣳ सꣳ सनिङ्गोः शश्वत्तमꣳ हवमानाय साध। स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्त्वस्मे॥

अनेन नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्, इति यजमानः।

ब्राह्मणाः - सुसम्पन्नम्।

विश्वेदेव पूर्वक मातृ-पितामही-प्रपितामही, पितृ-पितामह-प्रपितामह और सपत्नीक मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामह के लिए प्रदान करे अथवा इन वस्तुओं के अभाव में निष्क्रयभूत दक्षिणा दे।

पश्चात् 'ॐ उपास्मै गायता नरः' से 'सुमतिर्भूत्वस्मे' इन दो मन्त्रों को पढ़कर यजमान कहे - 'अनेन नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्'। ब्राह्मण कहें- 'सुसम्पन्नम्।

१. माता पितामही चैव तथैव प्रपितामही।
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः॥
मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकादयः।
एते भवन्तु सुप्रीताः प्रयच्छन्तु च मङ्गलम्॥

विसर्जनम्

ॐ व्वाजे वाजेऽवत व्वाजिनो नो धनेषु व्विप्प्रा ऽअमृता ऽऋतज्ञाः। अस्य मद्ध्वः पिबत मादयद्ध्वं तृप्प्ता यात पथिभिर्द्देवयानैः ॥

ॐ आ मा व्वाजस्य प्प्रसवो जगम्म्यादेमे द्यावापृथिवी व्विश्वरूपे । आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमो ऽअमृतत्वेन गम्म्यात् ॥

इति मन्त्रेण विसृज्य ।

विश्वेदेवाः प्रीयन्तामिति विसृज्य । यजमानः-मयाऽऽचरिते साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीगणेशप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु-इति वदेत् ।

'अस्तु परिपूर्णः' -इति ब्राह्मणाः वदेयुः ।

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचितायां
दुर्गार्चनपद्धतौ नान्दीश्राद्धं समाप्तम् ।



फिर यजमान - 'ॐ वाजेवाजेऽवत०' से 'ऽअमृतत्वेन गम्यात्' तक दो मन्त्रों तथा 'विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्' से 'परिपूर्णोऽस्तु' तक वाक्य कहे। 'अस्तु परिपूर्णः' ऐसा ब्राह्मण कहें।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत
दुर्गार्चनपद्धति में नान्दीश्राद्ध समाप्त ।



आचार्यादिवरणम्

आंचार्यवरणम्

उदङ्मुखमाचार्यमुपवेश्य, गन्धादिभिः सम्पूज्य, ॐ अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहम् अमुकगोत्रोत्पन्नममुकप्रवरान्वितं शुक्लयजुर्वेदान्तर्गत-वाजसनेयमाध्यन्दिनीयशाखाध्यायिनममुकशर्माणं ब्राह्मण-मस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैः आचार्यत्वेन त्वामहं वृणे। इति यजमानः ।

वृतोऽस्मि, इति ब्राह्मणः।

यजमानः-आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत ! ।।

ब्रह्मवरणम्

अस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैरमुकगोत्र-ममुक-शर्माणं ब्राह्मणं ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे। इति यजमानः। 'वृतोऽस्मि' इति ब्राह्मणः ।

आचार्यवरण - इसके बाद यजमान (कर्ता) आसन पर आचार्य को उत्तर मुँह बैठाकर चन्दन, अक्षत और पुष्प आदि से पूजा करे। तथा दाहिने हाथ में जल, अक्षत एवं देयद्रव्य को लेकर 'ॐ अमुकगोत्रोत्पन्नः०' से 'त्वामहं वृणे' तक संकल्प-वाक्य पढ़कर आचार्य के हाथ में दे दे।

ब्राह्मण - 'वृतोऽस्मि' ऐसा कहे ।

पुनः यजमान 'आचार्यस्तु यथा स्वर्गे' इस प्रार्थना-श्लोक को पढ़े ।

यजमानः -

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम ! ।।

ऋत्विक्वरणम्

अस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैरमुकगोत्र-ममुकशर्माणं ब्राह्मणं ऋत्विक्त्वेन त्वामहं वृणे। इति यजमानः। 'वृतोऽस्मि'- इति विप्रप्रतिवचनम् ।

यजमानः -

भगवन् सर्वधर्मज्ञ ! सर्वधर्मपरायण ! ।
वितते मम यज्ञेऽस्मिन्नृत्विक् त्वं मे मखे भव ।।

ॐ व्व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् । दक्षिणा श्श्रद्धामाप्नोति श्श्रद्धया सत्त्यमाप्प्यते ॥

ब्रह्मावरण - पुनः यजमान हाथ में वरणद्रव्य लेकर 'अस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि०' से 'ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे' तक पढ़कर ब्रह्मवरण के लिए ब्राह्मण के हाथ में दे दे ।

ब्रह्मा कहे - 'वृतोऽस्मि' (अर्थात् मुझे स्वीकार है) ।

पुनः यजमान - 'यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा०' श्लोक पढकर ब्रह्मा की प्रार्थना करे ।

ऋत्विक्वरण - फिर यजमान ऋत्विक्वरण के निमित्त हाथ में जल, अक्षत और वरण-सामग्री लेकर 'अस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि०' से 'ऋत्विक्त्वेन त्वामहं वृणे' तक पढ़कर पाठ करने वाले प्रत्येक ब्राह्मणों के हाथ में दे दे ।

ततो यजमानः करसम्पुटं कृत्वा सर्वान् प्रार्थयेत् ।

प्रार्थना -

अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः ।
ग्रहध्यानरताः नित्यं प्रसन्नमनसः सदा ।।
अदुष्टभाषणाः सन्तु मा सन्तु परनिन्दकाः ।
ममाऽपि नियमा ह्येते भवन्तु भवतामपि ।।
ऋत्विजश्च यथा पूर्वं शक्रादीनां मखेऽभवन् ।
यूयं तथा मे भवत ऋत्विजो द्विजसत्तमाः ।।
अस्मिन् कर्मणि ये विप्राः वृता गुरुमुखादयः ।
सावधानाः प्रकुर्वन्तु स्वं स्वं कर्म यथोदितम् ।।
अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिता मया ।
सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं कर्मेदं विधिपूर्वकम् ।।
यथाविहितं कर्म कुरु (एकतन्त्रपक्षे-कुरुत) ।
विप्रः-यथास्थानं करवाणि (करवामः) ।।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ आचार्यादिवरणम् ।

●

ब्राह्मणगण - 'वृतोऽस्मि' इस प्रकार कहें । फिर यजमान - 'भगवन् सर्वधर्मज्ञ०' श्लोक तथा 'व्रतेन दीक्षामाप्नोति०' से 'सत्यमाप्यते' तक मन्त्र पढ़े ।

तदनन्तर यजमान पुनः दोनों हाथ जोड़कर 'अक्रोधनाः' से 'विधिपूर्वकम्' तथा 'यथाविहितं कर्म कुरु' तक कहे ।

तत्पश्चात् आचार्यादि वृणीत ब्राह्मणगण 'यथाज्ञानं करवाणि' (अर्थात् मैं अपने शास्त्रीय ज्ञानानुसार कार्य करूँगा) - इस प्रकार कहें ।

इस प्रकार दुर्गार्चनपद्धति में आचार्यादिवरण समाप्त ।

दिग्-रक्षणम्

यजमानः (आचार्यो वा) आचम्य, प्राणानायम्य, देशकालौ सङ्कीर्त्य, अस्मिन् दुर्गापूजनकर्मणि दिग्-रक्षणं करिष्ये । यजमानः वामहस्ते पीतसर्षपान् गृहीत्वा, दिग्-रक्षणं कुर्यात् ।

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा ।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ।।
अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभे ।।
भूतानि राक्षसा वाऽपि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन ।
ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु यावत्कर्म करोम्यहम् ।।
इति तिष्ठन् पूर्वादिदिक्षु विकिरेत् । उदकोपस्पर्शः ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ दिग्-रक्षणं समाप्तम् ।

●

दिग्-रक्षण - यजमान अथवा आचार्य आचमन और प्राणायाम कर दाहिने हाथ में जल, अक्षत लेकर 'देशकालौ संकीर्त्य०' से 'दिग्-रक्षणं करिष्ये' तक संकल्प पढ़कर भूमि पर जल छोड़े । तत्पश्चात् यजमान बाँयें हाथ में पीली सरसों लेकर पूर्वादि चारों दिशाओं में 'यदत्र संस्थितं०' से 'यावत्कर्म करोम्यहम्' तक श्लोक पढ़कर पीली सरसों छींटे ।

इस प्रकार दिग्-रक्षण समाप्त ।

●

[1]सर्वतोभद्रमण्डलदेवतास्थापनं पूजनं च

ततः सर्वतोभद्रमण्डलं विरचय्य, तत्र देवतास्थापनं कुङ्कुमादिना पूजनं च कृत्वा, सर्वतोभद्रे कलशस्थापन-विधिना कलशं स्थापयित्वा, कलशोपरि, अग्न्युत्तारणपूर्वक प्रधानप्रतिमां संस्थाप्य, सर्वतोभद्रदेवतास्थापनं कुर्यात् ।

तद्यथा -

ॐ ब्रह्म यज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन ऽआवः। स बुद्ध्न्या ऽउपमा अस्य

सर्वतोभद्रपूजन - एक समकोण चौकी पर एक श्वेत नवीन चौकोर वस्त्र बिछावे, जो चौकी से बड़ा हो । उसको सुतरी से खूब मजबूत चारों पाये में बाँध दे। तत्पश्चात् उस चौकी पर सर्वतोभद्र का निर्माण करे और उसमें ब्रह्मादि देवों का तत्तन्मन्त्रों से आवाहन-स्थापन और कुंकुमादि से पूजन करे । पुनः उस सर्वतोभद्र पर कलश-स्थापन-विधि से कलशस्थापन कर, उस पर अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवी की स्वर्णप्रतिमा स्थापित कर, सविधि उसकी पूजा करे । वह स्थापन, पूजन और अग्न्युत्तारण इस प्रकार है -

---

१. सर्वतोभद्रकारिका -

प्रागुदीच्यां गता रेखाः कुर्यादेकोनविंशतिः ।
खण्डेन्दुस्त्रिपदः श्वेतः पञ्चभिः कृष्णशृङ्खलाः ॥
नीलैकादश वल्ली तु भद्रं रक्तं पदैर्नव ।
चतुर्विंशत्सिता वापी परिधिः पीतविंशतिः ॥
मध्ये षोडशभिः कोष्ठैः रक्तं पद्मं सकर्णिकम् ।
परिध्यावेष्टितं पद्मं बाह्ये सत्त्वं रजस्तमः ॥
तन्मध्ये स्थापयेद्देवान् ब्रह्माद्यांश्च सुरेश्वरान् ॥

व्विष्ठ्ठाः सुतश्च्च योनिमसंतश्च्च व्विवः ॥

(मध्ये कर्णिकायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

ॐ व्वयꣳसोम व्व्रते तव मनस्तनूषु बिब्भ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि ॥

(उत्तरेवाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि ।।२।।

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्प्पतिं धियञ्जिन्न्व-मवसे हूमहे व्वयम् । पूषा नो यथा व्वेद सामसद्-वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥

(ईशान्यां खण्डेन्दौ) ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः, ईशानमावाहयामि स्थापयामि ।।३।।

ॐ त्त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्क्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्त्विन्द्रः ।

सर्वतोभद्रमण्डलदेवता स्थापनक्रम

'ॐ ब्रह्मयज्ञानं०' से 'ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर सर्वतोभद्र के मध्यकर्णिका पर ब्रह्मा का, 'ॐ वयꣳ. सोम व्रते०' से 'सोममावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर उत्तर दिशा की वापी में सोम का, 'ॐ तमीशानं जगतः०' से लेकर 'ईशानमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर ईशान कोण स्थित खण्डेन्दु पर ईशान, 'ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र०' से 'इन्द्र-

(पूर्वे वाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।।४।।

ॐ त्वन्नो ऽअग्ग्ने तव देव पायुभिर्म्मघोनो रक्ष तन्न्वश्च्च व्वन्द्य । त्त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेषꣳ रक्षमाणस्तव व्व्रते ॥

(आग्नेय्यां खण्डेन्दौ) ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।।५।।

ॐ यमाय त्त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्त्रे ॥

(दक्षिणे वाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः, यममावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्च्छ स्तेनस्येत्त्यामन्विहि तस्करस्य । अन्न्यमस्म्मदिच्च्छ सा त ऽइत्त्या नमो देवि निर्ऋते तुब्भ्यमस्तु ॥

(नैर्ऋत्यां खण्डेन्दौ) ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः, निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

मावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पूर्व दिशा की वापी में इन्द्र का, 'ॐ त्वन्नो ऽअग्ने०' से 'अग्निमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर अग्निकोण के खण्डेन्दु में अग्नि का, 'ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते०' से आरम्भ कर 'यममावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त उच्चारण कर दक्षिण वापी में यम का आवाहन एवं स्थापन करे।

इसी तरह - 'असुन्वन्तमयजमानमिच्छ०' से 'निर्ऋतिमावाहयामि

ॐ तत्त्वा यामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्ब्भिः। अहेडमानो व्वरुणेह बोद्ध्युरुशꣳस मा न ऽआयुः प्प्रमोषीः ॥

(पश्चिमे वाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः, वरुणमावाहयामि स्थापयामि ॥८॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरद्ध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम्। व्वायो ऽअस्म्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

(वायव्यां खण्डेन्दौ) ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः, वायुमावाहयामि स्थापयामि ॥९॥

ॐ व्वसुब्भ्यस्त्वा रुद्रेब्भ्यस्त्वाऽऽदित्येब्भ्यस्त्वा सञ्जानाथां द्यावापृथिवी मित्त्रावरुणौ त्वा व्वृष्ट्यावताम्। व्यन्तु व्वयोक्तꣳ रिहाणा मरुतां पृषतीर्गच्छ व्वशा पृश्निर्ब्भूत्वा दिवं गच्छ ततो नो व्वृष्टिमावह। चक्षुष्प्पा ऽअग्ग्नेऽसि चक्षुर्म्मे पाहि ॥

(वायु-सोमयोर्मध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो

स्थापयामि' तक पढ़कर नैर्ऋत्यकोण स्थित खण्डेन्दु पर निर्ऋति का, 'ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा०' से 'वरुणमावाहयामि स्थापयामि' तक उच्चारण कर पश्चिम दिशा की वापी में वरुण का, 'ॐ आ नो नियुद्भिः०' से 'वायुमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर वायव्य दिशास्थित खण्डेन्दु में वायु का, 'ॐ वसुभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यस्त्वा०' से

नमः, अष्टवसून् आवाहयामि स्थापयामि ।।१०।।

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ॥

(सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः एकादशरुद्रेभ्यो नमः, एकादशरुद्रानावाहयामि स्थापयामि ।।११।।

ॐ यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नमादित्यासो भवता मृडयन्तः। आवोऽर्वाची सुमतिर्व्ववृत्त्या-दꣳहोश्चिद्या व्वरिवोवित्तरासत् ॥

(ईशानेन्द्रमध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः द्वादशादित्येभ्यो नमः, द्वादशादित्यानावाहयामि स्थापयामि ।।१२।।

ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वती व्वीर्य्यम् । व्वाचेन्द्रो बलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम् ॥

(इन्द्राग्निमध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः, अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ।।१३।।

ॐ विश्वेदेवास आगत शृणुता म इमꣳ हवम् ।

'अष्टवसून् आवाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर वायुकोण और उत्तर दिशा के मध्य रक्तभद्र में अष्टवसुका, 'ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव'- 'एकादशरुद्रानावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर उत्तर और ईशान के मध्य (रक्तवर्ण) भद्र में एकादश रुद्रों का, 'ॐ यज्ञो देवानां०' - 'द्वादशादित्यानावाहयामि स्थापयामि' से ईशानकोण एवं पूर्वदिशा के मध्य भद्र में द्वादशादित्यों का, 'ॐ अश्विना तेजसा०' - 'अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पूर्व और अग्निकोण के मध्य

एदं बर्हिर्न्निषीदत । उपयामगृहीतोऽसि विश्श्वैब्भ्यस्त्वा देवेब्भ्य ऽएष ते योनिर्व्विश्श्वैब्भ्य-स्त्वा देवेब्भ्यः ॥

(अग्नि-यममध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः स-पैतृक-विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, स-पैतृकविश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि ।।१४।।

ॐ अभित्त्यं देवꣳ सवितारमोण्योः कविक्क्रतु-मर्च्चामि सत्त्यसवꣳ रत्नधामभि प्प्रियं मतिं कविम् । ऊद्ध्वा यस्याऽमतिर्भा ऽअदिद्युतत्सवी-मनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्क्रतुः कृपा स्वः । प्रजाब्भ्यस्त्वा प्प्रजास्त्वाऽनुप्प्राणन्तु प्रजास्त्वमनुप्प्राणिहि ॥

(यम-निर्ऋतिमध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तयक्षेभ्यो नमः, सप्तयक्षानावाहयामि स्थापयामि ।।१५।।

ॐ नमोऽस्तु सर्प्पेब्भ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेब्भ्यः सर्प्पेब्भ्यो नमः ॥

(निर्ऋति-वरुणमध्ये भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टकुल-

रक्त वर्ण के भद्र में अश्विनी का, 'ॐ विश्वेदेवास ऽआगत०' - 'स-पैतृकविश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर अग्निकोण एवं (यम) दक्षिण दिशा के बीच रक्तवर्ण स्थित भद्र में स-पैतृक विश्वेदेव, 'ॐ अभित्त्यं देवꣳ. सवितारमोण्यो०' से लेकर 'सप्तयक्षान् आवाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त उच्चारण कर दक्षिण और नैर्ऋत्यकोण के मध्य रक्त भद्र पर सप्त यक्षों का, 'ॐ नमोऽस्तु

नागेभ्यो नमः, अष्टकुलनागानावाहयामि स्थापयामि ।।१६।।

ॐ ऋताषाड् ऋतधामाग्निर्गन्धर्व्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम । स न इदं ब्रह्म क्षत्त्रं पातु तस्मै स्वाहा व्वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥

(वरुण-वायुमध्ये-भद्रे) ॐ भूर्भुवः स्वः गन्धर्वाऽप्सरोभ्यो नमः, गन्धर्वाऽप्सरसः आवाहयामि स्थापयामि ।।१७।।

ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान ऽउद्यन्त्समुद्राद्रुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू ऽउपस्तुत्त्यं महि जातं ते ऽअर्व्वन् ॥

(ब्रह्म-सोममध्ये वाप्यां लिङ्गे वा) ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि ।।१८।।

ॐ आशुः शिशानो व्वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् । सङ्क्रन्दनोऽनिमिष ऽएक-

---

सर्पेभ्यो ये के च०' से 'अष्टकुलनागानावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर नैर्ऋत्यकोण तथा वरुण (पश्चिम) दिशा स्थित भद्र पर अष्टकुलनागों का, 'ॐ ऋताषाड् ऋतधामाग्नि०' से 'गन्धर्वाऽप्सरसः आवाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर वरुण (पश्चिम) और वायुकोण स्थित रक्तभद्र में गन्धर्वाप्सरस् का आवाहन और स्थापन करे ।

इसी प्रकार 'ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान०' मन्त्र से 'स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि' वाक्य पर्यन्त पढ़कर ब्रह्मा तथा उत्तर दिशा के मध्य स्थित वापी में स्कन्द, 'ॐ आशुः शिशानो०' से

वी॒रꣳ श॒तꣳ सेना ऽअजयत्त्सा॒कमिन्द्रः॑ ॥

(तदुत्तरे) ॐ भूर्भुवः स्वः वृषभाय नमः, वृषभमावाहयामि स्थापयामि ॥१९॥

ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य॒ त्वाक्षित्त्या ऽउन्नया॒मि। समापो ऽअ॒द्भिरग्मत॒ समोषधीभि॒रोषधीः ॥

(तदुत्तरे) ॐ भूर्भुवः स्वः शूलाय नमः, शूलमावाहयामि स्थापयामि ॥२०॥

(अनेनैव मन्त्रेण) तदुत्तरे ॐ भूर्भुवः स्वः महाकालाय नमः, महाकालमावाहयामि स्थापयामि ॥२१॥

ॐ शु॒क्रज्ज्योतिश्च॒ चि॒त्रज्ज्योतिश्च॒ स॒त्यज्ज्योतिश्च॒ ज्ज्योतिष्मांश्च॒। शु॒क्रश्च॒ ऽऋत॒पाश्चात्यꣳहाः ॥

(ब्रह्मेशानमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः दक्षादिसप्तगणेभ्यो नमः, दक्षादि-सप्तगणानावाहयामि स्थापयामि ॥२२॥

लेकर 'वृषभमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर वहीं पर, उसके आगे वृषभ का, 'ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य०' मन्त्र से 'ॐ भू० शूलाय नमः, शूलमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर, उसके आगे शूल का, पुनः यही मन्त्र और 'ॐ भू० महाकालाय नमः, महाकालमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर उसके उत्तर तरफ महाकाल, 'ॐ शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च०' से 'दक्षादि-सप्तगणा-

ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ।

(ब्रह्मेन्द्रमध्ये वाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः, दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ॥२३॥

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाᳬंसुरे स्वाहा ।

(तत्पूर्वे) ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ॥२४॥

ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्षन्पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥

(ब्रह्माग्निमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि स्थापयामि ॥२५॥

ॐ परं मृत्यो ऽअनु परेहि पन्थां यस्ते ऽअन्य

नावाहयामि स्थापयामि' कहकर ब्रह्मा और ईशानकोण के मध्य कृष्ण शृंखला पर दक्षादि-सप्तगण; 'ॐ अम्बेऽम्बिके०' मन्त्र और 'दुर्गामावाहयामि स्थापयामि' उच्चारण कर ब्रह्मा तथा इन्द्र के मध्य स्थित वापी पर दुर्गा का आवाहन और स्थापन करना चाहिए।

इसके बाद 'ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे०' तथा 'ॐ भू० विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि' कहकर, वहीं पर, उसके आगे विष्णु, 'ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः०' से '-स्वधामावाहयामि

ऽइतरो देवयानात् । चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजाꣳ रीरिषो मोत व्वीरान् ॥

(ब्रह्म-यममध्ये वाप्याम्) ॐ मृत्युरोगेभ्यो नमः, मृत्युरोगान् आवाहयामि स्थापयामि ।।२६।।

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्प्रियाणा-न्त्वा प्प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्ब्भधमा त्वमजासि गर्ब्भधम् ॥

(ब्रह्मनिर्ऋतिमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।२७।।

ॐ अप्स्वग्ग्ने सधिष्ट्टव सौषधीरनु रुध्यसे । गर्ब्भे सञ्जायसे पुनः ॥

(ब्रह्म-वरुणमध्ये वाप्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः, अपः आवाहयामि स्थापयामि ।।२८।।

ॐ मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो व्विमहसः ।

स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर ब्रह्मा और अग्निकोण के मध्य कृष्ण शृंखला में स्वधा, 'ॐ परं मृत्यो ऽअनु परेहि०' से 'मृत्युरोगानावाहयामि स्थापयामि' तक उच्चारण कर ब्रह्मा और दक्षिण दिशा के मध्यवापी पर मृत्युरोग, 'ॐ गणानान्त्वा०' से लेकर 'गणपतिमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ब्रह्मा एवं नैर्ऋत्य कोण के मध्य शृंखला में गणपति, 'ॐ अप्स्वग्ने सधिष्ट्टव०' से '-अपः आवाहयामि स्थापयामि' तक बोल कर ब्रह्मा और पश्चिम

स सुगोपातमो जनः ॥

(ब्रह्म-वायुमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः मरुद्भ्यो नमः, मरुतः आवाहयामि स्थापयामि ॥२९॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥

(ब्रह्मणः पादमूले) ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः, पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि ॥३०॥

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥

(तदुत्तरे) ॐ भूर्भुवः स्वः गङ्गादिनदीभ्यो नमः, गङ्गादिनदीः आवाहयामि स्थापयामि ॥३१॥

ॐ समुद्रोऽसि नभस्वानार्द्रदानुः शम्भूर्म्मयोभूरभि मा व्वाहि स्वाहा । मारुतोऽसि मरुतां गणः शम्भूर्म्मयोभूरभि मा व्वाहि स्वाहा । अवस्यूरसि

दिशा के मध्य स्थित वापी पर अप्, 'ॐ मरुतो यस्य०' से 'मरुतः आवाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ब्रह्मा और वायुकोण के बीच शृंखला पर मरुत् देवता का आवाहन करे ।

इसी प्रकार 'ॐ स्योना पृथिवि नो०' मन्त्र तथा 'ॐ भू० पृथिव्यै नमः, पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि' वाक्य का उच्चारण कर ब्रह्मा के पाद मूल स्थित कर्णिका के नीचे पृथ्वी का, 'ॐ पञ्च नद्यः० सरस्वतीमपियन्ति०' - 'ॐ भू० गङ्गादिनदीभ्यो नमः, गङ्गादिनदीः आवाहयामि स्थापयामि' से ब्रह्मा के पादमूल स्थित कर्णिका

दुर्वस्वाञ्छम्भूर्म्मयोभूरभि मां व्वाहि स्वाहा ॥

(तदुत्तरे) ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तसागरेभ्यो नमः, सप्तसागरान् आवाहयामि स्थापयामि ।।३२।।

ॐ प्र पर्व्वतस्य व्वृषभस्य पृष्ठान्नावश्चरन्ति स्वसि च ऽइयानाः । ता ऽआववृत्रन्नधरागुदक्ता अहिम्बुध्न्यमनु रीयमाणाः । व्विष्णोर्व्विक्क्रमणमसि व्विष्णोर्व्विक्क्रान्तमसि व्विष्णोः क्क्रान्तमसि ॥

(कर्णिकापरिधौ) ॐ भूर्भुवः स्वः मेरवे नमः, मेरुमावाहयामि स्थापयामि ।।३३।।

ततः सोमादिक्रमेण –

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्ब्भधमा त्त्वमजासि गर्ब्भधम् ॥

(सत्त्वबाह्यपरिधौ) ॐ भूर्भुवः स्वः गदायै नमः, गदामावाहयामि स्थापयामि ।।३४।।

के आगे गंगा आदि नदियों, 'ॐ समुद्रोऽसि नभस्वानार्द्रदानुः०' से '-सप्तसागरानावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर वहीं पर, ब्रह्मा के पाद मूल स्थित कर्णिका के उत्तर भाग में सप्त सागरों और 'ॐ प्र पर्वतस्य वृषभस्य०' से लेकर 'ॐ भू० मेरवे नमः, मेरुमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर कर्णिका-स्थित परिधि के ऊपर मेरु का आवाहन एवं स्थापन करे ।

ॐ त्रि॒ꣳ॒शद्धाम॒ व्विराजति॒ व्वाक्क् पतङ्गाय धीयते। प्रति॒ वस्तो॒रह॒ द्युभिः ॥

(ईशान्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः त्रिशूलाय नमः, त्रिशूलमावाहयामि स्थापयामि ॥३५॥

ॐ म॒हाँ२॥ इन्द्रो॒ व्वज्रहस्तः षोड॒शी शर्म्म यच्छतु । हन्तु पा॒प्मानं॒ य्योऽस्मान्द्वेष्टि । उ॒प॒या॒म-गृहीतोऽसि महे॒न्द्राय त्वैषते॒ योनिर्म्महे॒न्द्राय त्वा ॥

(पूर्वे) ॐ भूर्भुवः स्वः वज्राय नमः, वज्रमावाहयामि स्थापयामि ॥३६॥

ॐ व्वसु च मे व्वस॒तिश्च मे॒ कर्म्म च मे॒ शक्तिश्च मेऽर्थश्च म॒ एमश्च म ऽइत्या च मे॒ गतिश्च मे य॒ज्ञेन कल्पन्ताम् ।

(आग्नेय्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः शक्तये नमः, शक्तिमावाहयामि स्थापयामि ॥३७॥

तत्पश्चात् सर्वतोभद्रमण्डलस्थित सत्त्वपरिधि के बाहर उत्तर आदि दिशाओं के क्रम से आयुधों का आवाहन और स्थापन करे । जैसे-'ॐ गणानान्त्वा०' मन्त्र तथा 'ॐ भू० गदायै नमः, गदामावाहयामि स्थापयामि' से उत्तर दिशा में गदा, 'ॐ त्रिꣳशद्धाम विराजति०' से 'भू० त्रिशूलाय नमः, त्रिशूलमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ईशान कोण में त्रिशूल, 'ॐ महाँ२॥ इन्द्रो वज्र-हस्तः०' से 'ॐ भू० वज्राय नमः, वज्रमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पूर्वदिशा में वज्र, 'ॐ वसु च मे वसतिश्च मे०' से 'ॐ

ॐ इड ऽएह्यदित ऽएहि काम्म्या ऽएत। मयि वः कामधरणं भूयात् ॥

(दक्षिणे) ॐ भूर्भुवः स्वः दण्डाय नमः, दण्डमावाहयामि स्थापयामि ।।३८।।

ॐ खड्गो व्वैश्श्वदेवः श्श्वा कृष्णः कर्णो गर्द्दभस्तरक्षुस्ते रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिꣳहो मारुतः कृकलासः पिप्प्पका शकुनिस्ते शरव्व्यायै व्विश्श्वेषां देवानां पृषतः ॥

(नैर्ऋत्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः खड्गाय नमः, खड्गमावाहयामि स्थापयामि ।।३९।।

ॐ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्स्मदवाधमं व्वि मध्ध्यमꣳ श्रथाय । अथा व्वयमादित्य व्व्रते तवानागसो ऽअदितये स्याम ।

(पश्चिमे) ॐ भूर्भुवः स्वः पाशाय नमः, पाशमावाहयामि स्थापयामि ।।४०।।

भू० शक्तये नमः, शक्तिमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त कहकर अग्निकोण में शक्ति, 'ॐ इड ऽएह्यदित ऽएहि०' से 'ॐ भू० दण्डाय नमः, दण्डमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर दक्षिण दिशा में दण्ड, 'ॐ खड्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः०'-'ॐ भू० खड्गाय नमः, खड्गमावाहयामि स्थापयामि' से नैर्ऋत्यकोण में खड्ग, 'ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं०' से 'ॐ पाशाय नमः, पाशमा-

ॐ अ॒ꣳशुश्च॑ मे र॒श्मिश्च॒ मेऽदा॑भ्यश्च॒ मेऽधि॑पतिश्च म ऽउपा॒ꣳशुश्च॑ मेऽन्तर्या॒मश्च॑ म ऽऐन्द्रवाय॒वश्च॑ मे मैत्रावरु॒णश्च॑ म ऽआश्वि॒नश्च॑ मे प्रतिप्र॒स्थान॑श्च मे शु॒क्रश्च॑ मे म॒न्थी च॑ मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम् ॥

(वायव्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः अङ्कुशाय नमः, अङ्कुशमावाहयामि स्थापयामि ।।४१।।

ॐ आयं गौः पृश्निरक्रमी॒दस॑दन्मा॒तरं॑ पु॒रः । पि॒तरं॑ च प्र॒यन्त्स्वः॑ ॥

(तद्बाह्ये उत्तरे रक्तपरिधौ सोमादिक्रमेण) ॐ भूर्भुवः स्वः गौतमाय नमः, गौतममावाहयामि स्थापयामि ।।४२।।

ॐ अ॒यं दक्षि॒णा वि॒श्वक॑र्मा तस्य॒ मनो॑ वैश्वकर्म॒णं ग्री॒ष्मो मा॑न॒सस्त्रि॒ष्टुब्ग्रै॒ष्मी त्रि॒ष्टुभः॑ स्वा॒रꣳस्वा॒राद॑न्तर्या॒मो॒ऽन्तर्या॒मात्प॑ञ्चद॒शः प॑ञ्च-

---

वाहयामि स्थापयामि' तक कहकर पश्चिम में पाश, 'ॐ अꣳशुश्च मे रश्मिश्च०'-'ॐ भू० अङ्कुशाय नमः, अङ्कुशमावाहयामि स्थापयामि' से वायव्यकोण में अंकुश का आवाहन और स्थापन करे।

पुनः सर्वतोभद्रमण्डल के बाहर उत्तर में रक्तवर्णवाली परिधि पर गौतमादि ऋषियों का आवाहन एवं स्थापन इस प्रकार करे - 'ॐ आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं०' से 'ॐ भू० गौतमाय नमः, गौतममावाहयामि स्थापयामि' तक उच्चारण कर उत्तर में गौतम,

द्द्शाद् बृहद्भरद्वाज ऽऋषिः प्प्रजापतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाब्भ्यः ॥

(ईशान्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः भरद्वाजाय नमः, भरद्वाजमावाहयामि स्थापयामि ।।४३।।

ॐ इदमुत्तरात्स्वस्तस्य श्श्रोत्रꣳ सौवꣳ शरच्छ्रौत्र्यनुष्टुप् शारद्यनुष्टुभ ऽऐडमैडान्मन्थी मन्थिन ऽएकविꣳशादेकविꣳशाद्वैराजं व्विश्वामित्र ऽऋषिः प्रजापति-गृहीतया त्वया श्श्रोत्रं गृह्णामि प्प्रजाब्भ्यः ॥

(पूर्वे) ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वामित्राय नमः, विश्वामित्र-मावाहयामि स्थापयामि ।।४४।।

ॐ त्र्यायुषं ज्जमदग्ग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥

(आग्नेय्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः कश्यपाय नमः, कश्यपमावाहयामि स्थापयामि ।।४५।।

ॐ अयं पश्च्चाद्विश्श्वव्यचास्तस्य चक्षुर्व्वैश्श्व-

'ॐ अयं दक्षिणा विश्वकर्मा०' से 'ॐ भू० भरद्वाजाय नमः, भरद्वाजमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ईशान कोण में भरद्वाज, 'ॐ इदमुत्तरात्स्वस्तस्य०' - 'ॐ भू० विश्वामित्राय नमः, विश्वामित्र-मावाहयामि स्थापयामि' से पूर्वदिशा में विश्वामित्र, 'ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः०' से '-ॐ भू० कश्यपाय नमः, कश्यपमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर अग्निकोण में कश्यप, 'ॐ अयं पश्चाद्

व्वयचसं व्वर्षाश्श्राक्षुष्ष्यो जगती व्वार्षी जगत्त्या ऽऋक्क्स्समृक्क्स्समाच्छुक्रः शुक्रात्सप्प्तदशः सप्प्तदशाद् वैरूपं ज्जमदग्निर्ऋर्षिः प्प्रजापतिगृहीतया त्वया चक्षुर्ग्गृह्णामि प्प्रजाब्भ्यः ॥

(दक्षिणे) ॐ भूर्भुवः स्वः जमदग्नये नमः, जमदग्निमावाहयामि स्थापयामि ॥४६॥

ॐ अयं पुरो भुवस्तस्य प्प्राणो भौवायनो व्वसन्तः प्प्राणाय नो गायत्त्री व्वासन्ती गायत्त्र्यै गायत्रं गायत्त्रादुपाꣳशुरुपाꣳशोस्त्रिवृत्त्रिवृतो रथन्तरं व्वसिष्ठ ऽऋषिः प्प्रजापतिगृहीतया त्वया प्प्राणं गृह्णामि प्प्रजाब्भ्यः ॥

(नैर्ऋत्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः वसिष्ठाय नमः, वसिष्ठमावाहयामि स्थापयामि ॥४७॥

ॐ अत्र पितरो मादयद्ध्वं य्यथाभागमावृषायद्ध्वम् । अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायिषत ॥

(पश्चिमे) ॐ भूर्भुवः स्वः अत्रये नमः, अत्रिमावाहयामि स्थापयामि ॥४८॥

विश्वव्यचास्तस्य०' - 'ॐ भू० जमदग्नये नमः, जमदग्निमावाहयामि स्थापयामि' से दक्षिण में जमदग्नि, 'ॐ अयं पुरो भुवस्तस्य प्राणो०' - 'ॐ भू० वसिष्ठाय नमः, वसिष्ठमावाहयामि स्थापयामि' से नैर्ऋत्यकोण में वसिष्ठ, 'ॐ अत्र पितरो मादयद्ध्वं०' से 'ॐ

ॐ तं पत्नीभि॒रनु॒गच्छेम देवाः पु॒त्रैर्भ्रातृ॒भिरु॒त वा॒ हिर॑ण्यैः। नाकं॑ गृभ्णा॒नाः सु॑कृ॒तस्य॑ लो॒के तृ॒तीये॑ पृ॒ष्ठे ऽअधि॑रोच॒ने दि॒वः ॥

(वायव्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः अरुन्धत्यै नमः, अरुन्धतीमावाहयामि स्थापयामि ।।४९।।

ॐ अ॒दि॑त्त्यै॒ रास्नासीन्द्रा॒ण्ण्या ऽउ॒ष्णीषः॑। पू॒षासि॑ घ॒र्म्माय॑ दीष्ष्व ॥

(पूर्वे) ॐ भूर्भुवः स्वः ऐन्द्र्यै नमः, ऐन्द्रीमावाहयामि स्थापयामि ।।५०।।

ॐ अम्बे॒ ऽअम्बि॒केऽम्बालि॒के न मा नयति॒ कश्च॒न । सस॑स्त्यश्व॒कः सुभ॑द्रिकाङ्काम्पीलवा॒सिनी॑म् ॥

(आग्नेय्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः कौमार्य्यै नमः, कौमारीमावाहयामि स्थापयामि ।।५१।।

भू० अत्रये नमः, अत्रिमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त पढ़कर पश्चिम में अत्रि और 'ॐ तं पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः०' से लेकर 'ॐ भू० अरुन्धत्यै नमः, अरुन्धतीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर वायव्यकोण में अरुन्धती का आवाहन एवं स्थापन करे ।

तदनन्तर, उसके बाहर तृतीय कृष्ण परिधि पर, पूर्व आदि दिशा के क्रम से ऐन्द्र्यादि देवियों का आवाहन और स्थापन करे । जैसे- 'ॐ अदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः०' से 'ॐ भू० ऐन्द्र्यै नमः, ऐन्द्रीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पूर्व में ऐन्द्री, 'ॐ अम्बे-ऽअम्बिके०'-'ॐ भू० कौमार्यै नमः, कौमारीमावाहयामि स्थापयामि'

ॐ इन्द्रायाहि धियेषितो विप्प्रजूतः सुतावतः। उप ब्ब्रह्माणि व्वाग्घतः ॥

(दक्षिणे) ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्म्यै नमः, ब्राह्मीमावाहयामि स्थापयामि ।।५२।।

ॐ इन्द्रस्य क्क्रोडो ऽअदित्यै पाजस्यन्दिशां जत्रवोऽदित्यै भसज्जीमूतान्हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभऽउदर्य्येण चक्कवाकौ मतस्नाब्भ्यां दिवं व्वृक्काब्भ्यां गिरीन्प्लाशिभिरुपलान्प्लीह्ना व्वल्मीकान्क्लोमभिर्ग्लौभिर्गुल्मान्हिराभिः स्रवन्तीर्हृदान्कुक्षिब्भ्याᳬं समुद्रमुदरेण व्वैश्वानरं भस्मना ॥

(नैर्ऋत्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः वाराह्यै नमः, वाराहीमावाहयामि स्थापयामि ।।५३।।

ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ॥

(पश्चिमे) ॐ भूर्भुवः स्वः चामुण्डायै नमः, चामुण्डा-

तक कहकर अग्निकोण में कौमारी, 'ॐ इन्द्रायाहि धियेषितो०' मन्त्र और 'ॐ भू० ब्राह्म्यै नमः, ब्राह्मीमावाहयामि स्थापयामि' वाक्य का उच्चारण कर दक्षिण में ब्राह्मी, 'ॐ इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै०' से 'ॐ भू० वाराह्यै नमः, वाराहीमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर नैर्ऋत्यकोण में वाराही, 'ॐ अम्बे ऽअम्बिके-

मावाहयामि स्थापयामि ।।५४।।

ॐ आप्प्यायस्व समेतु ते व्विश्वतः सोम व्वृष्ण्यम् । भवा व्वाजस्य सङ्गथे ॥

(वायव्ये) ॐ भूर्भुवः स्वः वैष्णव्यै नमः, वैष्णवीमावाहयामि स्थापयामि ।।५५।।

ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी । तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि॥

(उत्तरे) ॐ भूर्भुवः स्वः माहेश्वर्यै नमः, माहेश्वरीमावाहयामि स्थापयामि ।।५६।।

ॐ समख्ख्ये देव्व्या धिया सन्दक्षिणयोरुचक्षसा । मा म ऽआयुः प्प्रमोषीर्म्मो ऽअहं तव व्वीरं व्विदेय तव देवि सन्दृशि ॥

(ईशान्याम्) ॐ भूर्भुवः स्वः वैनायक्यै नमः, वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि ।।५७।।

ऽम्बालिके०' से 'ॐ भू० चामुण्डायै नमः, चामुण्डामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर पश्चिम दिशा में चामुण्डा का, 'ॐ आप्यायस्व समेतु ते०'- 'ॐ भू० वैष्णव्यै नमः, वैष्णवीमावाहयामि स्थापयामि' से वायव्यकोण में वैष्णवी, 'ॐ या ते रुद शिवा०' से 'ॐ माहेश्वर्यै नमः, माहेश्वरीमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त मन्त्र वाक्य का उच्चारण कर उत्तर में माहेश्वरी तथा 'ॐ समख्ये देव्या धिया०' से लेकर 'ॐ भू० वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ईशान कोण में वैनायकी का आवाहन और स्थापन करे ।

प्रतिष्ठा सर्वदेवानां मित्रावरुणनिर्मिता ।
प्रतिष्ठां ते करोम्यत्र मण्डले दैवतैः सह ।।
'ब्रह्माद्यावाहितदेवाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत' इति प्रतिष्ठाप्य, 'ब्रह्मादिदेवेभ्यो नमः' इति यथालब्धोपचारैः सम्पूजयेत् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ सर्वतोभद्रमण्डलदेवतास्थापनम् ।

●

केवलं नामाऽनुक्रमेण सर्वतोभद्रदेवतास्थापनम्

१. (मध्ये कर्णिकायाम्) ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।
२. (उत्तरे वाप्याम्) ॐ भू० सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि ।

इस प्रकार आवाहन कर 'प्रतिष्ठा सर्वदेवानां०' से वरदा भवत' तक पढ़कर प्रतिष्ठा तथा 'ब्रह्मादिदेवेभ्यो नमः' से पूजन करे ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत
'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्यासहित दुर्गार्चनपद्धति
में सर्वतोभद्रदेवतास्थापन समाप्त ।

●

इस नामानुक्रम सर्वतोभद्रमण्डल (मध्ये कर्णिकायाम्) 'ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि' से आरम्भ

३. (ईशान्यां खण्डेन्दौ) ॐ भू० ईशानाय नमः, ईशानमावाहयामि स्थापयामि ।

४. (पूर्वे वाप्याम्) ॐ भू० इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।

५. (आग्नेय्यां खण्डेन्दौ) ॐ भू० अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।

६. (दक्षिणे वाप्याम्) ॐ भू० यमाय नमः, यममावाहयामि स्थापयामि ।

७. (नैर्ऋत्यां खण्डेन्दौ) ॐ भू० निर्ऋतये नमः, निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि ।

८. (पश्चिमे वाप्याम्) ॐ भू० वरुणाय नमः, वरुणमावाहयामि स्थापयामि ।

९. (वायव्यां खण्डेन्दौ) ॐ भू० वायवे नमः, वायुमावाहयामि स्थापयामि ।

१०. (वायु-सोमयोर्मध्ये भद्रे) ॐ भू० अष्टवसुभ्यो नमः, अष्टवसून् आवाहयामि स्थापयामि ।

११. (सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे) ॐ भू० एकादशरुद्रेभ्यो नमः, एकादशरुद्रानावाहयामि स्थापयामि ।

१२. (ईशानेन्द्रमध्ये भद्रे) ॐ भू० द्वादशादित्येभ्यो नमः, द्वादशादित्यानावाहयामि स्थापयामि ।

१३. (इन्द्राग्निमध्ये भद्रे) ॐ भू० अश्विभ्यां नमः, अश्विनी आवाहयामि स्थापयामि ।

१४. (अग्नि-यममध्ये भद्रे) ॐ भू० स-पैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, स-पैतृकविश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि ।

१५. (यम-निर्ऋतिमध्ये भद्रे) ॐ भू० सप्तयक्षेभ्यो नमः, सप्तयक्षानावाहयामि स्थापयामि ।

१६. (निर्ऋति-वरुणमध्ये भद्रे) ॐ भू० अष्टकुल-नागेभ्यो नमः, अष्टकुलनागानावाहयामि स्थापयामि ।

१७. (वरुण-वायुमध्ये भद्रे) ॐ भू० गन्धर्वा-ऽप्सरोभ्यो नमः, गन्धर्वाऽप्सरसः आवाहयामि स्थापयामि ।

१८. (ब्रह्म-सोममध्ये वाप्यां लिंगे वा) ॐ भू० स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि ।

१९. (तत्रैव स्कन्दोत्तरतः) ॐ भू० वृषभाय नमः, वृषभमावाहयामि स्थापयामि ।

२०. (तदुत्तरे) ॐ भू० शूलाय नमः, शूलमावाहयामि स्थापयामि ।

२१. (अनेनैव मन्त्रेण तदुत्तरे) ॐ भू० महाकालाय नमः, महाकालमावाहयामि स्थापयामि ।

२२. (ब्रह्मेशानमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भू० दक्षादि-सप्तगणेभ्यो नमः, दक्षादि-सप्तगणानावाहयामि स्थापयामि ।

२३. (ब्रह्मेन्द्रमध्ये वाप्याम्) ॐ भू० दुर्गायै नमः, दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।

२४. (तत्पूर्वे) ॐ भू० विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ।

२५. (ब्रह्माग्निमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भू० स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि स्थापयामि ।

२६. (ब्रह्म-यममध्ये वाप्याम्) ॐ भू० मृत्युरोगेभ्यो नमः, मृत्युरोगानावाहयामि स्थापयामि ।

२७. (ब्रह्म-निर्ऋतिमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भू० गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।

२८. (ब्रह्म-वरुणमध्ये वाप्याम्) ॐ भू० अद्भ्यो नमः, अपः आवाहयामि स्थापयामि ।

२९. (ब्रह्म-वायुमध्ये शृङ्खलायाम्) ॐ भू० मरुद्भ्यो नमः, मरुतः आवाहयामि स्थापयामि ।

३०. (ब्रह्मणः पादमूले) ॐ भू० पृथिव्यै नमः, पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि ।

३१. (तदुत्तरे) ॐ भू० गङ्गादिनदीभ्यो नमः, गङ्गादिनदीः आवाहयामि स्थापयामि ।

३२. (तदुत्तरे) ॐ भू० सप्तसागरेभ्यो नमः, सप्तसागरानावाहयामि स्थापयामि ।

३३. (कर्णिकापरिधौ) ॐ भू० मेरवे नमः, मेरुमावाहयामि स्थापयामि ।

३४. (ततः सत्त्वबाह्यपरिधौ सोमादिक्रमेण) ॐ भू० गदाय नमः, गदामावाहयामि स्थापयामि ।

३५. (ईशान्याम्) ॐ भू० त्रिशूलाय नमः, त्रिशूलमावाहयामि स्थापयामि ।
३६. (पूर्वे) ॐ भू० वज्राय नमः, वज्रमावाहयामि स्थापयामि ।
३७. (आग्नेय्याम्) ॐ भू० शक्तये नमः, शक्तिमावाहयामि स्थापयामि ।
३८. (दक्षिणे) ॐ भू० दण्डाय नमः, दण्डमावाहयामि स्थापयामि ।
३९. (नैर्ऋत्याम्) ॐ भू० खड्गाय नमः, खड्गमावाहयामि स्थापयामि ।
४०. (पश्चिमे) ॐ भू० पाशाय नमः, पाशमावाहयामि स्थापयामि ।
४१. (वायव्याम्) ॐ भू० अङ्कुशाय नमः, अङ्कुशमावाहयामि स्थापयामि ।
४२. (तद्बाह्ये उत्तरे रक्तपरिधौ सोमादिक्रमेण) ॐ भू० गौतमाय नमः, गौतममावाहयामि स्थापयामि ।
४३. (ईशान्याम्) ॐ भू० भरद्वाजाय नमः, भरद्वाजमावाहयामि स्थापयामि ।
४४. (पूर्वे) ॐ भू० विश्वामित्राय नमः, विश्वामित्रमावाहयामि स्थापयामि ।
४५. (आग्नेय्याम्) ॐ भू० कश्यपाय नमः, कश्यपमावाहयामि स्थापयामि ।

४६. (दक्षिणे) ॐ भू० जमदग्नये नमः, जमदग्नि-मावाहयामि स्थापयामि ।

४७. (नैर्ऋत्याम्) ॐ भू० वसिष्ठाय नमः, वसिष्ठ-मावाहयामि स्थापयामि ।

४८. (पश्चिमे) ॐ भू० अत्रये नमः, अत्रिमावाहयामि स्थापयामि ।

४९. (वायव्याम्) ॐ भू० अरुन्धत्यै नमः, अरुन्धती-मावाहयामि स्थापयामि ।

(तद्बाह्ये कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण)

५०. (पूर्वे) ॐ भू० ऐन्द्र्यै नमः, ऐन्द्रीमावाहयामि स्थापयामि ।

५१. (आग्नेय्याम्) ॐ भू० कौमार्य्यै नमः, कौमारी-मावाहयामि स्थापयामि ।

५२. (दक्षिणे) ॐ भू० ब्राह्म्यै नमः, ब्राह्मीमावाहयामि स्थापयामि ।

५३. (नैर्ऋत्याम्) ॐ भू० वाराह्यै नमः, वाराही-मावाहयामि स्थापयामि ।

५४. (पश्चिमे) ॐ भू० चामुण्डायै नमः, चामुण्डा-मावाहयामि स्थापयामि ।

५५. (वायव्ये) ॐ भू० वैष्णव्यै नमः, वैष्णवी-मावाहयामि स्थापयामि ।

५६. (उत्तरे) ॐ भू० माहेश्वर्यै नमः, माहेश्वरी-मावाहयामि स्थापयामि ।

५७. (ईशान्याम्) ॐ भू० वैनायक्यै नमः, वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ नामानुक्रमेण सर्वतोभद्र-मण्डल-देवता-स्थापनं समाप्तम् ।

प्रधानकलशस्थापनम्

तत्र (सर्वतोभद्रमण्डले) मध्ये –

ॐ म॒ही द्यौः पृ॒थि॒वी च॑ न ऽइ॒मं य॒ज्ञं मि॑मिक्षताम् । पि॒पृ॒तान्नो॒ भरी॑मभिः ॥

–इत्यादि-पूर्वोक्त-कलशस्थापनविधिना ताम्रकलशं प्रतिष्ठाप्य, वरुणं सम्पूजयेत् ।

कर (ईशान्याम्) 'ॐ भू० वैनायक्यै नमः, वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर प्रत्येक देवता का पूजन समन्त्रक अथवा नामोल्लेखपुरस्सर भी कर सकते हैं।

इस प्रकार आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र शास्त्री कृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित दुर्गार्चन पद्धति में नामानुक्रम सर्वतोभद्र-मण्डल-देवता स्थापन समाप्त।

प्रधानकलशस्थापन-तत्पश्चात् सर्वतोभद्रमण्डल के मध्य 'ॐ मही द्यौः पृथिवी च न०' इत्यादि पूर्वोक्त कलशस्थापन विधि से ताम्रकलश स्थापित कर, उस पर वरुण की पूजा करे।

ततो यन्त्रोपरि स्वर्णमयीं[1] दुर्गादिवीप्रतिमामग्न्युत्तारण-पूर्वकं स्थापयेत् ।

इति प्रधानकलशस्थापनम् ।

●

यन्त्रनिर्माणम्

ततो मण्डलमध्ये धान्यराशिं कृत्वा, तदुपरि प्रधानकलशं संस्थाप्य, तदुपरि स्वर्णमयीदुर्गाप्रतिमायां मध्ये बिन्दुं, त्रिकोणं, षट्कोणं, तदुपरि वृत्तमष्टौ दलानि, तदुपरि वृत्तं, तदुपरि चतुर्विंशतिपत्राणि, तद्बाह्ये चतुर्द्वारं, चतुरस्त्रत्रयम्, इति यन्त्रं विलिखेत् ।

तत्पश्चात् यन्त्र के ऊपर स्वर्णनिर्मित दुर्गा प्रतिमा अग्न्युत्तारण-पूर्वक स्थापित करे।

इस प्रकार प्रधानकलशस्थापन समाप्त।

●

यन्त्रनिर्माण-तदनन्तर मण्डल के मध्य (बीच) धान रखकर उसके ऊपर प्रधानकलश स्थापित कर, उस पर स्थापित स्वर्णनिर्मित दुर्गाप्रतिमा के मध्य में बिन्दु, उसके मध्य त्रिकोण, एवं षट्कोण रचना कर, उसके ऊपर आठ दल वाला वृत्त, उस वृत्त पर चौबीस पत्र, उसके बाहर चार द्वार एवं तीन चतुरस्त्रवाला यन्त्र निर्माण करे।

---

१. स्थापनं यस्य देवस्य क्रियते पद्मलोचन!।
कृत्वा तस्य तनूं हैमीं मण्डले संप्रपूजयेत्॥

पीठपूजा

हस्तेऽक्षतान् गृहीत्वा, ॐ पूर्वपीठाय नमः। ॐ पं पूर्णपीठाय नमः। कं कामपीठाय नमः। प्राच्यां दिशि-ॐ उं उड्यानपीठाय नमः। आग्नेय्याम्-मां मातृपीठाय नमः। दक्षिणे-जं जालन्धरपीठाय नमः। नैर्ऋत्ये-कं कोल्हापुरोपपीठाय नमः। पश्चिमे-पूं पूर्णगिरिपीठाय नमः। वायव्याम्- सौं सौहारोपपीठाय नमः। उत्तरे-कं कोल्हागिरिपीठाय नमः। ऐशान्याम्- कं कामरूपीठाय नमः। इति पीठं सम्पूजयेत्।

नमस्कारः—दक्षिणे—गुरवे नमः। परमगुरवे नमः। परमेष्ठिगुरवे नमः। गुरुपंक्तये नमः। माता-पितृभ्यां नमः। उपमन्युनारद-सनक-व्यासादिभ्यो नमः।

वामे-गं गणपतये नमः। दुं दुर्गायै नमः। सं सरस्वत्यै

पीठपूजा-दाहिने हाथ में अक्षत लेकर, 'ॐ पूर्वपीठाय नमः' से लेकर 'कं कामपीठाय नमः' तक पढ़कर यन्त्र पर अक्षत छोड़े। 'ॐ उं उड्यानपीठाय नमः' से पूर्व दिशा में, 'मां मातृपीठाय नमः' से अग्निकोण में, 'जं जालन्धरपीठाय नमः' से दक्षिण में। 'कं कोल्हापुरोपपीठाय नमः' से नैर्ऋत्य में, 'पूं पूर्णगिरिपीठाय नमः' से पश्चिम में, 'सौं सौहारोपपीठाय नमः' से वायव्य में, 'कं कोल्हागिरि-पीठाय नमः' से उत्तर में, 'कं कामरूपीठाय नमः' से ईशानकोण में अक्षत छोड़े। इस प्रकार पीठ की पूजा करे।

'गुरवे नमः' से 'उपमन्यु-नारद-सनक-व्यासादिभ्यो नमः' तक पढ़कर दक्षिण दिशा की ओर प्रणाम करे। 'गं गणपतये नमः' से

नमः। क्षं क्षेत्रपालाय नमः। इति नत्वा, पीठदेवताः स्थापयेत्।

पीठमध्ये—मं मण्डूकाय नमः। आं आधारशक्त्यै नमः। मूं मूलप्रकृत्यै नमः। कां कालाग्निरुद्राय नमः। तदुपरि-आं आदिकूर्माय नमः। अं अनन्ताय नमः। आं आदिवराहाय नमः। पं पृथिव्यै नमः। तदुपरि- अं अमृतार्णवाय नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः। हं हेमगिरये नमः। नं नन्दनोद्यानाय नमः। कं कल्पवृक्षाय नमः। मं मणिभूतलाय नमः। दं दिव्यमण्डपाय नमः। सं स्वर्णवेदिकायै नमः। रं रत्नसिंहासनाय नमः। धं धर्माय नमः। ज्ञां ज्ञानाय नमः। वैं वैराग्याय नमः। ऐं ऐश्वर्याय नमः। इति सम्पूज्य।

पूर्वे-अं अनैश्वर्याय नमः। पुनर्मध्ये-सं सत्त्वाय नमः। प्रं प्रबोधात्मने नमः। रं रजसे नमः। प्रं प्रकृत्यात्मने नमः। तं तमसे नमः। मं मोहात्मने नमः। सों सोममण्डलाय नमः। सूं सूर्यमण्डलाय नमः। वं वह्निमण्डलाय नमः।

'क्षं क्षेत्रपालाय नमः' तक पढ़कर उत्तर की ओर नमस्कार कर, पीठ देवता की स्थापना करे।

पीठ के मध्य में 'मं मण्डूकाय नमः' से 'कां कालाग्निरुद्राय नमः' तक पढ़कर तत्तद् देवताओं पर अक्षत छोड़े। पीठ के ऊपर 'आं आदिकूर्माय नमः' से 'पं पृथिव्यै नमः' तक तथा 'अं अमृतार्णवाय नमः' से 'ऐश्वर्याय नमः' तक पढ़कर अक्षत छोड़कर पूजा करे।

'अं अनैश्वर्याय नमः' से पूर्व में, फिर 'सं सत्त्वाय नमः' से

मं मायातत्त्वाय नमः। विं विद्यातत्त्वाय नमः। शं शिवतत्त्वाय नमः। ब्रं ब्रह्मणे नमः। मं महेश्वराय नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। जं जीवात्मने नमः। ज्ञं ज्ञानात्मने नमः। कं कन्दाय नमः। नं नीलाय नमः। पं पद्माय नमः। मं महापद्माय नमः। रं रत्नेभ्यो नमः। कं केसरेभ्यो नमः। कं कर्णिकायै नमः।

ततो नवशक्तीः स्थापयेत् । तद्यथा -

पूर्वाद्यष्टसु दिक्षु-नन्दायै नमः। भगवत्यै नमः। रक्त-दन्तिकायै नमः। शाकम्भर्यै नमः। दुर्गायै नमः। भीमायै नमः। कालिकायै नमः। मध्ये-शिवदूत्यै नमः।

-इति संस्थाप्य, यथाशक्त्या 'शक्ति-सहित-पीठ-देवताभ्यो नमः' इति पूजयेत् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ पीठपूजा समाप्ता ।

●

आरम्भ कर 'कर्णिकायै नमः' पर्यन्त पढ़कर मध्य में अक्षत छींटे।

तत्पश्चात् नवशक्तियों का आठों दिशाओं में 'नन्दायै नमः' से लेकर 'शिवदूत्यै नमः' तक पढ़कर यन्त्र पर अक्षत छोड़े।

इस प्रकार स्थापित पीठ-देवताओं की यथाशक्ति 'शक्ति-सहित-पीठदेवताभ्यो नमः' पढ़कर पूजा करे।

इस प्रकार दुर्गार्चन-पद्धति में पीठपूजा समाप्त।

●

यन्त्रस्थदेवतास्थापनं पूजनं च

हस्तेऽक्षतान् गृहीत्वा, बिन्दुमध्ये 'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीस्वरूपिणी-श्रीत्रिगुणात्मिका-दुर्गादेवतायै नमः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीस्वरूपिणी-श्री-त्रिगुणात्मिका दुर्गा-देवतामावाहयामि स्थापयामि ।

बिन्दोः परितो गुरुचतुष्टयमावाहयेत् –

गुरवे नमः। परात्परगुरवे नमः। परमेष्ठिगुरवे नमः। गुरुपंक्तये नमः। (षडङ्गम्) ऐं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे नमः। क्लीं शिखायै नमः। चामुण्डायै कवचाय नमः। विच्चे नेत्रत्रयाय नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय नमः।

ततस्त्रिकोणे स्वाग्रादि-प्रादक्षिण्येन क्रमेण-स्वरया सह विधात्रे नमः। श्रिया सह विष्णवे नमः। उमया सह शिवाय नमः। दक्षिणे-हुं सिंहाय नमः। वामे-हुं महिषाय नमः।

यन्त्रस्थदेवता स्थापन-दाहिने हाथ में अक्षत लेकर, बिन्दु के मध्य 'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै०' से लेकर 'दुर्गादेवतामावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर यन्त्र पर अक्षत छोड़े।

बिन्दु के चारों ओर 'गुरवे नमः' से 'गुरूपंक्तये नमः' तक पढ़कर अक्षत छिड़के। पुनः 'ऐं हृदयाय नमः' से 'अस्त्राय नमः' तक उच्चारण कर अक्षत चढ़ावे।

तदनन्तर त्रिकोण के चारों ओर 'स्वरया सह विधात्रे नमः' से आरम्भ कर 'हुं महिषाय नमः' तक पढ़कर अक्षत छींटे।

षट्कोणे, अग्नीशासुरवायव्ये मध्ये दिक्षु च-ऐं नन्दजायै नमः। ह्रीं रक्तदन्तिकायै नमः। क्लीं शाकम्भर्यै नमः। दुं दुर्गायै नमः। हुं भीमाय नमः। ह्रीं भ्रामर्यै नमः।

ततोऽष्टपत्रे स्वाग्रादि-प्रादक्षिण्यक्रमेण-ऐं ब्राह्म्यै नमः। ह्रीं माहेश्वर्यै नमः। क्लीं कौमार्यै नमः। ह्रीं वैष्णव्यै नमः। हुं वाराह्यै नमः। क्ष्म्रौं नारसिंह्यै नमः। लं ऐन्द्र्यै नमः। स्फ्रें चामुण्डायै नमः।

ततश्चतुर्विंशतिदले-विं विष्णुमायायै नमः। चें चेतनायै नमः। बुं बुद्ध्यै नमः। निं निद्रायै नमः। क्षुं क्षुधायै नमः। छां छायायै नमः। शं शक्त्यै नमः। तृं तृष्णायै नमः। क्षां क्षान्त्यै नमः। जां जात्यै नमः। लं लज्जायै नमः। शां शान्त्यै नमः। श्रं श्रद्धायै नमः। कां कान्त्यै नमः। लं लक्ष्म्यै नमः। धृं धृत्यै नमः। वृं वृत्त्यै नमः। श्रुं श्रुत्यै नमः। स्मृं स्मृत्यै नमः। दं दयायै नमः। तुं तुष्ट्यै नमः। पुं पुष्ट्यै नमः। मां मातृभ्यो नमः। भ्रां भ्रान्त्यै नमः।

भूपुरे कोणचतुष्टये आग्नेयादिकोणे-गं गणपतये नमः।

पुनः षट्कोण में- 'ऐं नन्दजायै नमः' से 'ह्रीं भ्रामर्यै नमः' तक पढ़कर अक्षत छोड़े।

तत्पश्चात् अष्टदल में क्रमशः 'ऐं ब्राह्म्यै नमः' से लेकर - 'स्फ्रें चामुण्डायै नमः' तक पढ़कर अक्षत चढ़ावे।

उसके बाद यन्त्रस्थ कमल दल के चौबीस पत्रों के क्रम से 'विं विष्णुमायायै नमः' से लेकर 'भ्रां भ्रान्त्यै नमः' पर्यन्त पढ़कर अक्षत छिड़के।

क्षं क्षेत्रपालाय नमः। बं बटुकाय नमः। यां योगिन्यै नमः।

पूर्वादिदिक्षु-इन्द्राय नमः। अग्नये नमः। यमाय नमः। निर्ऋतये नमः। वरुणाय नमः। वायवे नमः। सोमाय नमः। ईशानाय नमः। ब्रह्मणे नमः। अनन्ताय नमः।

तद्बहिः-वज्राय नमः। शक्तये नमः। दण्डाय नमः। खड्गाय नमः। पाशाय नमः। अङ्कुशाय नमः। गदायै नमः। त्रिशूलायै नमः। पद्माय नमः। चक्राय नमः।

तद्बहिः-वज्रहस्तायै गजारूढायै कादम्बरीदेव्यै नमः। शक्तिहस्तायै अजवाहनायै उल्कादेव्यै नमः। दण्डहस्तायै महिषारूढायै करालीदेव्यै नमः। खड्गहस्तायै शव-वाहनायै रक्ताक्षीदेव्यै नमः। पाशहस्तायै मकरवाहनायै श्वेताक्षीदेव्यै नमः। अङ्कुशहस्तायै मृगवाहनायै हरिताक्षी-देव्यै नमः। गदाहस्तायै सिंहारूढायै यक्षिणीदेव्यै नमः। शूलहस्तायै वृषभवाहनायै कालीदेव्यै नमः। पद्महस्तायै हंसवाहनायै सुरज्येष्ठादेव्यै नमः। चक्रहस्तायै सर्पवाहनायै सर्पराज्ञीदेव्यै नमः।

-इत्यावाह्य, 'यन्त्रस्थदेवताभ्यो नमः' इति मूलमन्त्रेण

तत्पश्चात् चारों द्वार एवं उसके चारों कोनों में आग्नेयादि क्रम से-'गं गणपतये नमः' से लेकर 'अनन्ताय नमः' तक पढ़कर अक्षत चढ़ाये। उसी प्रकार उसके बाहर के भाग में 'वज्राय नमः' से लेकर 'चक्राय नमः' तक पढ़कर यन्त्र पर अक्षत छोड़े। पुनः उसके बाहरी भाग में-'वज्रहस्तायै०' से आरम्भ कर सर्पराज्ञीदेव्यै नमः' पर्यन्त पढ़कर अक्षत चढ़ाये। इस प्रकार आवाहन कर, 'यन्त्रस्थदेवताभ्यो

यथाशक्त्या यथालब्धोपचारैः पूजनं कुर्यात् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ यन्त्रस्थदेवतास्थापनं पूजनं च समाप्तम् ।

●

दुर्गाप्रतिमा-प्राणप्रतिष्ठा

अग्न्युत्तारणविधिः

तत्राऽऽचार्यः पात्रान्तरे प्रतिमां निधाय, घृतेनोपलिप्य उपरि जलधारां कुर्यात् । तत्र मन्त्राः—

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परि व्ययामसि । पावको ऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव ॥१॥ ॐ हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परि व्ययामसि । पावको ऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव ॥२॥ ॐ उप ज्ज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्ष्वा । अग्ग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि सेमं नो यज्ञं पावकवर्ण्णꣳ शिवं कृधि ॥३॥ ॐ अपामिदं न्ययनꣳ समुद्रस्य निवेशनम् । अन्न्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यꣳ शिवो

नमः' पढ़कर यथाशक्ति यन्त्र एवं यन्त्रस्थ देवताओं का पूजन करें ।

इस प्रकार दुर्गार्चनपद्धति में यन्त्रस्थ-देवता-स्थापन एवं पूजन समाप्त ।

●

दुर्गाप्रतिमा की प्राणप्रतिष्ठा

अग्न्युत्तारण विधि- तदनन्तर आचार्य किसी दूसरे पात्र में घृत लगी हुई प्रतिमा को रखकर, उस पर 'ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने०' से

भव ॥४॥ ॐ अग्ग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया । आ देवान्नवक्षि यक्षि च ॥५॥ ॐ स नः पावक दीदिवोऽग्ग्ने देवाँ२॥ ऽइहावह । उप यज्ञꣳ हविश्च नः ॥६॥ ॐ पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्रुरुच ऽउषसो न भानुना । तूर्व्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण ऽआ यो घृणे न ततृषाणो ऽअजरः ॥७॥ ॐ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते ऽअस्त्वर्च्चिषे । अन्याँस्ते ऽअस्म्मत्तपन्तु हेतयः पावको ऽअस्म्मभ्यꣳ शिवो भव ॥८॥ ॐ नृषदे व्वेडप्सुषदे व्वेड् बर्हिषदे व्वेड् व्वनसदे व्वेट् स्वर्व्विदे व्वेट् ॥९॥ ॐ ये देवा देवानां य्यज्ञिया य्यज्ञियानाꣳ संव्वत्सरीणमुपभागमासते । अहुतादो हविषो यज्ञे ऽअस्मिन्त्स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥१०॥ ॐ ये देवा देवेष्वधि देवत्त्वमायन्ये ब्ब्रह्मणः पुर ऽएतारो ऽअस्य । येब्भ्यो न ऽऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्व्या ऽअधि स्नुषु ॥११॥ ॐ प्प्राणदा ऽअपानदा व्यानदा व्वर्च्चोदा व्वरिवोदाः । अन्याँस्ते ऽअस्म्मत्तपन्तु हेतयः पावको ऽअस्म्मभ्यꣳ शिवो भव ॥१२॥

इत्यग्न्युत्तारणं कृत्वा, प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। तद्यथा-स्वर्णमयीप्रधानप्रतिमां हस्तेन संस्पृश्य, बीजमन्त्रान् जपेत्। ॐ आँ ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाः। (पुनः) आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितः। पुनः आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-जिह्वा-घ्राण-पाणि-पाद-पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।१।।
आगच्छ वरदे देवि! दैत्यदर्पनिषूदिनि!।
पूजां गृहाण सुमुखि! नमस्ते शङ्करप्रिये! ।।२।।
सर्वतीर्थमयं वारि सर्वदेवसमन्विता।
इमं घटं समागच्छ तिष्ठ देवगणैः सह ।।३।।

लेकर 'अस्मभ्यर्ठ. शिवो भव' पर्यन्त पढ़कर मन्त्रों से जलधारा दे।

इस प्रकार अग्न्युत्तारण करके मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा करे, जो **इस** प्रकार है-

स्वर्ण निर्मित प्रधान प्रतिमा को बायें हाथ की हथेली में रखते हुए उसे दाहिने हाथ की हथेली से ढँक कर 'ॐ आँ ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं०' से आरम्भ कर 'सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त बीज मन्त्रों को पढ़कर प्राणप्रतिष्ठा करे और 'अस्यै प्राणाः

दुर्गे देवि ! समागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ।
बलिपूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह ।।४।।
कल्याणजननीं सत्यां कामदां करुणाकराम् ।
अनन्तशक्तिसम्पन्नां दुर्गामावाहयाम्यहम् ।।५।।
एह्येहि दुर्गे ! दुरितौघनाशिनि !
प्रचण्ड - दैत्यौघ - विनाशकारिणी ! ।
उमे महेशार्द्ध - शरीरधारिणी !
स्थिरा भव त्वं मम यज्ञकर्मणि ।।६।।

ॐ मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमं दधातु । विश्श्वे-देवा स ऽइह मादयान्तामोꣳ प्रतिष्ठ ।

इति मन्त्रेण प्रतिष्ठां कृत्वा पूजयेत् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ दुर्गा-प्रतिमा-प्राणप्रतिष्ठा समाप्ता ।



प्रतिष्ठन्तु०' से 'मम यज्ञकर्मणि' श्लोक तथा 'ॐ मनो जूति-र्जुषतामाज्यस्य०' मन्त्र पढ़कर मूर्ति पर अक्षत छोड़कर षोडशोपचार, पंचोपचार या यथालब्धोपचार से पूजन करे ।

इस प्रकार दुर्गार्चनपद्धति में दुर्गाप्रतिमा-प्राणप्रतिष्ठा समाप्त ।



षोडशोपचार-दुर्गा-पूजनम्

रक्तपुष्पं गृहीत्वा, दुर्गादेव्या ध्यानं कुर्यात्-

ध्यानम् -

विद्युद्दाम-समप्रभां मृगपति-स्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।१।।
कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुल-भयदां मौलि-बद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदश-परिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ।।२।।
घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताऽब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेह-समुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनु भजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ।।३।।
श्रीदुर्गादेव्यै नमः, ध्यानं समर्पयामि ।

आवाहनम्

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।

षोडशोपचार दुर्गा-पूजन

हाथ में रक्त (लाल) पुष्प लेकर 'विद्युद्दाम-समप्रभां०' से लेकर 'ध्यानं समर्पयामि' तक पढ़कर देवी पर चढ़ावे ।

ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिꣳ सर्व्वतस्पृत्त्वात्त्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥

आगच्छेह महादेवि ! सर्वसम्पत्प्रदायिनी ! ।
यावद् व्रतं समाप्येत तावत्त्वं सन्निधो भव ।।
श्रीदुर्गादिव्यै नमः, आवाहनं समर्पयामि ।

आसनम्

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ।।

ॐ पुरुष ऽएवेदꣳ सर्व्वं ब्यद्भूतं ब्यच्च भाव्व्यम् ।
उतामृतत्त्वस्येशानो . यदन्नेनातिरोहति ॥

अनेक-रत्न-संयुक्तं नानामणि-गणान्वितम् ।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ।।
भगवती-श्रीदुर्गादिव्यै नमः, आसनं समर्पयामि ।

पाद्यम्

अश्वपूर्णां रथमध्यां हस्तिनाद-प्रबोधिनीम् ।
श्रीयं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी ज्रुषताम् ।।

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्श्च पूरुषः ।
पादोऽस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥

पुनः 'ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं०' से 'आवाहनं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर देवी पर अक्षत, 'तां म आवह०' से 'आसनं समर्पयामि' तक पढ़कर पुष्प या अक्षत, 'अश्वपूर्वां रथमध्यां०' से लेकर

गङ्गादि-सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतम् ।
तोयमेतत् सुखस्पर्श पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पादयोः पाद्यं समर्पयामि ।

अर्घ्यम्

काँ सोऽस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।
ॐ त्रिपादूर्ध्व ऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने ऽअभि ।।
निधीनां सर्वदेवानां त्वमनर्घ्यगुणा ह्यसि ।
सिंहोपरिस्थिते देवि! गृहाणाऽर्घ्यं नमोऽस्तु ते ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि ।

आचमनम्

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनेमिं शरणं प्रपद्ये ऽअलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ।।
ॐ ततो विराडजायत विराजो ऽअधि पूरुषः ।
स जातो ऽअत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ।।
कर्पूरेण सुगन्धेन सुरभिस्वादु शीतलम् ।
तोयमाचमनीयार्थं देवीदं प्रतिगृह्यताम् ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, आचमनीयं समर्पयामि ।

'पाद्यं समर्पयामि' तक पढ़कर देवी पर आचमनी से जल चढ़ावे ।
तथा 'कां सोऽस्मितां०' से 'हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि' तक पढ़कर जल, 'चन्द्रां प्रभासां०' से 'आचमनीयं समर्पयामि' तक

मधुपर्कः

ॐ यन्मधुनो मधव्यं परमठ. रूपमन्नाद्यम् । तेनाऽहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्यो ऽन्नादोऽसानि ॥

दधि-मधु-घृतसमायुक्तं पात्रयुग्मं समन्वितम् ।
मधुपर्कं गृहाण त्वं शुभदा भव शोभने ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, मधुपर्कं समर्पयामि । मधुपर्कान्ते आचमनीयं समर्पयामि ।

पञ्चामृतस्नानम् (पयःस्नानम्)

ॐ पयः॑ पृथि॒व्यां पय॒ ऽओष॑धीषु॒ पयो॑ दि॒व्य॒न्तरि॑क्षे॒ पयो॑धाः । पय॑स्वतीः॑ प्र॒दिशः॑ सन्तु॒ मह्य॑म् ॥

कामधेनु-समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयःस्नानार्थमर्पितम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पयःस्नानं समर्पयामि । पयःस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

दधिस्नानम्

ॐ द॒धि॒क्राव्णो॑ ऽअकारिषञ्जि॒ष्णोरश्व॑स्य वा॒जिनः॑ ।

उच्चारण कर देवी पर पुनः जल अर्पित करे।

'ॐ यन्मधुनो०' से लेकर 'मधुपर्कं समर्पयामि' तक पढ़कर मधुपर्क (मधु, दही मिश्रित घी) चढ़ाये। पश्चात् एक आचमनी जल अर्पित करे।

पुनः 'पयः पृथिव्यां पय०' से आरम्भ कर 'पयःस्नानं समर्पयामि' पर्यन्त कहकर दूध, 'दधिक्राव्णोऽकारिषं०' से

सुरभि नो मुखा करत्प्रण ऽआयूꣳषि तारिषत् ॥

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देवि! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, दधिस्नानं समर्पयामि । दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

घृतस्नानम्

ॐ घृतम्मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतं बस्य धाम । अनुष्ष्वधमावह मादयस्व स्वाहा कृतं व्वृषभ व्वक्षि हव्व्यम् ॥

नवनीत-समुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, घृतस्नानं समर्पयामि । तदन्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

मधुस्नानम्

ॐ मधु व्वाता ऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः ।
माद्ध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः ॥
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्त्पार्थिवꣳरजः ।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥
मधुमान्नो व्वनस्पतिर्म्मधुमाँ२ ऽअस्तु सूर्य्यः ।
माद्ध्वीर्ग्गावो भवन्तु नः ॥

'दधिस्नानं समर्पयामि' से दधि, घृतं मिमिक्षे०'-'घृतस्नानं समर्पयामि'

तरुपुष्प-समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, मधुस्नानं समर्पयामि । मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

शर्करास्नानम्

ॐ अपाꣳ रसमुद्द्वयसꣳ सूर्य्ये सन्तꣳ समाहितम् । अपाꣳ रसस्य यो रसस्तं व्वो गृह्णाम्म्युत्तममुपयाम गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टङ्गृह्णाम्म्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

इक्षुसार-समुद्भूतां शर्करां पुष्टिकारिका ।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, शर्करास्नानं समर्पयामि । तदन्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

पञ्चामृतस्नानम्

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ।।

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् ।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

तक से घृत, 'मधु व्वाता०' से 'मधुस्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर मधु, 'ॐ अपाꣳ. रसमुद्वयसꣳ.' से लेकर 'शर्करास्नानं समर्पयामि'

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि।

गन्धोदकस्नानम्

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥
मलयाचलसम्भूतं चन्दनाऽगरुसम्भवम्।
चन्दनं देवि! देवेशि! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानम् समर्पयामि।

उद्वर्तन (उबटन) स्नानम्

ॐ अ॒ꣳशुना॑ ते अ॒ꣳशुः पृच्च्यतां॒ परु॑षा॒ परुः॑।
ग॒न्धस्ते॒ सोम॑मवतु॒ मदा॑य॒ रसो॒ ऽअच्च्युतः॥

नाना-सुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम्।
उद्वर्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, उद्वर्तनस्नानं समर्पयामि। उद्वर्तनस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि।

तक पढ़कर चीनी, 'उपैतु मां०' से 'पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि' तक उच्चारण कर पंचामृत स्नान कराने के पश्चात् एक आचमनी जल चढ़ावे।

'गन्धद्वारां दुराधर्षां०' से 'श्रीदुर्गादेव्यै नमः, गन्धोदकस्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर गन्ध-मिश्रित जल देवी पर चढ़ावे। पश्चात् 'अꣳ शुना ते०' से लेकर 'उद्वर्तनस्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर

शुद्धोदकस्नानम्

ॐ शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्त ऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्ण्णा यामा ऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्ज्जन्न्याः ॥

एलाशीर-सुवासितैः सुकुसुमैर्गङ्गादितीर्थोदकै-
र्माणिक्यादिक-मौक्तिका-ऽमृतयुतैः स्वच्छैः सुवर्णोदकैः ।
मन्त्रान् वैदिक-तान्त्रिकान् परिपठन् सानन्दमत्यादरात्
स्नानं ते परिकल्पयामि जननि! स्नेहात्त्वमङ्गीकुरु ।।

श्रीदुर्गादेव्यै नमः, शुद्धोदकस्नानम् समर्पयामि ।

पादुकार्पणम्

नवरत्नयुते मयाऽर्पिते कमनीये तपनीयपादुके ।
सविलासमिदं पदद्वयं कृपया देवि! तयोर्निधीयताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, चरणयोः पादुके समर्पयामि ।

वस्त्रोपवस्त्रम्

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ।।

ॐ तस्म्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्ज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्क्रे व्वायव्व्यानारण्ण्या ग्ग्राम्याश्च ये ॥

सुगन्धित तेल, पुनः 'शुद्धवालः०' से 'श्रीदुर्गादेव्यै नमः, शुद्धोदक-स्नानं समर्पयामि' तक पढ़कर देवी को शुद्ध जल से स्नान करावे ।

'नवरत्नयुते मयाऽर्पिते०' से आरम्भ कर 'चरणयोः पादुके

पट्टकूलयुगं देवि! कञ्चुकेन समन्वितम् ।
परिधेहि कृपां कृत्वा दुर्गे! दुर्गतिनाशिनि! ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, उपवस्त्रसहितं वस्त्रं समर्पयामि। वस्त्रोपवस्त्रान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

केशपाशसंस्करणम् (कंघी)

बहुभिरगरुधूपैः सादरं धूपयित्वा
भगवति तव केशान् कङ्कतैर्मार्जयित्वा।
सुरभिभिररविन्दैश्चम्पकैश्चाऽर्चयित्वा
झटिति कनकसूत्रैर्जूटयन् वेष्टयामि ।।

श्रीदुर्गादेव्यै नमः, केशपाशसंस्करणं समर्पयामि।

सौवीराञ्जनम् (सुरमा)

सौवीराञ्जनमिदमम्ब! चक्षुषोस्ते
विन्यस्तं कनक-शलाकया मया यत्।
तन्नूनं मलिनमपि त्वदक्षिसङ्गाद्
ब्रह्मेन्द्राद्यभिलषणीयतामियाय ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, सौवीराञ्जनं समर्पयामि।

समर्पयामि' तक बोल कर पादुका (खड़ाऊँ), 'उपैतु मां देवसखः०' से 'उपवस्त्रसहितं वस्त्रं समर्पयामि' तक कह कर साड़ी तथा ओढ़नी देवी पर चढ़ावे। तथा वस्त्र एवं उपवस्त्र चढ़ाने के पश्चात् एक आचमनी जल गिरा दे।

पुनः 'बहुभिरगरुधूपैः०' से 'केशपाशसंस्करणं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर देवी को कंघी, 'सौवीराञ्जनमिदमम्ब०' से लेकर 'सौवीराञ्जनं समर्पयामि' तक पढ़कर आँख में सुरमा लगावे।

अलङ्कारान् (कङ्कणम्)

माणिक्य-मुक्ता-मणिखण्डयुक्ते
सुवर्णकारेण च संस्कृते ये।
ते किङ्किणीभिः स्वरिते सुवर्णे
मयाऽर्पिते देवि! गृहाण कङ्कणे।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, हस्तयोः कङ्कणे समर्पयामि।

(कर्णभूषणम्)

ययोः शुभान्याखचितानि मात-
र्माणिक्य-खण्डानि सुशोभिनानि।
ताटङ्कयुग्मे कनकस्य कृत्वा
मयाऽर्पिते देवि! गृहाण चैते।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, कर्णयोः कुण्डले समर्पयामि।

(हारः)

मातस्त्वदर्थं मणिमौक्तिकाभिः
कृतं मनोज्ञं कलकण्ठभूषणम्।
मयैव कण्ठे तव देवि। चाऽर्पितं
ग्रैवेयकं नाम गृहाण भूषणम्।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, कण्ठे ग्रैवेयकं समर्पयामि।

तथा 'माणिक्यमुक्ता-मणिखण्डयुक्ते०' से आरम्भ कर 'हस्तयोः कङ्कणे समर्पयामि' तक पढ़कर देवी के दोनों हाथों में कंगन, 'ययोः शुभान्याखचितानि०' से 'कर्णयोः कुण्डले समर्पयामि' तक कहकर दोनों कानों में कुण्डल, 'मातस्त्वदर्थं०' से 'कण्ठे ग्रैवेयकं समर्पयामि' पर्यन्त बोलकर कण्ठ में सुवर्ण

(अङ्गदम्)

हेम्ना कृतं ह्यङ्गदयुग्मकं च
मनोहरं सुन्दरचित्रयुक्तम् ।
बाह्वोर्गृहाणाऽऽशु मयाऽर्पितं ते
मनोज्ञमाभूषण-भूषणोत्तमम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, बाह्वोः अङ्गदे समर्पयामि ।

(अङ्गुलीयकम्)

प्रवाल-गोमेदमयैश्च रत्नैः
कृतां तथा हेममयां मनोहराम् ।
तस्यां कुरु त्वं मुखवीक्षणं च
गृहाण देव्याङ्गुलिमुद्रिकां च ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, करयोरङ्गुलिमुद्रिकां समर्पयामि ।

(कटिभूषणम्)

काञ्चीं शुभां हाटकनिर्मितां मया
त्रैलोक्यमातः कटिभूषणाय ।
दत्तां यथेमां त्वमजे च धत्से
ह्युद्धर्तुमस्मान् वह मातृगर्भात् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, कटिदेशे काञ्चीं समर्पयामि ।

की माला, 'हेम्ना कृतं०' से 'बाह्वोः अङ्गदें समर्पयामि' तक पढ़कर दोनों भुजाओं में बाजूबन्द चढ़ावे ।

पुनः 'प्रवाल-गोमेदमयैश्च' से 'मुद्रिकां समर्पयामि' तक उच्चारण कर अँगूठी, 'काञ्चीं शुभां०' से लेकर 'काञ्चीं समर्पयामि' तक

(नूपुरम्)

सुसुन्दरे हारकनिर्मिते द्वे पादाङ्गदे नूपुरनामधेये।
गृहाण मातः पदयोः प्रदत्ते सुकिङ्किणीभिश्च विराजिते ते।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पादयोः नूपुरे समर्पयामि।

(मुकुटम्)

मातस्तवेमं मुकुटं हरिन्मणि-
प्रवाल-मुक्तामणिभिर्विराजितम्।
गारुत्मतैश्चाऽपि मनोहरं कृतं
गृहाण मातः शिरसो विभूषणम्।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, शिरसि मुकुटं समर्पयामि। अलङ्काराभावेऽक्षतान् समर्पयामि।

गन्धम्

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।।
ॐ त्वां गन्धर्व्वा ऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्प्पतिः। त्वामौषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्च्यत।।
श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं च देवेशि! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

पढ़कर करधनी, 'सुसुन्दरे हारक-निर्मिते द्वे०' से 'नूपुरे समर्पयामि' तक पढ़कर पैर में पैजेब, 'मातस्तवेमं मुकुटं०' से 'मुकुटं समर्पयामि' तक पढ़कर देवी के मस्तक पर मुकुट समर्पण करें। इन सभी अलंकारों के न रहने पर केवल अक्षत चढ़ावे।

सौभाग्यसूत्रम्

सौभाग्यसूत्रं वरदे! सुवर्णमणिसंयुतम्।
कण्ठे बध्नामि देवेशि! सौभाग्यं देहि मे सदा।।
श्रीदुर्गादेव्यै नमः, सौभाग्यसूत्रं समर्पयामि।

हरिद्राम्

हरिद्रारञ्जिता देवि! सुख-सौभाग्यदायिनि।
तस्मात्त्वं पूज्याम्यत्र दुःखशान्तिं प्रयच्छ मे।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, हरिद्रां समर्पयामि।

कुङ्कुमम्

कुङ्कुमं कान्तिदं दिव्यं कामिनीकामसम्भवम्।
कुङ्कुमेनाऽर्चिते देवि! प्रसीद परमेश्वरि।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, कुङ्कुमं समर्पयामि।

अक्षतान्

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।।
ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया ऽअधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान्विन्द्र ते हरी।
अक्षतान् निर्मलान् शुद्धान् मुक्ताफलसमन्वितान्।
गृहाणेमान् महादेवि! देहि मे निर्मलां धियम्।।

तदनन्तर 'गन्धद्वारां दुराधर्षां०' से लेकर 'गन्धं समर्पयामि' तक उच्चारण कर गन्ध, 'सौभाग्यसूत्रं वरदे०' से 'सौभाग्यसूत्रं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर सौभाग्यसूत्र (नारा), 'हरिद्रारञ्जिता देवि०' से आरम्भ कर 'हरिद्रां समर्पयामि' तक पढ़कर देवी को हरदी की बुकनी चढ़ावे।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, अक्षतान् समर्पयामि ।

कज्जलम्

चक्षुर्भ्यां कज्जलं रम्यं सुभगे! शान्तिकारके ।
कर्पूरज्योतिरुत्पन्नं गृहाण परमेश्वरि ! ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, कज्जलं समर्पयामि ।

अत्तरम्

जननि चम्पकतैलमिदं पुरो मृगमदोऽयमयं पटवासकः ।
सुरभिगन्धमिदं च चतुःसमं सपदि सर्वमिदं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, अङ्गेषु विलेपनार्थम् अत्तरं समर्पयामि ।

सिन्दूरम्

ॐ अहिंरिव भोगैः पर्य्येति बाहुं ज्याया हेतिं प्परि-बाधमानः । हस्तघ्नोव्विश्श्वा व्वयुनानि व्विद्द्वान्पु-मान्पुमाᳬसं प्परिपातु व्विश्श्वतः ॥

सिन्दूरमरुणाभासं जपाकुसुमसन्निभम् ।
पूजिताऽसि मया देवि! प्रसीद परमेश्वरि ! ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, सिन्दूरं समर्पयामि ।

पश्चात् 'कुङ्कुमं कान्तिदं०' से 'कुङ्कुमं समर्पयामि' तक पढ़कर रोली, 'मनसः काममाकूतिं०' से 'अक्षतान् समर्पयामि' तक पढ़कर अक्षत चढ़ावे ।

तत्पश्चात् 'चक्षुर्भ्यां कज्जलं०' से 'कज्जलं समर्पयामि' तक कह कर देवी को काजल लगावे। एवं 'जननि चम्पकतैलमिदं०' से लेकर 'अत्तरं समर्पयामि' तक कहकर इत्र, 'ॐअहिरिव भोगैः०'

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ।।
ॐ यत्पुरुषं व्वयदधुः कतिधा व्व्यकल्प्पयन् ।
मुखङ्किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादा उच्च्येते ॥
मन्दार-परिजातादि-पाटली-केतकानि च ।
जाती-चम्पक-पुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने ! ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पुष्पाणि समर्पयामि ।

पुष्पमालाम्

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ।।
ॐ ओषधीः प्प्रतिमोदध्वं पुष्प्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्श्वा ऽइव सजित्त्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्णवः ॥
पद्म-शङ्ख-पुष्पादि शतपत्रैर्विचित्रताम् ।
पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्वं सुरेश्वरि ! ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, पुष्पमालां समर्पयामि ।

अङ्गपूजनम्

वामहस्ते पुष्पं गृहीत्वा दक्षिणेनार्चयेत् –

से 'सिन्दूरं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर सिन्दूर, (अबीर-बुक्का) आदि सौभाग्य द्रव्य अर्पण करें।

'मनसः काममाकूतिं०' से 'पुष्पाणि समर्पयामि' तक कहकर सुगन्धित पुष्प एवं 'आपः सृजन्तु०' से 'पुष्पमालां समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर देवी को फूल का गजरा पहिनावे ।

ॐ दुर्गायै नमः, पादौ पूजयामि। ॐ महाकाल्यै नमः, गुल्फौ पूजयामि। ॐ मङ्गलायै नमः, जानुद्वयं पूजयामि। ॐ कात्यायन्यै नमः, ऊरुद्वयं पूजयामि। ॐ भद्रकाल्यै नमः, कटिं पूजयामि। ॐ कमलवासिन्यै नमः, नाभिं पूजयामि। ॐ शिवायै नमः, उदरं पूजयामि। ॐ क्षमायै नमः, हृदयं पूजयामि। ॐ कौमार्यै नमः, स्तनौ पूजयामि। ॐ उमायै नमः, हस्तौ पूजयामि। ॐ महागौर्यै नमः, दक्षिणबाहुं पूजयामि। ॐ वैष्णव्यै नमः, वामबाहुं पूजयामि। ॐ रमायै नमः, स्कन्धौ पूजयामि। ॐ स्कन्दमात्रे नमः, कण्ठं पूजयामि। ॐ महिषासुरमर्दिन्यै नमः, नेत्रे पूजयामि। ॐ सिंहवाहिन्यै नमः, मुखं पूजयामि। ॐ माहेश्वर्यै नमः, शिरः पूजयामि। ॐ कात्यायन्यै नमः, सर्वाङ्गं पूजयामि।

धूपम्

य: शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्॥

ॐ धूर॑सि॒ धूर्व्व॒ धूर्व्व॑न्तं॒ धूर्व्व॒तं ख्योऽस्मान् धूर्व्वी॑ति॒ तं धूर्व्व॒यं व्व॒यं धूर्व्वा॑मः। दे॒वाना॑मसि॒

अङ्गपूजन-दाहिने हाथ में पुष्प लेकर 'ॐ दुर्गायै नमः' से लेकर 'ॐ कात्यान्यै नमः' तक एक-एक नाम से पढ़ कर यन्त्रस्थित दुर्गा जी की मूर्ति पर चढ़ावें।

तत्पश्चात् 'यः शुचिः प्रयतो भूत्वा०' से 'धूपमाघ्रापयामि' तक

व्वर्ह्लितमꣳ सस्निंतमं पप्प्रितमं जुष्ट्टतमं देवहूतमम् ॥

दशाङ्ग-गुग्गुलं धूपं चन्दना-गरु-संयुतम् ।
समर्पितं मया भक्त्या महादेवि! प्रगृह्यताम् ॥
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, धूपमाघ्रापयामि ।

दीपम्

सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुक-गन्धमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन-भूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥

ॐ अग्निर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्य्यो ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा । अग्निर्व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा । ज्ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्ज्योतिः स्वाहा ॥

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेशि! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, [1]दीपं दर्शयामि ।

नैवेद्यं फलं च

आर्द्रां पुष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

कहकर धूप, 'सरसिज-निलये०' से आरम्भ कर 'दीपं दर्शयामि' तक पढ़कर दीप दिखावे।

'आर्द्रां पुष्करिणीं०'-'नैवेद्यं फलं च निवेदयामि' तक पढ़कर नैवेद्य (भोग) चढ़ावे।

---

१. घृतदीपं सितवर्तियुतं देवतादक्षिणभागे। तैलदीपं रक्तवर्तियुतं देवतावामभागे स्थापनीयम्।

ॐ नाभ्यां ऽआसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ ऽअकल्प्यन् ॥

अन्नं चतुर्विधं स्वादु-रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।।

अथवा

द्राक्षा-खर्जूर-कदली-पनसा-ऽऽम्र-कपित्थकम् ।
नारिकेलेक्षु-जम्ब्वादि-फलानि प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, नैवेद्यं फलं च निवेदयामि ।

ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, ब्रह्मणे नमः, मध्ये पानीयम्, उत्तरापोषणं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालम् । इति आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

ॐ अꣳशुना ते अꣳशुः पृच्च्यतां परुषा परुः । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो ऽअच्युतः ॥

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, करोद्वर्तनार्थे गन्धं समर्पयामि ।

पश्चात् 'ॐ प्राणाय स्वाहा०' से लेकर 'आचमनीयं जलं समर्पयामि' तक पढ़कर भूमि पर चार आचमनी जल गिरावे ।

पुनः 'ॐ अꣳ. शुना०' से लेकर 'गन्धं समर्पयामि' तक पढ़कर दोनों हाथों की अंगुष्ठयुक्त तर्जनी अँगुलि से गन्ध छिड़के ।

तां म ऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ।।
ॐ स॒प्तास्या॑सन्परि॒धय॒स्त्रिः स॒प्त स॒मिधः॑ कृ॒ताः ।
दे॒वा यद्य॒ज्ञं त॑न्वा॒ना ऽअब॑ध्न॒न्पुरु॑षं प॒शुम् ।।

एला-लवङ्ग-कस्तूरी-कर्पूरैः पुष्पवासिताम् ।
वीटिकां मुखवासार्थसमर्पयामि सुरेश्वरि ! ।।

अथवा

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्ली-दलैर्युतम् ।
एलादि-चूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, मुखवासार्थे एलालवङ्गा-दिभिर्युतं पूगीफल-ताम्बूलं समर्पयामि ।

दक्षिणा

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ।।

ॐ हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भः सम॑वर्त्त॒ताग्रे॑ भू॒तस्य॑ जा॒तः पति॒रेक॑ ऽआसीत् । स दा॑धार पृथि॒वीं द्यामु॒तेमां कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ।।

पश्चात् 'तां म ऽआवह जातवेदो०' से 'पूगीफल-ताम्बूलं समर्पयामि' तक पढ़कर लौंग, इलायची, सुपाड़ी, छुट्टा पान अथवा पान का बीड़ा समर्पित करे ।

तदनन्तर 'यः शुचिः प्रयतो०' से 'द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि' तक पढ़कर दक्षिणा चढ़ावे ।

पूजाफलसमृद्ध्यर्थं तवाग्रे स्वर्णमीश्वरि ! ।
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान् कुरु मनोरथान् ।।
अथ बहुमणिमिश्रैर्मौक्तिकैस्त्वां विकीर्य
त्रिभुवनकमनीये पूजयित्वा च वस्त्रैः ।
मिलित-विविधमुक्तैर्दिव्य-लावण्ययुक्तां
जननि ! कनकवृष्टिं दक्षिणां तेऽर्पयामि ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

राजोपचारान् (छत्रम्)

ॐ ध्रुवाऽसि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात्। घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथामिन्द्रस्य छदिरसि विश्वजनस्य छाया ।

छत्रं देवि ! जगद्धात्रि ! घर्म-वात-प्रनाशनम् ।
गृहाण हे महामाये ! सौभाग्यं सर्वदा कुरु ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, छत्रं समर्पयामि ।

(चामरम्)

ॐअहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्बीव सोमः । वाजसनिꣳ रयिमस्मे सुवीरं प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम् ॥

चामरं हे महादेवि ! चमरीपुच्छनिर्मितम् ।
गृहीत्वा पापराशीनां खण्डनं सर्वदा कुरु ।।

तत्पश्चात् 'ॐ ध्रुवाऽसि ध्रुवोऽयं०' से लेकर 'छत्रं समर्पयामि' तक पढ़कर छत्र (छाता), 'ॐ अहाव्यग्ने हविरास्ये०' से 'चामरं

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, चामरं समर्पयामि ।

(दर्पणम्)

ॐ रजता हरिणीः सीसा युजो युज्यन्ते कर्मभिः ।
अश्वस्य वाजिनस्त्वचि सिमाः शम्यन्तु शम्यन्तीः ॥

दर्पणं विमलं रम्यं शुद्धबिम्बप्रदायकम् ।
आत्मबिम्बप्रदर्शार्थमर्पयामि महेश्वरि ! ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, दर्पणं समर्पयामि ।

(तालवृन्तम्)

ॐ इडामग्ने पुरुदꣳसꣳसनिं गोः शश्वत्तमꣳ हवमानाय साध । स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥

रौप्येण दण्डेन युतेन शब्दैर्युक्तेन वै रौप्यसुकिङ्किणीनाम् ।
सुतालवृत्तेन तवाङ्गकानि मातः ! सुमन्दं परिवीजयामि ।।

अथवा

वर्हिर्बर्हकृताकारं मध्यदण्डसमन्वितम् ।
गृह्यतां व्यजनं दुर्गे देहस्वेदापनुत्तये ।।

श्रीदुर्गादेव्यै नमः, तालवृन्तं समर्पयामि ।

समर्पयामि' तक कहकर चवँर, 'ॐ रजता हरिणीः सीसा०' से 'दर्पणं समर्पयामि' तक उच्चारण कर शीशा, 'ॐ इडामग्ने पुरुदꣳ.' से आरम्भ कर 'तालवृन्तं समर्पयामि' तक पढ़कर देवी को पंखा समर्पित करे ।

आर्तिक्यम्

ॐ इदꣳ हविः प्प्रजननं मे ऽअस्तु दशवीरꣳ सर्व्वगणꣳ स्वस्तये । आत्मसनि प्प्रजासनि पशुसनि लोकसन्न्यभयसनि । अग्निः प्प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो ऽअस्म्मासु धत्त । आ रात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्प्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि बृहती वि तिष्ठस ऽआ त्वेषं वर्त्तते तमः ॥

चन्द्रादित्यौ च धरणी विद्युदग्निस्तथैव च ।
त्वमेव सर्वज्योतींषि आर्तिक्यं प्रतिगृह्यताम् ।।
भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, आर्तिक्यं समर्पयामि ।

मन्त्र-पुष्पाञ्जलिः

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्प्रथमान्न्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं

तत्पश्चात् 'ॐ इदꣳ० हविः' से 'आर्तिक्यं समर्पयामि' तक पढ़कर दुर्गा देवी की कपूर से आरती करें।

इसके बाद हाथ में पुष्प लेकर 'ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त०' से

पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायि स्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् । पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया ऽएकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या ऽवसन् गृहे । आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः इति ।

ॐ व्विश्वतश्चक्षुरुत व्विश्वतोमुखो व्विश्वतो- बाहुरुत व्विश्वतस्पात् । सम्बाहुब्भ्यान्धमति सम्पत- त्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव ऽएकः ॥

कात्यायन्यै च विद्महे कन्यकुमारि च धीमहि ।
तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात् ।।

सेवन्तिका-बकुल-चम्पक-पाटला-ऽब्जैः
पुन्नाग-जाति-करवीर-रसाल-पुष्पैः ।
विल्व-प्रवाल-तुलसीदल-मञ्जरीभिः
त्वां पूजयामि जगदीश्वरि ! मे प्रसीद ।।

पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां सर्वदा मातः ! सर्वपापहरा भव ।।

नानासुगन्धयुक्तं च यथाकालोद्भवं तथा ।
मया पुष्पाञ्जलिर्दत्ता गृहाण परमेश्वरि ! ।।

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

आरम्भ कर 'मन्त्र-पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर देवी पर चढ़ावे ।

प्रदक्षिणाम्

ॐ स॒प्ताास्यासन्परि॒धय॒स्त्रिः स॒प्त स॒मिधः॑ कृताः॑ ।
दे॒वा यद्य॒ज्ञं त॑न्वा॒ना ऽअब॑ध्न॒न्पुरु॑षं प॒शुम् ॥
पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति ।
तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥
यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ॥

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

प्रार्थना

एषा भक्त्या तव विरचिता या मया देवि! पूजा
स्वीकृत्यैनां सपदि सकलान् मेऽपराधान् क्षमस्व ।
नूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेतु सद्यः
सानन्दं मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः ॥
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि! विश्वम् ॥

भगवत्यै श्रीदुर्गादेव्यै नमः, प्रार्थनापूर्वक-नमस्कारान् समर्पयामि ।

पुनः 'ॐ सप्तास्यासन्०' से 'प्रदक्षिणां समर्पयामि' तक पढ़कर प्रदक्षिणा (फेरी करे)।

पश्चात् 'एषा भक्त्या तव विरचिता०' से 'प्रार्थनापूर्वक-नमस्कारान् समर्पयामि' तक पढ़कर देवी को प्रार्थना-पूर्वक नमस्कार करे।

अनया पूजया भगवती-श्रीदुर्गादेवी प्रीयताम् ।

इति-आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-कृतायां
दुर्गार्चनपद्धतौ षोडशोपचारदुर्गापूजनं समाप्तम् ।

●

आवरणपूजा

प्रथमावरणम्

वामेन तत्त्वमुद्रया तर्पणम् । दक्षिणेन ज्ञानमुद्रया पूजनम् ।

प्रार्थना

संचिन्मयपरे देवि ! परामृतचरुप्रिये ! ।
अनुज्ञां देहि मे मातः ! परिवारार्चनाय ते ।।

यथा-दक्षिणेना-ऽक्षत-पुष्पादिना पूजयामीति सम्पूज्य, वामकरधृतार्द्रखण्डेन विशेषार्घजलैस्तर्पयाम्येवं सर्वत्र । ह्रीं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे साङ्गायै सपरिवारायै सावरणायै सायुधायै सशक्तिकायै श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यै नमः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं ऐं ह्रीं

तत्पश्चात् 'अनया पूजया भगवती-श्रीदुर्गादेवी प्रीयताम्' कहकर एक आचमनी पृथ्वी पर जल छोड़ दे ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत
'शिवदत्तीहिन्दी' टीका सहित दुर्गार्चनपद्धति में
षोडशोपचार दुर्गापूजन समाप्त ।

●

आवरणपूजा

प्रथमावरण-दाहिने हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर, 'ह्रीं ऐं ह्रीं क्लीं

क्लीं चामुण्डायै विच्चे साङ्गायै सपरिवारायै सावरणायै सायुधायै सशक्तिकायै श्रीमहाकाल्यै नमः, श्रीमहाकाली-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे साङ्गायै सपरिवारायै सावरणायै सायुधायै सशक्तिकायै श्रीमहालक्ष्म्यै नमः, श्रीमहालक्ष्मी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे साङ्गायै सपरिवारायै सावरणायै सायुधायै सशक्तिकायै श्रीमहासरस्वत्यै नमः, श्रीमहासरस्वती-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

बिन्दोः परितो गुरुचतुष्टयं पूजयेत् –

ह्रीं गुरवे नमः, गुरुशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं परमगुरवे नमः, परमगुरुशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं परात्परगुरवे नमः, परात्परगुरुशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं परमेष्ठिगुरवे नमः, परमेष्ठिगुरुशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

षडङ्गं पूजयेत्—ह्रीं ऐं हृदयाय नमः, हृदयशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं शिरसे नमः, शिरःशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्लीं शिखायै नमः, शिखाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं चामुण्डायै कवचाय नमः, कवचशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं विच्चे नेत्रत्रयाय नमः, नेत्रशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। मूलेन अस्त्राय नमः, अस्त्रशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

प्रथमावरणदेवताभ्यो नमः, सर्वोपचारार्थे गन्धं पुष्पं समर्पयामि ।

समान्यार्घजलमादाय—एताः प्रथमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु ।

पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ।।१।।

पुष्पाञ्जलिं दत्वा । अनेन प्रथमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम् । [१]योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति प्रथमावरणम् ।

चामुण्डायै विच्चे' से आरम्भ कर 'प्रथमावरणदेवताभ्यो नमः' तक पढ़कर यन्त्रस्थित दुर्गा की मूर्ति पर चढ़ावे ।

पुनः आचमनी में जल लेकर, 'एताः प्रथमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कह कर जल छोड़ जल दे ।

पुनः पुष्प लेकर 'अभीष्टसिद्धिं०' से 'प्रथमावरणार्चनम्' तक पढ़कर मूर्ति पर चढ़ा दे ।

पश्चात् एक आचमनी जल लेकर 'अनेन प्रथमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर जल छोड़ दे और योनिमुद्रा से प्रणाम करे ।

इस प्रकार प्रथमावरण समाप्त ।

---

१. मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके ।
अनामिकोर्द्ध्व-संश्लिष्टे दीर्घमध्यमयोरथ ॥
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यसेद् योनिमुद्रेयमीरिता ॥ (मन्त्र म०, पू० ख०, प्र० त०)

द्वितीयावरणम्

त्रिकोणे स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन पूजयेत्—ह्रीं सावित्र्या सह विधात्रे नमः, विधातृशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं श्रिया सह विष्णवे नमः, विष्णुशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं उमया सह शिवाय नमः, शिवशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्ष्रुं सिंहाय नमः, सिंहशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं हुं महिषाय नमः, महिषशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

द्वितीयावरणदेवताभ्यो नमः, गन्धं पुष्पं च समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय, एताः द्वितीयावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु।

पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले!।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्।।२।।

द्वितीयावरण- उपर्युक्त प्रकार से हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर 'ह्रीं सावित्र्या सह विधात्रे नमः' से लेकर 'द्वितीयावरणदेवताभ्यो नमः' पर्यन्त पढ़कर यन्त्र पर चढ़ा दे।

पश्चात् आचमनी में जल लेकर, 'एताः द्वितीयावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' पढ़कर जल छोड़ दे।

पुनः पुष्प लेकर 'अभिष्टसिद्धिं' से 'द्वितीयावरणार्चनम्' पर्यन्त पढ़कर मूर्ति पर चढ़ा दे। पुनः एक आचमनी जल लेकर

पुष्पाञ्जलिं दत्वा । अनेन द्वितीयावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम् । योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति द्वितीयावरणम् ।

तृतीयावरणम्

षट्कोणेऽग्नीशासुरवायव्ये मध्ये दिक्षु च पूजयेत्— ह्रीं ऐं नन्दजायै नमः, नन्दजाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं रक्तदन्तिकायै नमः, रक्तदन्तिका-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं क्लीं शाकम्भर्यै नमः, शाकम्बरीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं दुं दुर्गायै नमः, दुर्गाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं हुं भीमायै नमः, भीमाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं भ्रामर्यै नमः, भ्रामरीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । तृतीयावरण-देवताभ्यो नमः, गन्धं पुष्पं समर्पयामि ।

सामान्यार्घजलमादाय, एतास्तृतीयावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु ।

'अनेन द्वितीयावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर जल छोड़ दे, तथा योनिमुद्रा द्वारा प्रणाम करे ।

इस प्रकार द्वितीयावरण समाप्त ।

तृतीयावरण- हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर 'ह्रीं ऐं नन्दजायै०' से लेकर 'तृतीयावरणदेवताभ्यो नमः' तक पढ़कर यन्त्र पर चढ़ावे । पुनः आचमनी में जल लेकर, 'एतास्तृतीयावरणदेवताः साङ्गाः

पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।

भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ।। ३ ।।

पुष्पाञ्जलिं दत्वा । अनेन तृतीयावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम् । योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति तृतीयावरणम् ।

चतुर्थावरणम्

ततोऽष्टपत्रे स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन पूजयेत् –

ह्रीं ऐं ब्राह्म्यै नमः, ब्राह्मीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं माहेश्वर्यै नमः, माहेश्वरीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं क्लीं कौमार्यै नमः, कौमारी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं वैष्णव्यै नमः, वैष्णवी-शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । ह्रीं लृं वाराह्यै नमः, वाराहीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि ।

सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर जल छोड़ दे। पुनः पुष्प लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' से 'तृतीयावरणार्चनम्' तक पढ़कर मूर्ति पर अर्पित कर दे।

पश्चात् एक आचमनी जल लेकर 'अनेन तृतीयावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर जल छोड़ दे और योनिमुद्रा से प्रणाम करे।

इस प्रकार तृतीयावरण समाप्त।

चतुर्थावरण- हाथ में अक्षत और फूल लेकर 'ह्रीं ऐं ब्राह्म्यै नमः' से लेकर 'चतुर्थावरणदेवताभ्यो नमः, गन्धं पुष्पं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर मूर्ति पर चढ़ावे।

ह्रीं क्ष्रौं नारसिंह्यै नमः, नारसिंहीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं लं ऐन्द्र्यै नमः, ऐन्द्रीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं स्त्र्यैं चामुण्डायै नमः, चामुण्डाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

मध्ये-ह्रीं लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

चतुर्थावरणदेवताभ्यो नमः, गन्धं पुष्पं समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय–एताश्चतुर्थावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु।

पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्॥४॥

पुष्पाञ्जलिं दत्वा। अनेन चतुर्थावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्। योनिमुद्रया प्रणमेत्।

इति चतुर्थावरणम्।

पश्चात् जल लेकर, 'एताश्चतुर्थावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' पढ़कर जल छोड़ दे।

पश्चात् पुष्प लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' से 'चतुर्थावरणार्चनम्' तक पढ़कर पुष्प चढ़ावे। पुनः एक आचमनी जल लेकर 'अनेन चतुर्थावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर छोड़ दे और योनिमुद्रा से प्रणाम करे।

इस प्रकार चतुर्थावरण समाप्त।

पञ्चमावरणम्

ततश्चतुर्विंशतिदले स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन—ह्रीं विं विष्णुमायायै नमः, विष्णुमायाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं चें चेतनायै नमः, चेतनाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं बुं बुद्ध्यै नमः, बुद्धिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं निं निद्रायै नमः, निद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्षुं क्षुधायै नमः, क्षुधाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं छां छायायै नमः, छायाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं शं शक्त्यै नमः, शक्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं तृं तृष्णायै नमः, तृष्णाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्षां क्षान्त्यै नमः, क्षान्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं जां जात्यै नमः, जातिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं लं लज्जायै नमः, लज्जाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं शां शान्त्यै नमः, शान्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं श्रं श्रद्धायै नमः, श्रद्धाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं कां कान्त्यै नमः, कान्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं लं लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं धृं धृत्यै नमः, धृतिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं वृं वृत्त्यै

पंचमावरण- अक्षत और पुष्प लेकर 'ह्रीं विं विष्णुमायायै नमः'

नमः, वृत्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं श्रुं श्रुत्यै नमः, श्रुतिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं स्मृं स्मृत्यै नमः, स्मृतिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं दं दयायै नमः, दयाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं तुं तुष्ट्यै नमस्तुष्टिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं पुं पुष्ट्यै नमः, पुष्टिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं मां मातृभ्यो नमः, मातृशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं भ्रां भ्रान्त्यै नमः, भ्रान्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

पञ्चमावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि। सामान्यार्घजलमादाय, एताः पञ्चमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु। पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम्॥५॥

पुष्पाञ्जलिं दत्वा। अनेन पञ्चमावरणदेवतापूजनेन

से लेकर 'पंचमावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि' तक पढ़कर यन्त्र पर चढ़ा दे।

पश्चात् जल लेकर, 'एताः पञ्चमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर जल छोड़ दे।

पुनः फूल लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' से आरम्भ कर 'पञ्चमावरणार्चनम्' पर्यन्त पढ़कर पुष्प अर्पण करे।

त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्। योनिमुद्रया प्रणमेत्।

इति पञ्चमावरणम्।

षष्ठावरणम्

भूपुरे कोणचतुष्टये आग्नेयादिकोणमारभ्य—ह्रीं गं गणपतये नमः गणपतिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नमः, क्षेत्रपालशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं बं बटुकाय नमः, बटुकशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं यां योगिन्यै नमः, योगिनीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। षष्ठावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय, एताः षष्ठावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु।

तदनन्तर एक आचमनी जल लेकर 'अनेन पंचमावरणदेवता-अनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर जल छोड़ दे और योनिमुद्रा से प्रणाम करे।

इस प्रकार पञ्चमावरण समाप्त।

षष्ठावरण- हाथ में अक्षत और फूल लेकर 'ह्रीं गं गणपतये नमः' से आरम्भ कर 'षष्ठावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर यन्त्र पर चढ़ावे।

पश्चात् एक आचमनी में जल लेकर, 'एताः षष्ठावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' पढ़कर जल गिरा दे।

पुष्पाञ्जलिमादाय,
अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं षष्ठावरणार्चनम् ।।६।।

पुष्पाञ्जलिं दत्वा। अनेन षष्ठावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्। योनिमुद्रया प्रणमेत्।

इति षष्ठावरणम्।

सप्तमावरणम्

पूर्वादिदशदिक्षु—ह्रीं लं इन्द्राय नमः इन्द्रशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं रं अग्नये नमः अग्निशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं यं यमाय नमः यमशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं क्षं निर्ऋतये नमः निर्ऋतिशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं वं वरुणाय नमः वरुण-शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं यं वायवे नमः वायुशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं सं सोमाय नमः

फिर हाथ में पुष्प लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' श्लोक पढ़कर मूर्ति पर चढ़ा दें।

इस प्रकार पुष्पाञ्जलि दे एक आचमनी जल लेकर 'अनेन षष्ठावरणदेवता-पूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' कहकर जल छोड़ दे और योनिमुद्रा से प्रणाम करे।

इस प्रकार षष्ठावरण-पूजन समाप्त।

सप्तमावरण- हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर 'ह्रीं लं इन्द्राय नमः०'

सोमशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं हं ईशानाय नमः ईशानशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं ब्रं ब्रह्मणे नमः ब्रह्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं अनन्ताय नमः अनन्तशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। सप्तमावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय, एताः सप्तमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु। पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं सप्तमावरणार्चनम्॥७॥

पुष्पाञ्जलिं दत्वा। अनेन सप्तमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादिवता प्रीयताम्। योनिमुद्रया प्रणमेत्।

इति सप्तमावरणम्।

से प्रारम्भ कर 'सप्तमावरणदेवताभ्यो नमः, गन्धं पुष्पं समर्पयामि' तक पढ़कर यन्त्र पर चढ़ा दे।

तत्पश्चात् आचमनी में जल लेकर, 'एताः सप्तमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर जल छोड़ दे। पुनः पुष्प लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' से 'सप्तमावरणार्चनम्' तक पढ़कर मूर्ति पर रख दे। इस प्रकार पुष्पाञ्जलि देकर, एक आचमनी जल लेकर 'अनेन सप्तमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' पढ़कर जल गिरा दे एवं योनिमुद्रा से हाथ जोड़कर प्रणाम करे।

इस प्रकार सप्तमावरण समाप्त।

अष्टमावरणम्

तद्बहिः पूर्वादिदिषु-ह्रीं वं वज्राय नमः वज्रशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं शं शक्त्यै नमः शक्तिशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं दं दण्डाय नमः दण्डशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं खं खड्गाय नमः खड्गशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं पां पाशाय नमः पाशशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं अं अङ्कुशाय नमः अङ्कुशशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं गं गदायै नमः गदाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं त्रिं त्रिशूलाय नमः त्रिशूलशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं पं पद्माय नमः पद्म-शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। ह्रीं चं चक्राय नमः चक्रशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। अष्टमावरण-देवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय-एता अष्टमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु। पुष्पाञ्जलिमादाय,

---

अष्टमावरण- हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर 'ह्रीं वं वज्राय नमः०' से लेकर 'अष्टमावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि' तक पढ़कर मूर्ति पर चढ़ा दे। पुनः जल लेकर, 'एताः अष्टमावरण-देवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' पढ़कर जल गिरा दे।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमष्टमावरणार्चनम् ।।

पुष्पाञ्जलिं दत्वा । अनेनाऽष्टमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम् । योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति अष्टमावरणम् ।

नवमावरणम्

कलशात् पूर्वादिदिक्षु-ह्रीं वज्रहस्तायै गजारूढायै कादम्बरीदेव्यै नमः कादम्बरीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । शक्तिहस्तायै अजवाहनायै उल्कादेव्यै नमः उल्कादेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । दण्डहस्तायै महिषारूढायै करालीदेव्यै नमः करालीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । खड्गहस्तायै शववाहनायै रक्ताक्षीदेव्यै नमः रक्ताक्षीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । पाशहस्तायै मकरवाहनायै श्वेताक्षीदेव्यै नमः श्वेताक्षीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । अङ्कुशहस्तायै मृगवाहनायै हरिताक्षीदेव्यै नमः हरिताक्षीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि । गदाहस्तायै सिंहारूढायै यक्षिणीदेव्यै

पुनः हाथ में फूल लेकर 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले०' श्लोक पढ़कर मूर्ति पर चढ़ा दे ।

पश्चात् हाथ में जल लेकर, 'अनेनाऽष्टमावरणदेवतापूजनेन त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' पढ़कर जल गिरा दे तथा योनिमुद्रा दिखाकर प्रणाम करे ।

इस प्रकार अष्टमावरण समाप्त ।

नमः यक्षिणीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। शूलहस्तायै वृषभवाहनायै कालीदेव्यै नमः कालीदेवी-शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। पद्महस्तायै हंस-वाहनायै सुरज्येष्ठादेव्यै नमः सुरज्येष्ठादेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि। चक्रहस्तायै सर्पवाहनायै सर्पराज्ञीदेव्यै नमः सर्पराज्ञीदेवी-शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि।

नवमावरणदेवताभ्यो नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि।

सामान्यार्घजलमादाय, एताः नवमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु।

पुष्पाञ्जलिमादाय,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं नवमावरणार्चनम्॥

पुष्पाञ्जलिं दत्वा। अनेन नवमावरणदेवतापूजनेन

नवमावरण- हाथ में अक्षत और पुष्प लेकर कलशा से पूर्वादि दिशाओं में - 'ह्रीं वज्रहस्तायै गजारूढायै०' से लेकर 'गन्धं पुष्पं समर्पयामि' तक पढ़कर यन्त्रस्थित दुर्गा प्रतिमा पर चढ़ावे।

पुनः आचमनी में जल लेकर, 'एताः नवमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु' पढ़कर जल छोड़ दे।

पुनः हाथ में फूल लेकर, 'अभिष्टसिद्धिं मे देहि०' से 'नवमावरणार्चनम्' तक पढ़कर मूर्ति पर अर्पित कर दे।

पश्चात् एक आचमनी जल लेकर 'अनेन नवमावरणदेवतापूजनेन

त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम् । योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति नवमावरणम् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ आवरणपूजा समाप्ता ।

●

अखण्डदीपपूजनम्

सुप्रकाशो महादीप्तः सर्वतस्तिमिरापहः ।
स-बाह्याभ्यन्तर-ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ अग्निर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्य्यो ज्योतिर्ज्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा । अग्निर्व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा । ज्ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्ज्योतिः स्वाहा ।।

दीपस्थदेवताभ्यो नमः, सर्वोपचारार्थे गन्धा-ऽक्षत-पुष्पाणि समर्पयामि । इति सम्पूज्य, प्रार्थयेत् ।

दीप-प्रार्थना

भो दीप ! देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ।
यावत् कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव ।।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ अखण्डदीपपूजनम् ।

त्रिगुणात्मिका श्रीदुर्गादेवता प्रीयताम्' पढ़कर जल गिरा दे, एवं योनिमुद्रा द्वारा देवी को प्रणाम करे।

इस प्रकार नवमावरण समाप्त।

अखण्डदीपपूजन-'सुप्रकाशो महादीप:०' श्लोक तथा 'ॐ अग्नि-ज्योंतिर्ज्योतिरग्नि०' मन्त्र एवं 'दीपस्थदेवताभ्यो नम:' से 'समर्पयामि'

धान्यकलशस्थापनम्

मृत्तिकामध्ये यवं प्रक्षिप्य, मृत्तिकाघटं सर्वतोभद्र-मण्डलाग्रेऽखण्डदीपमध्ये च 'मही द्यौ'रित्यादि-मन्त्रेण कलश-पूजनोक्तविधिना स्थापयेत्।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ धान्यकलशस्थापनम्।

बलिदानम्

'नारिकेलबलये नमः' इत्यनेन पञ्चोपचारैः नारिकेलं सम्पूज्य, देव्याः पुरतः नारिकेलबलिं तुभ्यं समर्पयामि' इत्युक्त्वा, नवार्णमन्त्रेण वीरासनमुद्रया एकहस्तेन एकवारमेव बलिं स्फोटयित्वा देव्यै निवेदयेत्।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ बलिदानं समाप्तम्।

तक पढ़कर चन्दन, अक्षत एवं पुष्प समर्पित करे। पश्चात् 'भो दीप! देवरूपस्त्व०' श्लोक पढ़कर दीप की प्रार्थना करें।

इस प्रकार अखण्डदीपपूजन समाप्त।

धान्यकलशस्थापन-अखण्ड दीप के मध्य, चौकी के आगे मिट्टी बिछाकर, उस पर जौ छिड़ककर, मृत्तिका-कलश 'मही द्यौः पृथिवी च न०' इत्यादि मन्त्र द्वारा कलशपूजन विधि से स्थापित करे।

इस प्रकार दुर्गार्चनपद्धति में धान्यकलशस्थापन समाप्त।

बलिदान-'नारिकेलबलये नमः' पढ़कर पंचोपचार से नारिकेल (नारियल) की पूजा कर, देवी के आगे 'नारिकेलबलिं तुभ्यं समपर्यामि' कहकर, नवार्ण मन्त्र (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) से वीरासन

बटुक-कुमारिका-पूजनम्

हस्ते-ऽक्षत-पुष्पाणि गृहीत्वा,

कर-कलित-कपालः कुण्डली-दण्डपाणि-
स्तरुण-तिमिरनील-व्यालयज्ञोपवीती ।
क्रतुसमय-सपर्याद् विघ्नविच्छेदहेतु-
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ।।

इति श्लोकं पठित्वा, 'बं बटुकाय नमः' इत्यनेन बटुकम्,

मन्त्राक्षरमयीं देवीं मातॄणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ।।

'कुमार्यै नमः' इत्यनेन कुमारीं च सम्पूज्य, तयोर्भाले तिलकं कृत्वा, मिष्टान्न-दक्षिणां च दत्वा प्रणमेत् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ बटुककुमारिकापूजनम् ।

(दोनों घुटने जमीन पर टेक) मुद्रा द्वारा एक हाथ से एक बार में ही नारियल को फोड़कर देवी को समर्पित करे ।

इस प्रकार बलिदान समाप्त ।

बटुक-कुमारिका-पूजन— दाहिने हाथ में अक्षत और फूल लेकर, 'करकलित-कपालः०' श्लोक पढ़कर 'बं बटुकाय नमः' से बटुक, 'मन्त्राक्षरमयीं०' तथा 'कुमार्यै नमः' से कुमारी की पूजा कर, दोनों के मस्तक में तिलक लगाकर, मीठा और दक्षिणा अर्पण कर प्रणाम करें ।

इस प्रकार बटुक-कुमारिका-पूजन समाप्त ।

ब्राह्मणपूजनम्

'ब्रह्मणे नमः' इत्युक्त्वा पाठकर्तृकाणां ब्राह्मणानां गन्धा-ऽक्षत-पुष्पादिभिः पूजनं कुर्यात् ।

सरस्वतीपूजनम्

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती ।
यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥

इत्यनेन दुर्गासप्तशती-पुस्तक-पूजनं गन्धा-ऽक्षत-पुष्पैः कुर्यात् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ सरस्वतीपूजनम् ।

तत्पश्चात् दुर्गासप्तशती-पाठं कुर्यात् ।

●

ब्राह्मणपूजन—'ब्रह्मणे नमः' कहकर पाठ करने वाले सभी ब्राह्मणों को गन्ध (रोली), अक्षत एवं पुष्प से पूजन करे ।

सरस्वतीपूजन—'पावका नः सरस्वती०' मन्त्र तथा 'नमो देव्यै०' श्लोक पढ़कर दुर्गासप्तशती पुस्तक की पूजा चन्दन, अक्षत और पुष्प से करे ।

इसके बाद दुर्गासप्तशती का पाठ करे ।

इस प्रकार सरस्वतीपूजन समाप्त ।

●

दुर्गासप्तशती

'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्या-सहिता



दुर्गा.प.-१२

श्री दुर्गादेव्यै नमः



विद्युद्दाम-समप्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशाखांश्चापं गुणं तर्जनीं
विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुल-जन-प्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि ! विश्वम् ॥



दुर्गासप्तशती-पाठविधिः

तत्राऽऽदौ आचमन-प्राणायामपूर्वकं सङ्कल्पं कुर्यात्।

हस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय, ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याऽद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूदीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे पुण्यप्रदेशे (अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे, आनन्दवने महाश्मशाने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमभागे) विक्रमशके बौद्धावतारे अमुकनाम-संवत्सरे-श्रीसूर्ये अमुकायने अमुकऋतौ महामाङ्गल्यप्रद-मासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा-राशिस्थान-स्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगण-विशेषण-विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम आत्मनः श्रुति-स्मृति-पुराणोक्तफल-प्राप्त्यर्थम् अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्माऽहम् (अमुकगोत्रस्य सपत्नीकस्य यजमानस्य) आयुरारोग्यैश्वर्याऽभिवृद्ध्यर्थं पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्तति-वृद्धि-स्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजय-सदभीष्ट-सिद्ध्यर्थं श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-

---

पाठविधि–सर्वप्रथम आचमन-प्राणायाम कर, हाथ में जल, अक्षत,

त्रिगुणात्मिका-पराम्बाजगदम्बाप्रीत्यर्थं च 'मार्कण्डेय उवाच' इत्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं सप्तशतीपाठं (अमुकमन्त्रेण प्रतिमन्त्रसम्पुटितं) तत्राऽऽदौ कवचाऽर्गला-कीलकमाद्यन्तयोर्नवार्णमन्त्रजपपुरस्सरं क्रमेण रात्रिसूक्त-देवी-सूक्तपठनमन्ते रहस्यत्रयपठनं च करिष्ये।

ब्रह्मादि-शाप-विमोचनम्

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीचण्डिकाया ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशाप-विमोचन-मन्त्रस्य वसिष्ठ-नारद-संवाद-सामवेदाधिपतिब्रह्माण ऋषयः सर्वैश्वर्यकारिणी श्रीदुर्गादेवता चरित्रत्रयं बीजं ह्रीं शक्तिः, त्रिगुणात्मस्वरूपचण्डिकाशाप-विमुक्तौ मम सङ्कल्पितकार्य-सिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः। पाठः—

ॐ (ह्रीं) रीं रेतःस्वरूपिण्यै मधुकैटभमर्दिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥१॥ ॐ श्रीं बुद्धि-स्वरूपिण्यै महिषासुरसैन्यनाशिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥२॥ ॐ रं रक्तस्वरूपिण्यै महिषासुर-मर्दिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥३॥ ॐ क्षुं क्षुधास्वरूपिण्यै देववन्दितायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्र-शापाद् विमुक्ताभव ॥४॥ ॐ छां छायास्वरूपिण्यै दूत-संवादिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥५॥

पुष्प एवं द्रव्य लेकर, 'ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः०' से 'रहस्यत्रय-पठनं च करिष्ये' तक पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

ब्रह्मादिशापविमोचन-विनियोग- तत्पश्चात् हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य चण्डिकाया०' से आरम्भ कर 'जपे विनियोगः' पर्यन्त पढ़कर जल छोड़ दे।

ॐ शं शक्तिस्वरूपिण्यै धूम्रलोचन-घातिन्यै ब्रह्मवसिष्ठ-विश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव।६।। ॐ तृं तृषा-स्वरूपिण्यै चण्डमुण्डवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।७।। ॐ क्षां क्षान्तिस्वरूपिण्यै रक्तबीज-वधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।८।। ॐ जां जातिस्वरूपिण्यै निशुम्भवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठ विश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव।।९।। ॐ लं लज्जा-स्वरूपिण्यै शुम्भवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१०।। ॐ शां शान्तिस्वरूपिण्यै देवस्तुत्यै ब्रह्म-वसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।११।। ॐ श्रं श्रद्धास्वरूपिण्यै सकलफलदात्र्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव।।१२।। ॐ कां कान्तिस्वरूपिण्यै राजवरप्रदायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१३।। ॐ मां मातृस्वरूपिण्यै अनर्गलमहिमसहितायै ब्रह्मवसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१४।। ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सं सर्वैश्वर्यकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१५।। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्यकवचस्वरूपिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१६।। ॐ क्रीं काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेदस्वरूपिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।।१७।। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महाकालीमहालक्ष्मीमहा-सरस्वतीस्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गादेव्यै नमः।।१८।।

तदनन्तर 'ॐ (ह्रीं) रीं रेतःस्वरूपिण्यै० ॥१॥' से लेकर 'दुर्गादैव्यै नमः ॥१८॥' तक पाठ करें।

फलश्रुतिः

इत्येवं हि महामन्त्रान् पठित्वा परमेश्वर! ।
चण्डीपाठं दिवा रात्रौ कुर्यादेव न संशयः ।।१९।।
एवं मन्त्र न जानाति चण्डीपाठं करोति यः ।
आत्मानं चैव दातारं क्षीणं कुर्यान्न संशयः ।।२०।।

इति रुद्रयामले ब्रह्मादि-शापविमोचनं समाप्तम् ।

●

सिद्ध-कुञ्जिका-स्तोत्रम्

शिव उवाच

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् ।
येन मन्त्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत् ।।१।।
न कवचं नाऽर्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् ।
न सूक्तं नाऽपि ध्यानं च न न्यासो न च वाऽर्चनम् ।।२।।

फलश्रुति-पार्वती ने शंकर जी से कहा-हे परमेश्वर! इस प्रकार इन महामन्त्रों को पढ़कर दिन एवं रात्रि में सप्तशती-पाठ करे ।।१९।। यदि जो साधक इन महामन्त्रों का पाठ न कर सप्तशती पाठ करता है वह निःसन्देह अपना एवं यजमान का नाश करता है ।।२०।।

कुञ्जिका-स्तोत्र

भगवान् शंकर ने पार्वती से कहा-हे देवि! मैं इस उत्तम कुंञ्जिका-स्तोत्र का वर्णन करता हूँ। जिस कुञ्जिका मन्त्र के प्रभाव से ही चण्डी (दुर्गा) पाठ का पूर्ण फल प्राप्त होता है ।।१।। कवच, अर्गला, कीलक और तीनों रहस्य–देवीसूक्त, रात्रिसूक्त, प्रथम, मध्यम, उत्तम चरित्र के ध्यान, न्यास, पूजन आदि जो कि दुर्गासप्तशतीपाठ

कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत्।
अति गुह्यतरं देवि! देवानामपि दुर्लभम्॥३॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति!।
मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम्।
पाठमात्रेण संसिद्ध्येत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम्॥४॥

मन्त्रः- ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा। इति मन्त्रः

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि।
नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि॥१॥
नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि॥२॥

के लिए अत्यावश्यक है, ये सभी केवल कुञ्जिका स्तोत्र के पाठ मात्र से ही दुर्गासप्तशती पाठ का फल प्राप्त होता है। हे देवि! यह कुञ्जिका स्तोत्र अत्यन्त गोपनीय एवं देवताओं के लिए भी दुर्लभ है॥२-३॥ अतः हे पार्वती! अपने गुप्तांग के समान इसे गुप्त ही रखना चाहिए। इस कुञ्जिकास्तोत्र के पाठ मात्र से ही मारण, मोहन, वशीकरण, स्तम्भन तथा उच्चाटन आदि सभी कार्य सिद्ध होते हैं॥४॥

मन्त्र-'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे०' से लेकर 'हं सं लं क्षं फट् स्वाहा' तक कुञ्जिका मन्त्र है।

शिवस्वरूपिणी, मधु-कैटभनाशिनी, महिषासुरघातिनी और शुम्भ-निशुम्भ नामक दैत्य को नष्ट करनेवाली आपको नमस्कार

जाग्रतं हि महादेवि! जपं सिद्धं कुरुष्व मे।
ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका ॥३॥
क्लींकारी कामरूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते।
चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी ॥४॥
विच्चे चाऽभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणी ॥५॥
धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि! शां शीं शूं मे शुभं कुरु ॥६॥
हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ॥७॥
अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ॥

है ॥१-२॥ हे महादेवी! आप मेरे जप को सिद्ध करें। आप ऐं रूप से जगत् की उत्पत्ति, ह्रीं रूप से पालन, क्लीं रूप से संहार करने वाली, चामुण्डा रूप से चण्ड-मुण्ड नामक दैत्य का वध करने वाली, यै स्वरूप से भक्तों को अभीष्ट वर देने वाली तथा विच्चे रूप से अभय प्रदान करने वाली, नवार्ण मन्त्र स्वरूपवाली हे जगदम्बा! आपको नमस्कार है ॥३-५॥

धां धीं धूं स्वरूप धूर्जटी (शंकर) की पत्नी, वां वीं वूं स्वरूप वाग् (वाणी) की अधीश्वरी सरस्वती, क्रां क्रीं क्रूं रूपिणी कालिका, शां शीं शूं स्वरूपिणी शान्ति देवी, मेरा कल्याण करें ॥६॥

हुं हुं स्वरूपवाली हुंकाररूपिणी देवी, जं जं जं रूपिणी जम्भनादिनी देवी तथा भ्रां भ्रीं भ्रूं स्वरूपवाली भैरवी, भद्रा तथा भवानी आपको बारम्बार नमस्कार है ॥७॥ 'अं कं चं टं तं०' से

पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ।
सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्र सिद्धिं कुरुष्व मे ।।८।।
इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे ।
अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ! ।।९।।
यस्तु कुञ्जिकया देवि ! हीनां सप्तशतीं पठेत् ।
न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा ।।१०।।

इति रुद्रयामलस्थ-गौरीतन्त्रे शिव-पार्वती-संवादे
कुञ्जिकास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

•

दुर्गाकवचम्

विनियोगः- ॐ अस्य श्री चण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप्

'कुरु कुरु स्वाहा' तक पाठ करे। पां पीं पूं स्वरूपिणी पार्वती, पूर्णा, खां खीं खूं रूपिणी खेचरी तथा सां सीं सूं स्वरूपवाली दुर्गासप्तशती के समस्त मन्त्रों की सिद्धि हे देवि ! मुझे प्राप्त हो ।।८।।

फलश्रुति—इस कुञ्जिकास्तोत्र के पाठ मात्र से ही दुर्गासप्तशती के समस्त मन्त्र सिद्ध होते हैं। हे पार्वती ! इस गुप्त स्तोत्र का रहस्य नास्तिक अर्थात् शास्त्र में अश्रद्धालु जनों के लिए नहीं बताना चाहिए ।।९।। हे देवि ! जो इस कुञ्जिकास्तोत्र के पाठ बिना दुर्गासप्तशती का पाठ करता है, उसे अरण्य (जंगल) में रोदन के समान सिद्धि प्राप्त नहीं होती अर्थात् उसका सप्तशती पाठ व्यर्थ होता है ।।१०।।

इस प्रकार रुद्रयामल-स्थित गौरीतन्त्रोक्त शिव-पार्वती
संवादरूप कुञ्जिकास्तोत्र समाप्त ।

•

विनियोग— दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीचण्डी-

छन्दः, चामुण्डा देवता, अङ्गन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बन्ध-देवता-स्तत्त्वम्, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थे सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः[१] । ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद् गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥१॥

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥२॥
प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥३॥

कवचस्य०' से 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे ।

मार्कण्डेय जी कहा-हे पितामह ! जो साधन संसार में अत्यन्त गोपनीय है, जिससे मनुष्यमात्र की रक्षा होती है, तथा आपने अब तक जिसे किसी से भी प्रकट नहीं किया है, वह साधन मुझे बताइए ॥१॥

ब्रह्मा जी ने कहा-हे ऋषिश्रेष्ठ ! सम्पूर्ण प्राणियों का कल्याण करने वाला देवी का कवच (रक्षा के लिए पहने जाने वाले एक विशेष प्रकार के पहनावे को कवच कहते हैं। इसी तरह यह स्तोत्र भी है, इसके पाठ से साधक सर्वथा सुरक्षित रहता है।) अत्यन्त गोपनीय है, हे महामुने ! उसे सुनिये ॥२॥

हे मुने ! दुर्गा की नव शक्तियाँ हैं–पहली शक्ति का नाम शैलपुत्री

१. न्यासो ध्याना-ऽऽवाहने च नाम - सूक्तानि चाप्यनु ।
दलं च हृदयं चैव कवचा - ऽर्गल - कीलकम् ॥
दशाङ्गमेतद् विज्ञेयमिति गुह्यं सनातनम् ।
दशाङ्गानि च जप्त्वा तु पश्चात् सप्तशतीं पठेत् ॥

पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ।।४।।
नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना: ।।५।।
अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे ।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ।।६।।
न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसङ्कटे ।
नापदं तस्य पश्यामि शोक-दुःख-भयं न हि ।।७।।

(हिमालय-कन्या पार्वती) है, दूसरी शक्ति का नाम ब्रह्मचारिणी (परब्रह्म परमात्मा को साक्षात् कराने वाली), तीसरी शक्ति चन्द्रघण्टा (चन्द्रमा जिसकी घण्टा में हों) है। चौथी शक्ति कूष्माण्डा (सारा संसार जिसके उदर में निवास करता हो) हैं ॥३॥ पाँचवीं शक्ति स्कन्दमाता (कार्तिकेय की जननी) हैं। छठीं शक्ति कात्यायनी (महर्षि कात्यायन के अप्रतिभ तेज से उत्पन्न होने वाली) हैं, सातवीं शक्ति कालरात्रि (समस्त सृष्टि का संहार करने वाली) तथा आठवीं शक्ति महागौरी (शिव के महाकाली कहने पर क्रोध से जिन्होंने तपस्या कर ब्रह्मदेव से गौर वर्ण का वरदान लेनेवाली) हैं ॥४॥ नवीं शक्ति सिद्धिदात्री (समस्त जगत् को १. अणिमा, २. लघिमा, ३. प्राप्ति, ४. प्राकाम्य, ५. महिमा, ६. ईशित्व, ७. वशित्व, ८. कामा-वसायिता इन आठ रूपों से सिद्धि देनेवाली) हैं। ये नव दुर्गा कही गयी हैं। ये शक्तियाँ सर्वज्ञ ब्रह्मदेव (वेद) द्वारा कही गयी हैं ॥५॥

जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, युद्ध-भूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, तथा अत्यन्त कठिन विपत्ति में फँस गया हो, वह यदि भगवती दुर्गा के शरण का आश्रय ले ले, तो उसका कभी युद्ध

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते ।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः ।।८।।
प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ।
ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना ।।९।।
माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ।
लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ।।१०।।
श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना ।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरण-भूषिता ।।११।।
इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ।
नानाभरण-शोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ।।१२।।

या संकट में कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता, उसे कोई विपत्ति घेर नहीं सकती और न उसे शोक, दुःख तथा भय की प्राप्ति ही हो सकती है ।।६-७।।

जो लोग भक्तिपूर्वक भगवती का स्मरण करते हैं, उनका अभ्युदय होता रहता है। हे भगवती ! जो लोग तुम्हारा स्मरण करते हैं, निश्चय ही तुम उनकी रक्षा करती हो ।।८।। प्रथम चामुण्डा (चण्ड-मुण्ड का विनाश करने वाली) देवी प्रेत के वाहन पर निवास करती हैं, वाराही महिष के आसन पर रहती हैं, ऐन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है, वैष्णवी का वाहन गरुड़ है ।।९।। माहेश्वरी बैल के वाहन पर तथा कौमारी मोर के आसन पर विराजमान हैं। श्री विष्णुपत्नी–भगवती लक्ष्मी के हाथों में कमल है तथा वे कमल के आसन पर निवास भी करती हैं ।।१०।। श्वेतवर्ण वाली ईश्वरी वृष (बैल) पर सवार हैं, भगवती ब्रह्माणी (सरस्वती) सम्पूर्ण आभूषणों से युक्त हैं तथा वे हंसासन पर विराजमान रहती हैं ।।११।। अनेक

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ।
शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ।।१३।।
खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ।
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ।।१४।।
दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ।।१५।।
नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोर-पराक्रमे ।
महाबले महोत्साहे महाभय-विनाशिनि ।।१६।।
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि ।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ।।१७।।

आभूषण तथा रत्नों से देदीप्यमान उपर्युक्त सभी देवियाँ सभी योग-शक्तियों से युक्त हैं ।।१२।।

इनके अतिरिक्त और भी देवियाँ हैं, जो दैत्यों के विनाश के लिए तथा भक्त-जनों की रक्षा के लिए क्रोधयुक्त होकर रथ में सवार रहती हैं तथा इनके हाथों में शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल, मुसल, खेटक, तोमर, परशु (फरसा), पाश (शत्रुओं को बाँधने वाला विशेष प्रकार का अस्त्र), भाला, त्रिशूल तथा उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र विराजमान हैं। देवताओं की रक्षा करना ही एक मात्र उनके अस्त्र-शस्त्र धारण का उद्देश्य है ।।१३-१५।।

महाभय का विनाश करने वाली, महान् बल, महाघोर पराक्रम तथा महान् उत्साह से सुसम्पन्न हे महारौद्रे ! (महारुद्र की शक्ति) तुम्हें नमस्कार है ।।१६।। हे शत्रुओं का भय बढ़ाने वाली देवि ! तुम मेरी रक्षा करो। दुर्धर्ष तेज के कारण मैं, तुम्हारी ओर देख भी नहीं सकता। ऐन्द्री शक्ति पूर्व दिशा में मेरी रक्षा करे तथा

दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ।।१८।।
उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी ।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ।।१९।।
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना ।
जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ।।२०।।
अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ।
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ।।२१।।
मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी ।
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ।।२२।।
शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी ।
कपोलौ कालिका रक्षेत् कर्णमूले तु शाङ्करी ।।२३।।

अग्नि देवता की आग्नेयी शक्ति अग्निकोण में हमारी रक्षा करें ।।१७।। वाराही शक्ति दक्षिणदिशा में, खड्गधारिणी नैर्ऋत्य कोण में, वारुणी शक्ति पश्चिम दिशा में तथा मृग के ऊपर सवार रहने वाली शक्ति वायव्य कोण में हमारी रक्षा करें ।।१८।। भगवान् कार्तिकेय की शक्ति कौमारी उत्तरदिशा में, शूल धारण करने वाली ईश्वरी शक्ति ईशान कोण में, ब्रह्माणी ऊपर तथा वैष्णवी शक्ति नीचे हमारी रक्षा करें ।।१९।। इसी प्रकार शव के ऊपर विराजमान चामुण्डा देवी दसों दिशा में हमारी रक्षा करें। आगे जया, पीछे विजया हमारी रक्षा करें ।।२०।। बायें भाग में अजिता, दाहिने भाग में अपराजिता, शिखा में उद्योतिनी तथा सिर में उमा नियमपूर्वक हमारी रक्षा करें ।।२१।। ललाट में मालाधरी, दोनों भ्रू में यशस्विनी, भ्रू के मध्य में त्रिनेत्रा तथा नासिका में यमघण्टा हमारी रक्षा

नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ।
अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ।।२४।।
दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका ।
घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ।।२५।।
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्वमङ्गला ।
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ।।२६।।
नीलग्रीवा बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी ।
स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद् बाहू मे वज्रधारिणी ।।२७।।
हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च ।
नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेत् कुलेश्वरी ।।२८।।

करें ।।२२।। दोनों नेत्रों के बीच में शंखिनी, दोनों कान के मध्य में द्वारवासिनी, कपोल में कालिका, कर्ण के मूल भाग में शाङ्करी हमारी रक्षा करें ।।२३।। नासिका के बीच का भाग सुगन्धा, ऊपर के ओष्ठ में चर्चिका, अधर (नीचे के ओठ) में अमृतकला तथा जिह्वा में सरस्वती हमारी रक्षा करें ।।२४।। कौमारी दाँतों की, चण्डिका कण्ठ प्रदेश की, चित्रघण्टा गले की तथा महामाया तालु की रक्षा करें ।।२५।। कामाक्षी ठोढ़ी की, सर्वमङ्गला वाणी की, भद्रकाली ग्रीवा की तथा धनुष को धारण करने वाली रीढ़ प्रदेश की रक्षा करें ।।२६।। कण्ठ के बाहर नीलग्रीवा और कण्ठ की नली में नलकूबरी, दोनों कन्धों की खड्गिनी त[illegible] वज्र को धारण करने वाली दोनों बाहु की रक्षा करें ।।२७।। दोनों हाथों में दण्ड को धारण करने वाली दण्डिनी तथा अम्बिका अँगुलियों में हमारी रक्षा करें। शूलेश्वरी नखों की तथा कुलेश्वरी कुक्षिप्रदेश में स्थित होकर हमारी रक्षा करें ।।२८।।

स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनःशोकविनाशिनी ।
हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ।।२९।।
नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ।
पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी ।।३०।।
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी ।
जङ्घे महाबला रक्षेत् सर्वकामप्रदायिनी ।।३१।।
गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी ।
पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत् पादाधस्तलवासिनी ।।३२।।
नखान् दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ।
रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ।।३३।।

महादेवी दोनों स्तन की, शोक को नाश करने वाली शोकविनाशिनी मन की रक्षा करें। ललिता देवी हृदय में तथा त्रिशूलधारिणी उदर प्रदेश में स्थित होकर हमारी रक्षा करें ।।२९।। नाभि में कामिनी तथा गुह्यभाग में गुह्येश्वरी हमारी रक्षा करें। कामिका तथा पूतना लिंग की तथा महिषवाहिनी गुदा में हमारी रक्षा करें ।।३०।।

भगवती कटिप्रदेश में तथा विन्ध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करें। सम्पूर्ण कामनाओं को प्रदान करने वाली महाबला जंघा की रक्षा करें ।।३१।। नारसिंही दोनों पैर के घुट्ठियों की, तैजसी देवी दोनों पैर के पिछले भाग की, श्री देवी पैर के अँगुलियों की तथा तलवासिनी पैर के निचले भाग-तलुओं की रक्षा करें ।।३२।। दंष्ट्राकराली (अपनी दाढ़ों के कारण भयंकर दिखाई देने वाली) नखों की, ऊर्ध्वकेशिनी देवी केशों की, कौबेरी (कुबेर की शक्ति) रोमावलि के छिद्रों में तथा बागीश्वरी त्वचा (शरीर के ऊपरी भाग का चमड़ा) में हमारी रक्षा करें ।।३३।।

रक्त-मज्जा-वसा-मांसान्यस्थि-मेदांसि पार्वती ।
अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।।३४।।
पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा ।
ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसंधिषु ।।३५।।
शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ।
अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ।।३६।।
प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् ।
वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ।।३७।।
रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ।।३८।।
आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी ।
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ।।३९।।

पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी और मेदे की रक्षा करें। कालरात्रि आँतों की तथा मुकुटेश्वरी पित्त की रक्षा करें। पद्मावती (मूलाधार में स्थित) सहस्रदल कमल में, चूड़ामणि कफ में, ज्वालामुखी नखराशि में उत्पन्न तेज की तथा अभेद्या (जिसका किसी शस्त्र से भेदन न हो) सभी सन्धियों (जोड़ों) में हमारी रक्षा करें ।।३४-३५।। ब्रह्माणी शुक्र की, छत्रेश्वरी छाया की, धर्म को धारण करने वाली हमारे अहंकार, मन तथा बुद्धि की रक्षा करें ।।३६।। वज्रहस्ता (वज्र को धारण करने वाली) प्राण, अपान, व्यान, उदान तथा समान वायु की, कल्याण से सुशोभित होने वाली कल्याण शोभना हमारे प्राणों की रक्षा करें ।।३७।। रस, रूप, गन्ध, शब्द तथा स्पर्शरूप विषयों का अनुभव करते समय योगिनी तथा

गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत् पशून्मे रक्ष चण्डिके ।
पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ।।४०।।
पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा ।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ।।४१।।
रक्षाहीनं तु यत् स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत्सर्वं रक्ष मे देवि! जयन्ती पापनाशिनी ।।४२।।
पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ।।४३।।
तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।।४४।।

हमारे सत्त्व, रज एवं तमोगुणों की रक्षा नारायणी देवी करें ।।३८।। वाराही आयु की, वैष्णवी धर्म की, चक्रिणी (चक्र को धारण करने वाली) यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करें ।।३९।। हे इन्द्राणी, तुम मेरे कुल की तथा हे चण्डिके, तुम हमारे पशुओं की रक्षा करो, महालक्ष्मी पुत्रों की तथा भैरवी देवी हमारी स्त्री की रक्षा करें ।।४०।।

सुपथा (प्रशस्त मार्ग पर चलने वाली) हमारे पथ की, क्षेमकरी (कल्याण करने वाली) मार्ग की रक्षा करें। राजद्वार (राजदरबार) में महालक्ष्मी तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया भयों से हमारी रक्षा करें ।।४१।। हे देवि ! इस कवच में जिस स्थान की रक्षा नहीं कही गयी है, उस अरक्षित स्थान में (तुम्हारी शक्ति) पाप को नाश करने वाली जयन्ती देवी हमारी रक्षा करें ।।४२।। यदि मनुष्य अपना कल्याण चाहे तो वह कवच के पाठ के बिना एक पग भी कहीं यात्रा न करे। क्योंकि, कवच का पाठ करके चलने वाला मनुष्य जिस-जिस स्थान पर जाता है ।।४३।। उसे वहाँ-वहाँ धन का लाभ

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ।
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ॥४५॥
त्रैलोक्ये तु भवेत् पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ।
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥४६॥
यः पठेत् प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ।
दैवीकला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः ॥४७॥
जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ।
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूता-विस्फोटकादयः ॥४८॥
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चाऽपि यद्विषम् ।
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्र-यन्त्राणि भूतले ॥४९॥

और सम्पूर्ण कामना एवं विजय की प्राप्ति होती है, वह पुरुष जिस-जिस अभीष्ट वस्तु को पाना चाहता है, वह-वह वस्तु उसे निश्चय ही प्राप्त होती है ॥४४॥

कवच का पाठ करने वाला इस पृथ्वी पर अतुल ऐश्वर्य प्राप्त करता है, वह किसी से नहीं डरता और युद्ध में उसे कोई हरा भी नहीं सकता ॥४५॥ और तीनों लोकों में उसकी पूजा होती है। यह देवी का कवच देवताओं के लिए भी दुर्लभ है ॥४६॥ जो लोग तीनों सन्ध्याओं में श्रद्धापूर्वक इस कवच का पाठ करते हैं, उन्हें दैवीकला की प्राप्ति होती है, तीनों लोकों में उन्हें कोई जीत नहीं सकता ॥४७॥ उस पुरुष की अपमृत्यु (अकालमृत्यु) नहीं होती। वह सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है। इस कवच का पाठ करने से लूता (सिर में होने वाला खाज का रोग, मकरी), विस्फोटक (चेचक) आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं ॥४८॥ स्थावर विष (कनेर, भाँग, अफीम में रहने वाला), जंगम विष (साँप, बिच्छू आदि से

भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः ।
सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा ।।५०।।
अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ।
ग्रह-भूत-पिशाचाश्च यक्ष-गन्धर्व-राक्षसाः ।।५१।।
ब्रह्म-राक्षस-वेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ।
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते ।।५२।।
मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ।
यशसा वर्धते सोऽपि कीर्ति-मण्डित-भूतले ।।५३।।
जपेत् सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ।
यावद् भूमण्डलं धत्ते स-शैल-वन-काननम् ।।५४।।

उत्पन्न), कृत्रिम विष (अफीम, तेल आदि के संयोग से उत्पन्न) ये सभी प्रकार के विष नष्ट हो जाते हैं। मारण, मोहन तथा उच्चाटन आदि सभी प्रकार के किये गये अभिचार, मन्त्र तथा यन्त्र, पृथ्वी तथा आकाश में विचरण करने वाले ग्रामदेवतादि, जल में उत्पन्न होने वाले तथा उपदेश से सिद्ध होने वाले सभी प्रकार क्षुद्र देवता आदि, कवच के पाठ करने वाले मनुष्य को देखते ही विनष्ट हो जाते हैं। जन्म के साथ उत्पन्न होने वाले ग्राम देवता, कुलक्रम से उत्पन्न होने वाले कुलदेवता, कण्ठमाला, डाकिनी, शाकिनी, अन्तरिक्ष में विचरण करने वाली अत्यन्त भयानक बलवान् डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बेताल, कूष्माण्ड तथा भयानक भैरव आदि सभी अनिष्ट करने वाले जीव विशेष कवच का पाठ करने वाले पुरुष को देखते ही विनष्ट हो जाते हैं ।।४९-५२।। कवचधारी पुरुष को राजा के द्वारा सम्मान की प्राप्ति होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला है। कवच का पाठ करने वाला पुरुष इस पृथ्वी को

तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्र-पौत्रिकी ।
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ।।५५।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ।
लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ।।ॐ।।५६।।

इति वाराहपुराणे हरिहर-ब्रह्म-विरचितं देव्याः कवचं समाप्तम् ।।१।।

●

अर्गलास्तोत्रम्

विनियोगः–ॐ अस्य श्रीअर्गलास्तोत्रमन्त्रस्य विष्णुर्ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीर्देवताः, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थे सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

अपनी कीर्ति से सुशोभित करता है और अपनी कीर्ति के साथ वह नित्य अभ्युदय को प्राप्त करता है ।।५३।। जो कवच का पाठ कर सप्तशती का पाठ करता है, उसके पुत्र-पौत्रादि सन्तति पृथ्वी पर तब तक विद्यमान रहती है, जब तक पहाड़, वन, कानन और कानन से युक्त यह पृथ्वी टिकी हुई है ।।५४।।

कवच का पाठ कर दुर्गा सप्तशती का पाठ करने वाला मनुष्य मरने के बाद महामाया की कृपा से देवताओं के लिए जो अत्यन्त दुर्लभ स्थान है, उसे प्राप्त कर लेता है और उत्तम् रूप प्राप्त कर शिवजी के साथ आनन्दपूर्वक निवास करता है ।।५५-५६।।

इस प्रकार वाराह-पुराण में हरिहरब्रह्म विरचित देवीकवच समाप्त ।

●

विशेष-अर्गला ब्योंड़ा को कहते हैं, यह लोहे या काठ का होता है, द्वार पर जिसके लगा देने से किवाड़ नहीं खुलते । इसी तरह इस स्तोत्र के पाठ से होता है अर्थात् किसी प्रकार की बाहरी बाधा घर में प्रवेश नहीं कर पाती ।

ॐ नमश्चण्डिकायै

मार्कण्डेय उवाच

ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते॥१॥
जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणी।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते॥२॥
मधु-कैटभ-विद्रावि विधातृवरदे नमः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥३॥
महिषासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥४॥

विनियोग-हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्री०' से 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर जल गिरा दे।

मार्कण्डेय जी ने कहा-जिस जगदम्बिका का नाम जयन्ती (सबकी अपेक्षा अत्यधिक उत्कर्ष वाली), मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी (मुण्डमाला को धारण करने वाली), दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री (सबको धारण करने वाली), स्वाहा (यज्ञों को स्वीकार कर देवताओं का पोषण करने वाली) तथा स्वधा, पितरों को श्राद्ध, तर्पणादि को स्वीकार कर पोषण करने वाली है, उस भगवती को हम नमस्कार करते हैं॥१॥ हे चामुण्डे! (चण्ड-मुण्ड का विनाश करने वाली) तुम्हारी जय हो। प्राणियों का सन्ताप हरण करने वाली हे देवि! तुम्हारी जय हो। सब में व्याप्त रहने वाली हे देवि! तुम्हारी जय हो। संहाररूप से संसार का विनाश करने वाली हे कालरात्रि! तुम्हारी जय हो॥२॥ मधु तथा कैटभ का विदारण करने वाली एवं ब्रह्मदेव को वरदान देने वाली हे देवि! तुम्हारी जय हो। हे भगवती, तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो॥३॥

रक्तबीजवधे देवि चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥५॥
शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनी।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥६॥
वन्दिताङ्घ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनी।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥७॥
अचिन्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनी।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥८॥
नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥९॥

महिषासुर का विनाश कर भक्तों को सुख देने वाली हे देवि! तुम्हें नमस्कार है। तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो॥४॥ रक्तबीज का बध करने वाली तथा चण्ड, मुण्ड का विनाश करने वाली हे देवि! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो॥५॥ शुम्भ तथा निशुम्भ और धूम्राक्ष का मर्दन करने वाली हे देवि! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो॥६॥

वन्दनीय चरणों वाली, सम्पूर्ण सौभाग्य को प्रदान करने वाली हे देवि! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा मेरे शत्रुओं का विनाश करो॥७॥ अचिन्त्यरूप तथा अचिन्त्य चरित्र वाली, सम्पूर्ण शत्रुओं का विनाश करने वाली हे देवि! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा मेरे शत्रुओं का विनाश करो॥८॥ हे पापों का नाश करने वाली चण्डिके देवि! जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हें नमस्कार करते हैं, उन्हें तुम रूप दो, जय दो, यश दो तथा उनके शत्रुओं का विनाश करो॥९॥

स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनी ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१०।।
चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।११।।
देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१२।।
विदेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१३।।
विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१४।।
सुरा-ऽसुर - शिरोरत्न-निघृष्ट-चरणेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१५।।

व्याधियों का विनाश करने वाली हे चण्डिके देवि ! जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो तथा उनके शत्रुओं का विनाश करो ॥१०॥ हे चण्डिके ! जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारी पूजा करते हैं, तुम उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो तथा उनके शत्रुओं का विनाश करो ॥११॥ हे भगवती ! तुम मुझे सौभाग्य तथा आरोग्य दो, मुझे अत्यन्त सुख प्रदान करो और मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ॥१२॥ हे देवि ! मेरे शत्रुओं का नाश करो, मुझे बल दो, तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का संहार करो ॥१३॥ हे देवि ! मेरा कल्याण करो, मुझे विपुल-सम्पत्ति दो, मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ॥१४॥ हे भगवति ! देवताओं तथा असुरों के शिरोरत्न के नमस्कार से तुम्हारे चरण घिसते रहते हैं। अतः हे

विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१६।।
प्रचण्ड-दैत्य-दर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१७।।
चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र - संस्तुते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१८।।
कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१९।।
हिमाचल-सुतानाथ-संस्तुते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।२०।।
इन्द्राणी-पतिसद्भाव-पूजिते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।२१।।

अम्बिके ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।१५।। हे भगवति ! तुम अपने भक्तों को विद्वान्, यशस्वी तथा लक्ष्मीवान् बनाओ । तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।१६।। बड़े-बड़े उद्धत दैत्यों के घमण्ड को चूर करने वाली हे चण्डिके ! मुझ शरणागत को तुम रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।१७।। हे चारभुजा वाली, ब्रह्मदेव से स्तुति की जाने वाली, हे परमेश्वरी ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।१८।। हे भगवती ! भगवान् विष्णु नित्य, निरन्तर तुम्हारी स्तुति करते रहते हैं, तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।१९।। भगवान् सदाशिव से स्तुति की जाने वाली हे परमेश्वरि ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।२०।।

देवि प्रचण्ड-दोर्दण्ड-दैत्यदर्प-विनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।२२।।
देवि भक्तजनोद्दाम - दत्तानन्दोदयेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।२३।।
पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसार-सागरस्य कुलोद्भवाम् ।।२४।।
इदं स्तोत्रं पठित्वां तु महास्तोत्रं पठेन्नरः ।
स तु सप्तशतीसंख्या-वरमाप्नोति सम्पदाम् ।।२५।।

इति श्रीदेव्या अर्गलास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।२।।

इन्द्र के द्वारा शुद्ध भावना से पूजी जाने वाली हे देवि ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।२१।। अपने प्रचण्ड भुजाओं से दैत्यों के घमण्ड को चूर-चूर कर देने वाली हे देवि ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।२२।। अपने भक्त जन का अत्यन्त आनन्द बढ़ाने वाली हे अम्बिके ! तुम मुझे रूप दो, जय दो, यश दो तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करो ।।२३।।

हे भगवति ! हमारी इच्छा के अनुकूल चलने वाली सुन्दर पत्नी मुझे प्रदान करो, जो उत्तम कुल में उत्पन्न हुई हो तथा संसाररूपी सागर से पार करने वाली हो ।।२४।।

जो लोग इस अर्गला स्तोत्र का पाठ कर दुर्गासप्तशती का पाठ करते हैं, वे सप्तशती के पाठ के उत्तम फल को प्राप्त करते हैं तथा प्रचुर धनराशि भी भगवती की दया से उन्हें मिलती है ।।२५।।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित दुर्गार्चनपद्धति में देवी का अर्गलास्तोत्र समाप्त ।

●

कीलकस्तोत्रम्

विनियोगः–ॐ अस्य श्रीकीलकमन्त्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहासरस्वती देवता, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थं सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।
ॐ नमश्चण्डिकायै

मार्कण्डेय उवाच

विशुद्ध-ज्ञान-देहाय त्रिवेदी-दिव्यचक्षुषे।
श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे॥१॥
सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामपि कीलकम्।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः॥२॥

विशेष– दुर्गा सप्तशती द्वारा भगवती के अत्यन्त उद्दिप्त प्रभाव को देखकर महर्षियों ने शाप से उसे कीलित कर दिया, अतः उस विघ्नरूपी कील को निवारण करने के लिए कीलक का पाठ अवश्य करना चाहिए।

विनियोग- पूर्वोक्त प्रकार से यहाँ पर भी हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीकीलकमन्त्रस्य०' से 'जपे विनियोगः' पर्यन्त पढ़कर जल गिरा दे।

मार्कण्डेयजी ने कहा- जिन भगवान् शङ्कर का विशुद्ध ज्ञान ही शरीर है, तीनों वेद ही जिनके तीन नेत्र हैं, जो द्वितीया के चन्द्रमा को मस्तक में धारण किये हुए हैं तथा समस्त कल्याण के हेतुभूत हैं, मैं उन शंकर को नमस्कार करता हूँ॥१॥

सप्तशती के पाठ करनेवालों को यह कीलक सप्तशती मन्त्रों का अंग ही जानना चाहिए। अतः जो दुर्गा-सप्तशती के साथ इस कीलक का पाठ करते हैं उनका सदैव कल्याण होता है॥२॥

सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ।।३।।
न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते ।
विना जाप्येन सिद्ध्येत् सर्वमुच्चाटनादिकम् ।।४।।
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः ।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ।।५।।
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः ।
समाप्नोति सुपुण्येन तां यथावन्नियन्त्रणाम् ।।६।।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः ।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ।।७।।

जो लोग कीलक के साथ दुर्गासप्तशती के स्तोत्रों से भगवती की स्तुति करते हैं, उनके उच्चाटन आदि सभी क्रियाएँ सिद्ध होती हैं और उन्हें दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति हो जाती है तथा भगवती की सिद्धि भी हो जाती है ।।३।। कीलकपूर्वक सप्तशती का पाठ करनेवाले पुरुष को किसी मन्त्र अथवा औषधि की आवश्यकता नहीं होती । उनके द्वारा किये गये समस्त उच्चाटनादि प्रयोग बिना जप के ही सिद्ध हो जाते हैं ।।४।।

अन्य मन्त्रों के जपादि से भी यदि अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति हो जाती है और दुर्गा-सप्तशती के पाठ से भी मनोरथ की सिद्धि हो जाती है तो दोनों में कौन-सा श्रेष्ठ है ? लोगों की इस शंका को सामने रखकर, भगवान् शंकर ने यही निर्णय किया कि दुर्गासप्तशती स्तोत्र ही सबसे बढ़कर है ।।५।। दुर्गासप्तशती का यथावत् पाठ करने वाले पुरुष के पुण्य की समाप्ति नहीं होती । यह देखकर भगवान् शंकर ने दुर्गासप्तशती के स्तोत्र को गुप्त कर दिया ।।६।। जो कृष्ण

ददाति प्रतिगृह्णाति नाऽन्यथैषा प्रसीदति।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥८॥
यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम्।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥९॥
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते।
नाऽपमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१०॥
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥११॥

पक्ष की चतुर्दशी या अष्टमी को समाहित एकाग्रचित्त होकर दुर्गा सप्तशती का पाठ करते हैं, वे निश्चय ही कल्याण के भागी होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥७॥

जो भगवती को अपनी समस्त सम्पत्ति समर्पित कर, दासरूप में पुनः उस सम्पत्ति का उपयोग करता है, भगवती उसके ऊपर निश्चय ही प्रसन्न होती हैं, अन्यथा प्रसन्न नहीं होतीं। श्रीमहादेवजी ने इसी प्रकार के प्रतिबन्धक कील से (कृष्णपक्ष की अष्टमी और चतुर्दशी को भगवती की प्रीति के लिए सारी सम्पत्ति समर्पित कर, पुनः भगवती की आज्ञा से उसका सदुपयोग करना) सप्तशती के फल को कीलित कर दिया है ॥८॥ जो लोग इस प्रकार के कीलक को करके नित्य ही दुर्गासप्तशती का पाठ करते हैं, वे सिद्ध हो जाते हैं, देवी का पार्षद (पास में रहने वाला) तथा गन्धर्व (उत्तम गायकों की एक विशेष देव जाति) हो जाते हैं ॥९॥ सर्वत्र विरचते रहने पर भी उन्हें कभी कोई भय नहीं रहता। उनकी अपमृत्यु नहीं होती और वे मर जाने पर मोक्ष को प्राप्त करते हैं ॥१०॥ इस कीलक को जानकर ही उसका परिहार कर, दुर्गासप्तशती का पाठ

सौभाग्यादि च यत् किञ्चिद् दृश्यते ललनाजने ।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ।।१२।।
शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ।।१३।।
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः ।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ।।ॐ।।१४।।

इति श्रीभगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ।। ३।।

करना चाहिए। यदि कीलक को न जान कर दुर्गासप्तशती का पाठ किया जाता है तो उसका विनाश हो जाता है। अतः कीलक (फल का विघ्न) तथा निष्कीलन (दुर्गासप्तशती के फल के विघ्न को वारण करने की प्रक्रिया) को जान कर ही दुर्गासप्तशती का पाठ करना चाहिए ।।११।। स्त्रियों में सौभाग्य, सन्तति तथा स्थिर लक्ष्मी आदि जो कुछ भी दिखाई पड़ता है वह भगवती की प्रसन्नता का ही फल है, इसलिए भगवती को प्रसन्न करने के लिए इस स्तोत्र का पाठ अवश्य करना चाहिए ।।१२।। इस स्तोत्र का मन्द स्वर से उच्चारण कर पाठ करने से स्वल्प सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, किन्तु उच्च स्वर से पाठ करने पर तो सम्पूर्ण फल की प्राप्ति होती है। अतः उच्च स्वर से ही इसका पाठ करना चाहिए ।।१३।। जिस भगवती की प्रसन्नता से मनुष्य को ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, श्रेष्ठ सम्पत्ति, शत्रुनाश तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है, उस जगदम्बा की स्तुति मनुष्य क्यों नहीं करते ? ।।१४।।

इस प्रकार आचार्य पण्डित-शिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत
'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित दुर्गार्चनपद्धति
में भगवती का कीलक स्तोत्र समाप्त।

नवार्णमन्त्र-जपविधिः

विनियोग:

ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्-छन्दांसि, श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीप्रीत्यर्थे जपे न्यासे च विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यास:

ब्रह्म-विष्णु-रुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि । गायत्र्युष्णिग-नुष्टुप् छन्दोभ्यो नमः, मुखे । महाकाली-महालक्ष्मी-महा-सरस्वतीदेवताभ्यो नमः, हृदि । ऐं बीजाय नमः, गुह्ये । ह्रीं शक्तये नमः, पादयोः । क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, सर्वाङ्गे ।

विनियोग—तत्पश्चात् दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य०' से लेकर 'जपे न्यासे च विनियोग:' तक पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे ।

ऋष्यादिन्यास—'ब्रह्म-विष्णु-रुद्रऋषिभ्यो नम:' पढ़कर सिर का, 'गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दोभ्यो नम:' से मुख का, 'महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवताभ्यो नम:' से हृदय का, 'ऐं बीजाय नम:' से गुप्तांग का, 'ह्रीं शक्तये नम:' से पैर का, 'क्लीं कीलकाय नम:' पढ़कर नाभि का स्पर्श करे ।

ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादिन्यास:

ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्लीं शिखायै वषट्। ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम्। ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्।

अक्षरन्यास:

ॐ ऐं नमः, शिखायाम्। ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे।

करादिन्यास–'ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' पढ़कर दोनों हाथों की तर्जनी अँगुलियों से अँगूठों का, 'ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः' कहकर अँगूठे से तर्जनी का, 'ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः' पढ़कर अँगूठे से अनामिका का, 'ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः' से कानी अँगुलियों का तथा 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः' पढ़कर हथेलियों एवं उनके पृष्ठभाग का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यास–'ॐ ऐं हृदयाय नमः' से हृदय का, 'ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा' से सिर का, 'ॐ क्लीं शिखायै वषट्' से शिखा का, 'ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम्' से दोनों बाहुओं का, 'ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्' पढ़कर दोनों नेत्रों का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्' से बायें हाथ की हथेली पर दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा अँगुलियों से ताली बजाये।

ॐ क्लीं नमः, वामनेत्रे। ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे। ॐ मुं नमः, वामकर्णे। ॐ डां नमः, दक्षिणनासायाम्। ॐ यैं नमः, वामनासायाम्। ॐ विं नमः, मुखे। ॐ च्चें नमः, गुह्ये। एवं विन्यस्याऽष्टवारं मूलेन व्यापकं कुर्यात्।

दिङ्न्यासः

ॐ ऐं प्राच्यै नमः, ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः। ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः। ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः। ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः। ॐ क्लीं वायव्यै नमः। ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः। ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः। ॐ ऐं ह्रीं

अक्षरन्यास—'ॐ ऐं नमः, शिखायाम्' से शिखा का, 'ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे' से दाहिने नेत्र का, 'ॐ क्लीं नमः, 'वामनेत्रे' पढ़कर बायें नेत्र का, 'ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे' से दाहिने कान का, 'ॐ मुं नमः, वामकर्णे' से बायें कान का, 'ॐ डां नमः, दक्षिणनासायाम्' से दाहिनी नाक का, 'ॐ यै नमः, वामनासायाम्' पढ़कर बायीं नाक का, 'ॐ विं नमः, मुखे' से मुख का तथा 'ॐ च्चें नमः, गुह्ये' से गुदा का स्पर्श करे।

इस प्रकार न्यास कर, मूल मन्त्र से आठ बार व्यापक (दोनों हाथों द्वारा मस्तक से पैर तक समस्त अंगों का) स्पर्श करे।

दिङ्न्यास—'ॐ प्राच्यै नमः' पढ़कर पूर्व की ओर, 'ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः' से अग्निकोण में, 'ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः' से दक्षिण दिशा में, 'ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः' से नैर्ऋत्यकोण में, 'ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः' से पश्चिम में, 'ॐ क्लीं वायव्यै नमः' से वायव्य कोण में' 'ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः' से उत्तर दिशा में,

क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः।

ध्यानम्

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्॥१॥
अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुःकुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥२॥
घण्टा-शूल-हलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥३॥

'ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः' से ईशान कोण में, 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः' से ऊपर की ओर और 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः' पढ़कर नीचे की ओर नमस्कार करें।

इसके बाद 'खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं०' से लेकर 'शुम्भादिदै त्यार्दिनीम्' तक श्लोक पढ़ हाथ जोड़ कर भगवती श्रीदुर्गा का ध्यान करे।

ततः 'ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः' इति मालां सम्पूज्य, प्रार्थयेत्।

माला-प्रार्थना

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।१।।
अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।२।।

तत्पश्चात् 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवार्णमन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत्। ततः -

गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि।।

इति पठित्वा देव्या वामकरे जपं निवेदयेत्।

इति नवार्णमन्त्र-जप-विधिः समाप्ता।

●

तत्पश्चात् 'ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः' पढ़कर जपमाला का पूजन कर, 'ॐ मां माले महामाये०' से लेकर 'प्रसीद मम सिद्धये' पर्यन्त पढ़कर माला की प्रार्थना करे।

तदनन्तर 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इस नर्वाणमन्त्र का एक सौ आठ (१०८) बार जप करे। तथा 'गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री त्वं' श्लोक पढ़ कर एक आचमनी जल छोड़ते हुए देवी के वामहस्त में जप समर्पित करे।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या विभूषित दुर्गार्चनपद्धति में नवार्णमन्त्रजपविधि समाप्ता।

●

रात्रिसूक्तम्

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।।१।।

ब्रह्मोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ।।२।।
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ।।३।।
त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् ।
त्वयैतत् पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ।।४।।

समस्त विश्व की अधीश्वरी, संसार की स्थिति, पोषण तथा संहार करने वाली, भगवान् विष्णु की अनुपमशक्तिस्वरूपा भगवती निद्रा की स्तुति ब्रह्मा जी करने लगे ॥१॥

ब्रह्माजी ने कहा-हे देवि! तुम स्वाहा (देवताओं को हवि पहुँचाने वाली), स्वधा (पितरों को श्राद्ध, तर्पण आदि से तृप्त करने वाली), वषट्कार तथा स्वर (अकारादि) स्वरूप हो। तुम्हीं सुधा (प्राणशक्ति को जाग्रत् करने वाली), अक्षररूपेण विराजमान रहने वाली हो, नित्य हो तथा प्रणव में अकार, उकार, मकार आदि तीन मात्राओं से विराजमान रहने वाली हो ॥२॥ इन तीन मात्राओं के अतिरिक्त बिन्दुरूपेण विराजमान अर्धमात्रा तुम्हीं हो, जिसका उच्चारण नहीं किया जा सकता। तुम्हीं सन्ध्या तथा सावित्री हो तथा तुम्हीं पराम्बा हो ॥३॥ हे देवि! तुम्हीं इस ब्रह्माण्ड को धारण, सृजन तथा पालन करने वाली हो तथा कल्पान्त में इस सृष्टि का

विसृष्टौ सृष्टिरूपां त्वं स्थितिरूपा च पालने ।
तथा संहृति-रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ।।५।।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ।।६।।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रय-विभाविनी ।
कालरात्रि-र्महारात्रि-र्मोहरात्रिश्च दारुणा ।।७।।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ।।८।।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डी परिघायुधा ।।९।।
सौम्या सौम्यतराशेष-सौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।
पराऽपराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।।१०।।

संहार करने वाली हो ।।४।। हे जगन्मये ! तुम जगत् की सृष्टि करने के समय सृष्टिस्वरूपा, पालन के समय स्थितिरूपा तथा संहार काल में संहृतिरूपा हो ।।५।।

हे देवि ! तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहस्वरूपा, महादेवी तथा महासुरी हो ।।६।। सत्त्व, रज तथा तम गुणों को प्रकट करने वाली, सबकी प्रकृति तुम्हीं हो, भयंकर कालरात्रि, महारात्रि तथा मोहरात्रि भी तुम्हीं हो ।।७।। हे माँ ! तुम्हीं श्री, ईश्वरी तथा ह्री हो, ज्ञान देने वाली बुद्धि भी तुम्हीं हो । तुम्हीं लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति तथा क्षान्ति हो ।।८।। तुम्हीं खड्ग-धारिणी, त्रिशूलधारिणी, घोरस्वरूपा, गदा, चक्र, शंख, धनुष, बाण, भुशुण्डी तथा परिघ धारण करने वाली हो ।।९।। हे माँ, तुम सौम्य तथा सौम्यतर हो, संसार में जितने सुन्दर पदार्थ हैं उन

यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके ।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।।११।।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत् पात्यत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।।१२।।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।।१३।।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ।।१४।।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ।।१५।।

इति रात्रिसूक्तं समाप्तम् ।

सबसे कहीं अधिक तुम सुन्दरी हो। पर और अपर से पृथक् रहने वाली परमेश्वरी भी तुम्हीं हो ।।१०।। हे जगन्मयी ! इस जगत् में जो भी सत्, असत् वस्तु दिखाई पड़ती है, उनकी शक्ति तुम्हीं हो, अतः मैं तुम्हारी क्या स्तुति कर सकता हूँ ।।११।। हे माँ, जगत् की उत्पत्ति, पालन तथा संहार करने वाले महाविष्णु को भी तुमने निद्रा के वश में कर रखा है, अतः मैं तुम्हारी क्या स्तुति कर सकता हूँ ।।१२।। मुझको, शंकर तथा भगवान् विष्णु को भी तुमने ही धारण किया है, अतः तुम्हारी स्तुति करने में कौन समर्थ हो सकता है ।।१३।। हे देवि, तुम तो अपने इस उदार प्रभावों से ही प्रशंसा के योग्य हो। अतः इन दुराधर्ष मधु, कैटभ राक्षसों को तुम मोहित करो ।।१४।। हे मातः ! जगत् के स्वामी इन महाविष्णु को शीघ्र ही जगा दो और इनमें उन राक्षसों के मारने की बुद्धि उत्पन्न करो ।।१५।।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी-व्याख्या सहित दुर्गार्चनपद्धति में रात्रिसूक्त समाप्त ।

सप्तशतीन्यासः

विनियोगः – प्रथम-मध्यमोत्तरचरित्राणां ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि, नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः, रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि, अग्नि-वायु-सूर्यास्तत्त्वानि, ऋग्-यजुः-सामवेदा ध्यानानि, सकलकामनासिद्धये श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

करन्यासः

ॐखड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ।।
अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐशूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाऽम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ।।
तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ।।
मध्यमाभ्यां नमः ।

सप्तशतीन्यास–पश्चात् सप्तशती का विनियोग, न्यास एवं ध्यान करें।

विनियोग–हाथ में जल लेकर 'प्रथम-मध्यमोत्तरचरित्राणां०' से 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

करन्यास–'ॐखड्गिनी शूलिनी घोरा' से 'अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' पढ़कर अँगूठे का स्पर्श करे।

'ॐशूलेन पाहि नो०' से 'तर्जनीभ्यां नमः' पर्यन्त कहकर तर्जनी अँगुली का स्पर्श, 'ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च०' से लेकर 'मध्यमाभ्यां

ॐसौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ।।
अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐखड्ग-शूल-गदादीनि यानि चाऽस्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ।।
कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ॐसर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि! नमोऽस्तु ते ।।
करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

इति करन्यासः ।

हृदयादिन्यासः

'ॐखड्गिनी शूलिनी घोरा०' हृदयाय नमः ।
'ॐशूलेन पाहि नो देवि०' शिरसे स्वाहा ।
'ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च०' शिखायै वषट् ।

नमः' तक पढ़कर मध्यमा अँगुलि, 'ॐ सौम्यानि यानि०' से 'अनामिकाभ्यां नमः' तक पढ़कर अनामिका अँगुलि का, 'ॐखड्ग-शूल-गदादीनि यानि०' से 'कनिष्ठिकाभ्यां नमः' तक कहकर कानी अँगुलि का तथा 'ॐसर्वस्वरूपे सर्वेशे०' से लेकर 'करतलकर-पृष्ठाभ्यां नमः' तक पढ़कर हथेलियों और उनके पृष्ठभाग का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यास—ॐ'खड्गिनी शूलिनी०' से हृदय का, 'ॐशूलेन पाहि नो०' से मस्तक का, 'ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च०' से शिखा

'ॐसौम्यानि यानि रूपाणि०' कवचाय हुम्।

'ॐखड्ग-शूल-गदादीनि०' नेत्रत्रयाय वौषट्।

'ॐसर्वस्वरूपे सर्वेशे०' अस्त्राय फट्।

इति हृदयादिन्यासः।

ध्यानम्

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्र-गदा-ऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥



का 'ॐसौम्यानि यानि रूपाणि' से दाहिने हाथ की अँगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अँगुलियों से दाहिने कन्धे का, 'ॐखड्गशूल-गदादीनिं०' से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे और 'ॐसर्वस्वरूपे सर्वेशे०' से बायें हाथ की हथेली पर दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा अँगुलियों से ताली बजावे।

इसके पश्चात् एकाग्रचित्त होकर 'विद्युद्दाम-सम-प्रभां' श्लोक पढ़कर भगवती श्रीदुर्गा का ध्यान कर पाठ करे।

इस प्रकार सप्तशतीन्यास समाप्त।



॥ श्रीदुर्गायै नमः ॥

श्री दुर्गासप्तशती

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रिकृत-

'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्या-सहिता

●

प्रथमोऽध्यायः (१)

विनियोगः–ॐ प्रथमचरित्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, महाकाली देवता, गायत्री छन्दः, नन्दा शक्तिः, रक्तदन्तिका बीजम्, अग्निस्तत्त्वम्, ऋग्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः।

ध्यानम्

ॐखड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधु कैटभम्॥

विनियोग–हाथ में जल लेकर 'ॐ प्रथमचरित्रस्य०' से 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर जल छोड़ दे।

विनियोगार्थ–प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि, महाकाली देवता, गायत्री छन्द, नन्दा शक्ति, रक्तदन्तिका बीज, अग्नितत्त्व और ऋग्वेद स्वरूप है। श्रीमहाकाली रूपी देवता के प्रसन्नार्थ प्रथमचरित्र के जप (पाठ) में विनियोग करने का विधान है।

ध्यान-भगवान् विष्णु के क्षीरसागर में शयन करने पर महा बलवान् दैत्य मधु और कैटभ के संहार-निमित्त पद्मयोनि-ब्रह्माजी ने जिनकी स्तुति की थी, उन महाकाली देवी का मैं स्मरण करता हूँ। वे अपने दस भुजाओं में क्रमशः खड्ग, चक्र, गदा, बाण,

ॐ नमश्चण्डिकायै

'ॐ ऐं' मार्कण्डेय उवाच ॥१॥

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥२॥
महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥३॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।
सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षितिमण्डले ॥४॥
तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।
बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥५॥

धनुष, परिघ (फेंककर चलाया जाने वाला एक प्राचीन अस्त्र), शूल, भुशुण्डि (बन्दूक), मस्तक और शंख धारण करती हैं। वह तीन नेत्रों से युक्त हैं और उनके सम्पूर्ण अंगों में दिव्य आभूषण (कभी जीर्ण न होने वाले) पड़े हैं। नीलमणि के सदृश उनके शरीर की आभा है एवं वे दशमुखी तथा दस पादों वाली हैं।

मार्कण्डेय जी ने कहा-॥१॥ सूर्य के पुत्र सावर्णि, जिनकी गणना अष्ट मनुओं में की गयी है, के उत्पन्न होने की कथा का सविस्तार वर्णन करता हूँ, सुनो ॥२॥ सूर्यपुत्र महाभाग सावर्णि भगवती महामाया की कृपा से जैसे मन्वन्तर के स्वामी हुए, मैं वही घटना कहता हूँ ॥३॥ प्राचीनकाल में स्वारोचिष नामक मन्वन्तर में सुरथ नामक एक बहुत ही प्रतापी राजा हुए थे। उनकी उत्पत्ति चैत्रवंश में हुई थी और सारी पृथ्वी पर उनका एकछत्र राज्य था ॥४॥ वे प्रजाओं को अपनी सन्तान के समान पालन-पोषण करते थे। इतना होने पर भी कोलविध्वंसी नामक क्षत्रिय उनके शत्रु बन बैठे थे ॥५॥

तस्य तैरभवद् युद्धमतिप्रबलदण्डिनः ।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ।।६।।
ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् ।
आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ।।७।।
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोशो बलं चापहृतं तत्राऽपि स्वपुरे ततः ।।८।।
ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः ।
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ।।९।।
स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विजवर्यस्य मेधसः ।
प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ।।१०।।

राजा सुरथ दण्डनीति का अत्यन्त कड़ाई से पालन करते थे। राजा का विपक्षियों के साथ युद्ध हुआ। यद्यपि कोलविध्वंसी लोग अल्पसंख्यक वर्ग के थे, फिर भी उन लोगों ने राजा सुरथ पर विजय पा ली ॥६॥ राजा, शत्रुओं से पराजित होकर अपने नगर को लौट आये और उनके देश तक ही उनका राज्य सीमित हो गया (पहले से अधिकृत की गई भूमि उन्हें छोड़नी पड़ी), किन्तु तिस पर भी विद्रोहियों ने उनका पीछा नहीं छोड़ा और राजा सुरथ पर पुनः आक्रमण कर दिया ॥७॥

राजा के बल-पौरुष का ह्रास हो चुका था, इसलिए ऐसे सुयोग को मन्त्रियों ने हाथ से जाने देना उचित न समझा और उन दुरात्मा मन्त्रियों ने राजकीय सेना, वाहन, कोषागार आदि पर अपना पूर्ण आधिपत्य जमा लिया ॥८॥ राजा का स्वामित्व छिन गया था, इसलिए वे घोड़े पर सवार होकर अकेले ही आखेट के बहाने घने वन के भीतर चल दिये ॥९॥ उस वन में पहुँचकर राजा सुरथ

तस्थौ कञ्चित् स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः ।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन् मुनिवराश्रमे ।।११।।
सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः ।
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ।।१२।।
मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।
न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः ।।१३।।
मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते ।
ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः ।।१४।।
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् ।
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ।।१५।।

को विप्रों में श्रेष्ठ मेधा मुनि का आश्रम दिखाई पड़ा, उनके आश्रम में अनेकों मांसभक्षी हिंसक पशु, अपनी हिंसावृत्ति को छोड़कर अत्यन्त शान्त भाव से विचरण करते थे। मुनि के शिष्य गणों से उस आश्रम तथा वन का सौन्दर्य खिल उठा था ॥१०॥ आश्रम में राजा के उपस्थित होने पर मुनि ने उनका सत्कार किया। राजा भी कुछ दिनों तक मुनि के आश्रम में रहकर विहार करते रहे ॥११॥ मोह-माया से ग्रस्त होकर एक बार वहाँ राजा अपने मन में इस प्रकार चिन्तन करने लगा–जो नगर पूर्वकाल में मेरे पूर्वजों द्वारा शासित और पालित था, आज वही नगर मुझसे हीन होकर वीरान हो रहा है। न जाने, मेरे अधम कर्मचारी उसकी धर्मपरायणता के साथ रक्षा करते हैं या नहीं। मेरा हाथी, जो सदा अपने शरीर से मद बहाया करता था और वीर था, न जाने वह किस अवस्था में होगा ? जो लोग मेरी कृपा-दृष्टि, धन और भोजन के लिए लालायित रहकर मेरा अनुगमन करते थे ॥१२-१४॥ वे

सञ्चितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति ।
एतच्चाऽन्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ।।१६।।
तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः ।
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ।।१७।।
स-शोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ।।१८।।
प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ।।१९।।

वैश्य उवाच ।।२०।।

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ।।२१।।
पुत्र-दारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः ।
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ।।२२।।

लोग अब निश्चय ही अन्य राजाओं के आश्रित होंगे। मेरे धन का उन लोगों के द्वारा दुरुपयोग किये जाने से अब कोष निश्चय ही रिक्त हो चुका होगा। इस प्रकार की अनेक चिन्ताएँ राजा के मन में उथल-पुथल मचा रही थीं ।।१५-१६।।

एक दिन मेधा मुनि के आश्रम के निकट एक वैश्य को देखकर राजा उससे पूछ बैठे–'भाई, तुम कौन हो ? इस स्थान में तुम्हारे आने का क्या अभिप्राय है ? ।।१७।। तुम तो बहुत ही शोकाकुल और अन्यमनस्क से लग रहे हो।'

राजा के इस प्रेमपूर्ण प्रश्न को सुनकर वह वैश्य राजा को नमस्कार करके विनीत स्वर में बोला ।।१८-१९।।

वैश्य ने राजा से कहा- ।।२०।। राजन्! मैं धनिक वर्ग में उत्पन्न एक वैश्य हूँ, मेरा नाम समाधि है ।।२१।। मेरे दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से वशीभूत होकर मुझे घर से निष्कासित

वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाऽऽप्तबन्धुभिः ।
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाऽकुशलात्मिकाम् ।।२३।।
प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चाऽत्र संस्थितः ।
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ।।२४।।
कथं ते किं नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः ।।२५।।

राजोवाच ।।२६।।

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः ।।२७।।
तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ।।२८।।

वैश्य उवाच ।।२९।।

एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ।।३०।।
किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ।
यैः सन्त्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ।।३१।।

कर दिया है। इस समय मैं स्त्री, पुत्र और धन से रहित हो गया हूँ ।।२२।। मेरे स्वजनों ने ही मेरे धन का अपहरण कर मुझे उसके अधिकर से च्युत कर दिया है। इसलिए मैं खिन्न-चित्त से वन में आ पहुँचा हूँ। इस समय मैं नहीं जानता कि मेरे कुटुम्बियों की क्या दशा है ? वे लोग घर में सकुशल हैं या नहीं, मुझे इसके सम्बन्ध में कोई ज्ञान नहीं है ।।२३-२४।। मैं विचार कर रहा हूँ कि मेरे वे पुत्र कैसे हैं? वे सदाचारी हैं या दुराचारी? ।।२५।।

राजा ने वैश्य से प्रश्न किया- ।।२६।। जिन स्वजनों ने धन के लोभ में पड़ कर तुम्हें घर से बाहर निकाल दिया, उन स्वार्थी बन्धुओं के प्रति तुम्हें इतनी ममता किसलिए है? ।।२७-२८।।

वैश्य ने उत्तर दिया- ।।२९।। आपका मेरे सम्बन्ध में इस प्रकार पूछना उचित ही है ।।३०।। मैं क्या करूँ, मेरा मन कुटुम्बियों के

पतिस्वजनहार्दं च हार्दि तेष्वेव मे मनः ।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ।।३२।।
यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ।
तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते ।।३३।।
करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ।।३४।।

मार्कण्डेय उवाच ।।३५।।

ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ।।३६।।
समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ।।३७।।
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य-पार्थिवौ ।।३८।।

प्रति निर्दय व्यवहार का नहीं हो रहा है। जिन लोगों ने धन की आकांक्षा से आदर, प्रेम और आत्मीयता की भावना का परित्याग कर मुझे इस दशा में पहुँचा दिया है, उन्हीं लोगों के प्रति मेरे मन में अगाध स्नेह तथा ममत्व का भाव है। हे महानुभाव! यह सब जानकर भी बन्धु-बान्धवों के प्रति मेरे मन में जो प्रेम का समुद्र हिलोरें ले रहा है, यह क्या है-जानने का प्रयत्न करने पर भी मैं इस बात के रहस्य को नहीं समझ पा रहा हूँ ।।३१-३२।। उन लोगों के वियोग में मैं उसाँसे ले रहा हूँ, जिसके फलस्वरूप मेरा हृदय अत्यन्त व्यथित हो रहा है। उन लोगों में मेरे प्रति प्रेम का नितान्त अभाव है, तो भी मेरा मन उनके लिए तड़प रहा है, इसलिए मैं क्या करूँ? ।।३३-३४।।

मार्कण्डेय मुनि ने कहा- ।।३५।। हे ब्रह्मन्! तत्पश्चात् राजा सुरथ और समाधि नामक वैश्य एक साथ ही मेधा मुनि की सेवा में उपस्थित हुए ।।३६।। और उनके प्रति उचित सम्मान दिखाकर

राजोवाच ॥३९॥
भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥४०॥
दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना।
ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ॥४१॥
जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम।
अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥४२॥
स्वजनेन च संत्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति।
एवमेष तथाऽहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ॥४३॥
दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ।
तत्किमेतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥४४॥

वहीं बैठ गये। तब वैश्य और राजा ने परस्पर कुछ वार्ता प्रारम्भ किया ॥३७-३८॥

तब राजा बोले- ॥३९॥ भगवन्! मैं आपसे एक निवेदन करना चाहता हूँ। आप उसे कृपा करके बताइए ॥४०॥ मेरा मन स्ववश में न रहने के कारण बहुत ही क्लेशित है। जो राज्य मेरे हाथ से छीन गया है, उसके लिए अभी तक मेरे मन में पहले की ही तरह ममता बनी हुई है ॥४१॥ हे मुनियों में श्रेष्ठ! यह बात मैं समझता हूँ कि अब उस पर मेरा स्वत्व नहीं रहं गया है, उसे अन्य लोगों ने हस्तगत कर लिया है, फिर भी अज्ञानियों की तरह से उसी के मोह में लिप्त हूँ, यह सब क्या बात है? मेरे ही समान यह वैश्य भी अपने घर से अनादृत हो पुत्र, स्त्री और सेवकों द्वारा परित्यक्त होकर निष्कासित कर दिया गया है ॥४२॥ इसके स्वजनों ने भी इसका परित्याग कर दिया है। यह जानते हुए भी यह वैश्य उन्हीं लोगों के स्नेहपाश में आबंद्ध है। हम दोनों का ही हृदय

ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ।।४५।।

ऋषिरुवाच ।।४६।।

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ।।४७।।
विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक् ।
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथाऽपरे ।।४८।।
केचिद्दिवा तथा रात्रौ पाणिनस्तुल्यदृष्टयः ।
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किं तु ते न हि केवलम् ।।४९।।
यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशु-पक्षि-मृगादयः ।
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ।।५०।।

इन सब बातों से अत्यन्त क्षुब्ध है ।।४३।। दोषयुक्त विषय में भी अभी तक मेरा मन ममतावश आकर्षित हो रहा है। हे महाभाग ! हम दोनों ही समझदार हैं, फिर भी हम में जो मोह की प्रबल धारा उमड़ पड़ी है, वह क्या है? ।।४४।। हम दोनों में प्रत्यक्ष रूप से अज्ञान के लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं ।।४५।।

तब ऋषि ने कहा- ।।४६।। हे महाभाग ! विषय-मार्ग का ज्ञान सभी प्राणियों में विद्यमान होता है ।।४७।। इसी प्रकार विषय भी सभी जीवों के भिन्न-भिन्न होते हैं। कुछ प्राणियों को दिन में नहीं दिखाई पड़ता, ठीक इसके विपरित कुछ जीव रात्रि में नहीं देख पाते ।।४८।।

इनके अतिरिक्त कुछ जीव ऐसे भी होते हैं, जो समान रूप से दिन और रात्रि में देख सकते हैं। यह बात सत्य है कि सभी प्राणियों में मनुष्य वर्ग अधिक समझदार होते हैं। किन्तु केवल वे ही इस प्रकार समझदार नहीं होते ।।४९।। उनके अतिरिक्त पशु-पक्षी और मृगादि जीव भी समझदार होते हैं। मनुष्यों की बुद्धि भी पशु-पक्षियों और मृगादि जीवों के ही समान होती है ।।५०।।

मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः।
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाञ्छावचञ्चुषु ।।५१।।
कणमोक्षादृतान् मोहात् पीड्यमानानपि क्षुधा।
मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः सुतान् प्रति ।।५२।।
लोभात् प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यसि।
तथापि ममतावर्ते मोहगर्ते निपातिताः ।।५३।।
महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणा।
तन्नाऽत्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ।।५४।।
महामाया हरेश्चैषा तय सम्मोह्यते जगत्।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।।५५।।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ।।५६।।

जैसी मनुष्यों की समझ होती है, वैसी ही उन मृगादि जीवों की भी होती है। साथ-ही-साथ अन्य बातें भी प्रायः इन दोनों में समान रूप से पायी जाती हैं। इन पक्षियों को ही देखो, समझदार होते हुए भी स्वयं क्षुधातुर रहकर अपने बच्चों की चोंच में स्नेहवश अन्न के कण डाल देते हैं ।।५१।। हे राजन्! क्या तुम नहीं जानते कि ये मनुष्य समझदार होते हुए भी लोभवश अपने उपकार के बदले उपकृत होने के निमित्त पुत्रों की इच्छा रखते हैं ।।५२।। यद्यपि उन सब में भी समझदारी का भाव होता है, फिर भी वे संसार की स्थिति (जन्म-मृत्यु की परम्परा) को बनाये रखने वाली महामाया भगवती के प्रभाव द्वारा मोहरूपी भँवर में डाल दिये जाते हैं और उसी में वे जीव डूबते-उतराते रहते हैं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। जगत्पिता विष्णु भगवान् की योगनिद्रारूपिणी

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ।।५७।।
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ।।५८।।

राजोवाच ।।५९।।

भगवन् का हि सा देवि महामायेति यां भवान् ।।६०।।
ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ।
यत्प्रभावा च सा देवि यत्स्वरूपा यदुद्भवा ।।६१।।
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदां वर ।।६२।।

ऋषिरुवाच ।।६३।।

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ।।६४।।

महामाया से ही यह सारी सृष्टि मुग्ध हो रही है। वे महामाया ज्ञानियों के चित्त को भी बलात् आकर्षित करके मोहसागर में डाल देती हैं। वे ही समस्त सृष्टि की जगद्धात्री हैं तथा जब वे ही प्रसन्न होती हैं तब मनुष्यों के उद्धार के लिए मुक्तिलाभ का वरदान भी देती हैं। वे ही पराविद्या (विद्याएँ दो होती हैं-परा और अपरा) संसार-बन्धन और मोह-ममता उत्पन्नकर्त्री सनातनी देवी हैं तथा समस्त ईश्वरों की भी अधिष्ठात्री हैं ।।५३-५८।।

तब राजा ने प्रश्न किया- ।।५९।। भगवन्! जिन्हें आप महामाया कहकर सम्बोधित कर रहे हैं, वे देवी कौन-सी हैं? ।।६०।। हे ब्रह्मन्! उनका प्रादुर्भाव किस प्रकार से हुआ? उनके चरित्र कौन-कौन से हैं? ब्रह्मविदों में श्रेष्ठ मुनि! उन देवी की उपरोक्त कथाएँ मैं आपके श्रीमुख से श्रवण करना चाहता हूँ ।।६१-६२।।

ऋषि ने कहा- ।।६३।। हे राजन्! यथार्थ में देवी का स्वरूप नित्य और सनातन है। यह समस्त जगत् उन्हीं का स्वरूप है और

तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ।
देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ।।६५।।
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते ।
योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ।।६६।।
आस्तीर्य शेषमभजत् कल्पान्ते भगवान् प्रभुः ।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधु-कैटभौ ।।६७।।
विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ।।६८।।
दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ।
तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः ।।६९।।

वे ही देवी समस्त विश्व के चराचर प्राणियों में व्याप्त हैं ।।६४।। उनकी उत्पत्ति अनेक प्रकार से होती है। वह मैं तुम्हें सुनाता हूँ। यद्यपि वे जन्मरहित और नित्यस्वरूपा हैं, तो भी जब देवताओं की कार्यसिद्धि के निमित्त अवतार ग्रहण करती हैं ।।६५।। उस समय उन्हें लोक में अवतरित होना माना जाता है। कल्पान्त में जब समस्त विश्व महासमुद्र में विलीन हो रहा था और सब जीवों के पालनकर्ता भगवान् विष्णु शेषशय्या पर योगनिद्रा में अभिभूत हो रहे थे, उस समय उनके कानों की मैल से दो भयंकर दानवों की उत्पत्ति हुई। वे असुर, मधु, कैटभ नाम से जगत् में विख्यात हुए ।।६६-६७।। जन्म लेने के बाद ही वे दानव सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी का वध करने को उद्यत हो गये। उस समय ब्रह्माजी भगवान् विष्णु के नाभिकमल में अवस्थित थे ।।६८।। अपने पास राक्षसों के उपस्थित होने पर वे निद्राभिभूत भगवान् को जागृत करने के लिए भगवान् के नेत्रों में योगनिद्रा की स्तुति करना प्रारम्भ किया ।।६९।।

विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृतालयाम् ।
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ।।७०।।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।।७१।।

ब्रह्मोवाच ।।७२।।

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ।।७३।।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ।
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।।७४।।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ।
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ।।७५।।
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ।।७६।।

भगवान् की वह अद्वितीय शक्ति ही जगद्धात्री, विश्व की अधिष्ठात्री तथा संसार का पालन और संहार करने वाली मानी गयी हैं, उन्हीं योगमाया भगवती निद्रा देवी की ब्रह्माजी आराधना करने लगे ।।७०-७१।।

ब्रह्माजी बोले- ।।७२।। देवि ! तुम्हीं स्वाहा, स्वधा और वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारा ही रूप है ।।७३।।

तुम्हीं प्राणदात्री अमृतरूपा हो। नित्य अक्षर प्रणव में अकार, उकार और मकार-इन तीनों मात्राओं में तुम्हारा ही अवस्थान है। इन तीन मात्राओं से भिन्न जो बिन्दुरूपा नित्य अर्धमात्रा है, जिसका उच्चारण विशेष रूप से नहीं हो सकता, वह भी तुम्हीं हो। हे देवि ! तुम्हीं सन्ध्या, सावित्री तथा परम जननी स्वरूपा हो। तुम्हीं इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण किये हो। तुम्हारे ही द्वारा इस विश्व की उत्पत्ति होती है। तुम्हीं पालनकर्त्री और अन्त में सब जीवों

तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥७७॥
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥७८॥
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥७९॥
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥८०॥
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।
सौम्या सौम्यतराशेष-सौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥८१॥
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी।
यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥८२॥

का संहार करती हो। जगत् की उत्पत्ति में तुम सृष्टिरूपा, पालनकाल में स्थितिस्वरूपिणी तथा कल्पान्त में संहारस्वरूपा हो। तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहरूपा, महादेवी और महासुन्दरी हो। तुम्हीं तीन गुणों (सत्त्व, रज और तम) की उत्पन्नकारिणी हो ॥७४-७८॥

तुम्हीं भयंकर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि हो। तुम्हीं श्री, ईश्वरी, ह्री और बोधस्वरूपा बुद्धि भी हो। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। तुम्हीं खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा, गदा, चक्र, शंख और धनुषधारिणी भी हो। बाण, भुशुण्डि, परिघ आदि तुम्हारे ही अस्त्र हैं। तुम सौम्य और सौम्यतर हो। इतना ही नहीं, वरन् विश्व में जितने भी सौम्य एवं सुन्दर पदार्थ हैं, उन सब में तुम्हारी सुन्दरता कहीं अधिक है ॥७९-८१॥

तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ।।८३।।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ।।८४।।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ।।८५।।
मोहयैतो दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।।८६।।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ।।८७।।

ऋषिरुवाच ।।८८।।

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ।।८९।।

पर तथा अपर-इन दोनों विद्याओं से परे रहने वाली परमेश्वरी भी तुम्हीं हो। हे देवि ! विश्व के सभी सत्-असत् पदार्थों में पायी जाने वाली शक्ति भी तुम्हीं हो ।।८२।। ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति अवर्णनीय है। इस विश्व के रचयिता, पालनकर्ता और संहारक भगवान् विष्णु को भी जब तुमने निद्रा के वशीभूत कर दिया है तब तुम्हारी स्तुति के योग्य इस ब्रह्माण्ड में कौन है। मुझे, भगवान् शिव तथा विष्णु को भी तुम्हीं ने शरीर धारण करने में बाध्य किया है ।।८३-८४।। अतएव तुम्हारी स्तुति की सामर्थ्य किसमें है। हे देवि ! तुम तो अपने इन उदार प्रभावों से ही प्रशंसित हो गयी हो ।।८५।। इन दोनों अजेय असुरों को तुम मोहग्रस्त करके भगवान् विष्णु की निद्रा भंग कर दो। इसके साथ ही भगवान् के भीतर इन मधु और कैटभ नाम के महा असुरों के संहार की बुद्धि भी उत्पन्न करो ।।८६-८७।।

विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधु-कैटभौ।
नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः ॥९०॥
निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः।
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ॥९१॥
एकार्णवेऽहिशयनात्ततः स ददृशे च तौ।
मधु-कैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ ॥९२॥
क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ॥९३॥
पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः।
तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ ॥९४॥

ऋषि ने कहा-॥८८॥ हे राजन्! भगवान् विष्णु को जगाने के लिए जिस समय ब्रह्मा जी ने उस तमोगुण की अधिष्ठात्री देवी का स्तवन किया, उस समय वे महामाया भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्षस्थल से बाहर आकर अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजी के सम्मुख आ उपस्थित हुई। योगनिद्रा से रहित होकर जगत्पति भगवान् जनार्दन उस एकार्णव के जल में शेषशय्या से जागृत हो गये। नींद से मुक्त होते ही भगवान् ने उन दोनों दैत्यों को देखा। वे दोनों ही दुरात्मा दैत्य मधु और कैटभ अत्यन्त पराक्रमी और बलशाली थे॥८९-९२॥ वे दोनों क्रोध से आँखें लाल करके ब्रह्माजी को निगल जाना चाहते थे। ऐसी स्थिति में भगवान् विष्णु ने उन दोनों राक्षसों के साथ पाँच हजार वर्ष तक लगातार बाहुयुद्ध किया। वे दोनों बल के दर्प से दर्पित हो रहे थे। महामाया ने उन दोनों असुरों को अपने प्रभाव से मोहग्रस्त कर दिया था॥९३-९४॥

उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केवशम् ।।९५।।

श्रीभगवानुवाच ।।९६।।

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ।।९७।।
किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ।।९८।।

ऋषिरुवाच ।।९९।।

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ।।१००।।
विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः ।
आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ।।१०१।।

ऋषिरुवाच ।।१०२।।

तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्ख-चक्र-गदाभृता ।
कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने जघने शिरसी तयोः ।।१०३।।

तब उन राक्षसों ने विष्णु भगवान् से कहा–हम तुम्हारे शौर्य से अत्यन्त प्रसन्न हैं। तुम हम लोगों से कोई इच्छित वर माँग लो ।।९५।।

उनकी बात सुनकर भगवान् ने कहा– ।।९६।। यदि तुम दोनों मुझसे प्रसन्न हो, तो तुम्हारी मृत्यु मेरे हाथों से हो। मुझे यही वर चाहिए। इसके सिवाय मुझे अन्य किसी प्रकार के वरदान की आवश्यकता नहीं है ।।९७-९८।।

ऋषि कहने लगे- ।।९९।। जब उन राक्षसों ने सम्पूर्ण पृथ्वी को भ्रमवश जलमग्न समझा, तब भगवान् से कहा- मेरा वध किसी शुष्क स्थल (सूखे स्थान अर्थात् जिस स्थान पर पृथ्वी जल में न डूबी हो) में करो ।।१००-१०१।।

ऋषि ने कहा- ।।१०२।। तब 'तथाऽस्तु' कहकर शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी भगवान् विष्णु ने उन दोनों दैत्यों के मस्तक अपनी जाँघों पर रखकर सुदर्शन चक्र के द्वारा काट दिये ।।१०३।।

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् ।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ।।ऐं ॐ।।१०४।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये मधु-कैटभवधो नाम प्रथमोऽध्यायः ।।१।। उवाच १४, अर्धश्लोकाः २४, श्लोकाः ६६, एवमादितः ।।१०४।।

●

द्वितीयोऽध्यायः (२)

विनियोगः–ॐ मध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिर्महालक्ष्मीर्देवता, उष्णिक् छन्दः, शाकम्भरी शक्तिः, दुर्गा बीजम्, वायुस्तत्त्वम्, यजुर्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं मध्यमचरित्रजपे विनियोगः ।

यह महामाया देवी ब्रह्मा जी की स्तुति से सन्तुष्ट होकर स्वयं ही आविर्भूत हुई थीं। अब हम तुमसे उनके प्रभाव की महिमा का वर्णन करता हूँ, उसे श्रवण करो ।।१०४।।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित मधु-कैटभ-वध नामक प्रथम अध्याय समाप्त ।।१।।

●

विनियोग–हाथ में जल लेकर 'ॐ मध्यमचरित्रस्य०' से आरम्भ कर 'मध्यमचरिंत्रजपे विनियोगः' पर्यन्त विनियोग-वाक्य पढ़कर भूमि पर जल गिरा दे।

विनियोगार्थ-इस मध्यम चरित्र के विष्णु भगवान् ऋषि, महालक्ष्मी देवता, उष्णिक् छन्द, शाकम्भरी शक्ति, दुर्गा बीज, वायुतत्त्व और यजुर्वेद स्वरूप माना गया है। श्रीमहालक्ष्मी की प्रसन्नता के निमित्त मध्यम चरित्र के पाठ में इसका विनियोग वर्णित है।

ध्यानम्

ॐ अक्ष-स्त्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्।।

'ॐ ह्रीं' ऋषिरुवाच ।।१।।

देवासुरमभूद् युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ।।२।।
तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम्।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ।।३।।
ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम्।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुडध्वजौ ।।४।।

ध्यान—मैं कमलासन पर आसीन प्रसन्नवदना महिषासुरमर्दिनी भगवती श्रीमहालक्ष्मी का ध्यान करता हूँ। जिनके हाथ में रुद्राक्ष की माला, फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, खड्ग, ढाल, शंख, घण्टा, सुरापात्र, शूल, पाश और चक्र सुशोभित है।

ऋषि ने कहा-।।१।। प्राचीन काल में देवताओं और दानवों में एक सौ वर्ष तक तुमुल युद्ध हुआ था। इस युद्ध में दानवों का स्वामी महिषासुर तथा देवताओं के अधिपति इन्द्रदेव थे ।।२।। उस भीषण द्वन्द्व-युद्ध में देवताओं की सेना महाबलवान् दैत्यों के आगे टिक न सकी। समस्त देवताओं पर विजयलाभ करके दैत्यराज महिषासुर ने इन्द्र के सिंहासन पर अपना आधिपत्य जमा लिया ।।३।। तदनन्तर हारे हुए सभी देवगण सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी को

यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम् ।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ।।५।।
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति ।।६।।
स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ।।७।।
एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् ।
शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ।।८।।
इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः ।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ।।९।।

अगुआ बनाकर उस स्थान पर गये, जहाँ भगवान् शिव तथा विष्णु विराजमान थे ।।४।। वहाँ जाकर देवताओं ने महिषासुर के शौर्य तथा अपनी पराजय का आद्योपान्त वर्णन किया ।।५।। देवताओं ने कहा- भगवन् ! महाबली महिषासुर सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, इन्द्र, यम, वरुण तथा अन्यान्य देवताओं के अधिकार हस्तगत करके स्वयं ही सब देवों का स्वामी बन गया है ।।६।।

उस विधर्मी महिषासुर ने सभी देवों को उनके स्थान-स्वर्ग से च्युत कर दिया है और अब वे निष्कासित देव भूतल पर मनुष्यों के समान भटक रहे हैं ।।७।। असुरों की यह सारी घटना मैंने आप लोगों के सम्मुख निवेदित कर दी। अब हम देवगण आपके शरणापन्न हुए हैं। आप विचार करके उस दानव के वध का कोई उपाय बतलाइए ।।८।। देवताओं के मुख से ऐसी बात सुनकर भगवान् विष्णु और शिवजी दैत्यों पर बहुत ही कुपित हुए। इस काण्ड से उन देवाधिदेव की भौंहे चढ़ गईं और मुँह टेढ़ा हो गया ।।९।।

ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः ।
निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ।।१०।।
अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः ।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ।।११।।
अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ।।१२।।
अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ।।१३।।
यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाभवन् केशा बाहवो विष्णुतेजसा ।।१४।।

तदनन्तर अत्यन्त क्रोधित चक्रपाणि विष्णु भगवान् के मुख से एक महान् तेज का आविर्भाव हुआ। फिर ब्रह्मा और शंकर के शरीर से भी वैसा ही तेज निकला ।।१०।। इसी प्रकार इन्द्रादि अन्य देवों के शरीर से भी उसी प्रकार का तेजपुंज उत्पन्न हुआ। निकलने के बाद ही वे सभी तेजपुंज परस्पर मिलकर एक हो गये ।।११।।

वह महान् तेजपुंज ज्वलन्त पर्वत के सदृश जान पड़ने लगा। देवताओं ने देखा कि उसकी ज्वालाएँ समस्त दिग्-दिगन्तों में व्याप्त हो रही हैं ।।१२।। समस्त देवों के शरीर से प्रादुर्भूत वह तेजपुंज अतुलनीय था। उस तेजपुंज के एक साथ मिलित होने से वह नारी के रूप में परिवर्तित हो गया और अपने प्रकाश से प्रकाशित होकर त्रैलोक्य में छा गया ।।१३।। भगवान् शिव के शरीर से निकले हुए तेज के द्वारा महामाया देवी का मुख प्रकट हुआ, यमराज के तेज से देवी के सिर के केश निकले और विष्णु भगवान् के तेज से उनकी भुजाओं का निर्माण हुआ ।।१४।।

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाऽभवत्।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥१५॥
ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा।
वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥१६॥
तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा।
नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥१७॥
भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च।
अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥१८॥
ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम्।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥१९॥
शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक्।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥२०॥

चन्द्रमा के तेज से स्तनद्वय, इन्द्र के तेज से कटि भाग, वरुण के तेज से जाँघ तथा पैर की पिंडली और पृथ्वी के तेज से नितम्ब की उत्पत्ति हुई ॥१५॥ ब्रह्मा के तेज से दोनों पैर तथा सूर्य के तेज से अंगुलियाँ उत्पन्न हुईं। अष्ट वसुओं के तेज से हाथों की अंगुलियाँ और कुबेर के तेज से नासिका निर्माण हुआ ॥१६॥ प्रजापति के तेज से दन्तावली तथा अग्नि के तेज से तीन नेत्रों का प्रादुर्भाव हुआ ॥१७॥ सन्ध्या के तेज से भृकुटी (दोनों भौंहें), वायु के तेज से कान उत्पन्न हुए थे। इसी प्रकार अन्य सभी देवों के मिलित तेज से देवी की उत्पत्ति हुई ॥१८॥

सम्पूर्ण देवों के मिलित तेज से प्रादुर्भूत उस देवी की मूर्ति को देखकर महिषासुर द्वारा सन्तप्त देवता लोग अत्यन्त प्रमुदित हुए ॥१९॥ पिनाकी-शंकर भगवान् ने अपने प्रमुख अस्त्र शूल में

शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णे तथेषुधी ।।२१।।
वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् ।।२२।।
कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ।।२३।।
समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः ।
कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम् ।।२४।।
क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।
चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ।।२५।।

से एक शूल उन्हें दिया, फिर भगवान् विष्णु ने अपने चक्र से दूसरे नये चक्र का निर्माण करके देवी को प्रदान किया ॥२०॥ वरुणदेव ने शंख, अग्निदेव ने शक्ति, वायु ने धनुष तथा बाण से पूरित दो तरकस देवी को अर्पित किये ॥२१॥

सहस्रलोचन देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से निर्मित एक वज्र तथा ऐरावत हाथी से उतार कर एक घण्टा अर्पण किया ॥२२॥ यमराज ने कालदण्ड द्वारा प्रादुर्भूत दण्ड, वरुण ने पाश, प्रजापति ने स्फटिकाक्ष की माला और सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने उन्हें अपना कमण्डलु अर्पित किया ॥२३॥ देवी के समस्त रोम-कूपों में सूर्य ने अपनी रश्मियों का तेज भर दिया, काल ने उन्हें अपनी चमचमाती हुई तलवार और ढाल दे डाला ॥२४॥ क्षीरसागर ने उज्ज्वल हार, कभी जीर्ण न होने वाले दो दिव्य वस्त्र, दिव्य चूड़ामणि, दो कुण्डल, कड़े, समुज्ज्वल अर्धचन्द्र, भुजाओं के लिए केयूर (बाहुओं में धारण करने का एक प्राचीन आभूषण-बाजूबन्द) प्रदान किया ॥२५॥

अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरवान् सर्वबाहुषु।
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम्॥२६॥
अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम्॥२७॥
अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम्।
अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम्॥२८॥
अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चातिशोभनम्।
हिमवान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च॥२९॥
ददावशून्यं सुरया पानपात्रं धनाधिपः।
शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम्॥३०॥
नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम्।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा॥३१॥

दोनों चरणों में धारण करने के लिए विमल नूपुर (पैजेब), गले की उत्तम हँसुली॥२६॥ और सभी उँगलियों में धारण करने के लिए रत्नजटित अँगूठियाँ भी अर्पित कीं। विश्वकर्मा ने उन्हें अपना अत्यन्त निर्मल फरसा प्रदान किया॥२७॥ इसके साथ-ही-साथ उन्होंने अनेकों प्रकार के अस्त्र और कभी विद्ध न होने वाले कवच दिये, अस्त्रों के अतिरिक्त उन्होंने मस्तक और वक्ष पर धारण करने के निमित्त देवी को सदैव हरे-भरे रहने वाले कमलों की बनी हुई मालाएँ भी दीं॥२८॥ सागर ने उन्हें सुन्दर कमल-पुष्प भेंट किये और हिमालय पर्वत ने उनकी सवारी के लिए सिंह तथा अनेकों प्रकार के रत्नादि भेंट किये॥२९॥ धन के स्वामी कुबेर ने मधु से पूरित पात्र दिया। सम्पूर्ण पृथ्वी को धारण करने वाले नागराज

सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः ।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ।।३२।।
अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत् ।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ।।३३।।
चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः ।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ।।३४।।
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ।।३५।।
सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः ।।३६।।

शेष ने बहुमूल्य मणियों से विभूषित ।।३०।। नागहार का उपहार दिया। इसी प्रकार अन्य देवों ने भी अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र और आभूषण देकर देवी का सम्मान किया ।।३१।।

इसके अनन्तर उच्च स्वर से अट्टहास करते हुए देवी ने बारम्बार गर्जन किया। उनके भयंकर गर्जन से सम्पूर्ण आकाश गुंजायमान हो उठा ।।३२।। देवी के घोर गर्जन से उत्पन्न भयंकर रव (शब्द) कहीं समा न सका, जिससे तीनों लोक क्षुभित हुए और समुद्र भी काँप उठा ।।३३।। पृथ्वी में भूकम्प आ गया और समस्त पर्वत हिलते हुए थरथराने लगे। उस समय देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्न होकर भगवती सिंहवाहिनी देवी का जय-जयकार किया ।।३४।।

इसके पश्चात् महर्षियों ने भी नतमस्तक होकर देवी की स्तुति की। समस्त विश्व को क्षुब्ध देखकर असुर लोग अपनी सम्पूर्ण सेना को कवचादि से सज्जित कर, हाथों में अपने आयुधों को लेकर एकाएक उठ खड़े हुए, उस समय महिषासुर अत्यन्त क्रुद्ध होकर

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः ।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ।।३७।।
पादाक्रान्त्या नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् ।
क्षोभिताशेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम् ।।३८।।
दिशो भुजसहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् ।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम् ।।३९।।
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम् ।
महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ।।४०।।
युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः ।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः ।।४१।।

बोल उठा-'आः ! यह सब क्या हो रहा है !' ।।३५-३६।।

तदनन्तर सम्पूर्ण असुरों से घिरा हुआ वह महिषासुर देवी की भयंकर नाद की ओर लक्ष्य करके दौड़ पड़ा। उसने सबसे आगे जाकर देखा—वह देवी अपनी अलौकिक प्रतिभा से त्रैलोक्य को प्रकाशित कर रही थीं ।।३७।। उनके पदभार से पृथ्वी रसातल में बोझिल होकर दबी जा रही थी। मस्तक के मुकुट से आकाश में रेखा-सी खिंची हुई दिख रही थी तथा वे अपने धनुष के टंकार से सप्त पाताल लोकों को क्षुभित कर रही थीं ।।३८।। अपनी सहस्र भुजाओं से देवी समस्त दिशाओं को आच्छादित करके खड़ी थीं। इसके पश्चात् देवी के साथ दैत्यों का घनघोर युद्ध प्रारम्भ हो गया ।।३९।। भाँति-भाँति के अस्त्रों-शस्त्रों के प्रहार से सभी दिशाएँ प्रकाशित हो उठीं। महिषासुर का सेनापति चिक्षुर नामक महान् असुर था ।।४०।। देवी के साथ उस महाबली दानव का संग्राम होने लगा। चामर नामक असुर दानवों की चतुरंगिणी सेना को साथ

अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः ।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ।।४२।।
अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे ।
गज-वाजि-सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ।।४३।।
वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत ।
विडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ।।४४।।
युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।
अन्ये च तत्रायुतशो रथ-नाग-हयैर्वृताः ।।४५।।
युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः ।
कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ।।४६।।
हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः ।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ।।४७।।

लेकर युद्ध में भिड़ गया। साठ हजार रथियों को अपने साथ लेकर उदग्र महाबली दानव भी युद्ध में आ पहुँचा ।।४१।। एक करोड़ सेना लेकर महाहनु नामक असुर ने युद्ध में भाग लिया। असिलोमा नामक महादानव पाँच सौ रथियों के साथ युद्धस्थल में आ पहुँचा (उसके शरीर के रोंगटे तलवार की धार के सदृश तीखे और पैने थे) ।।४२।। उस रणभूमि में वाष्कल नामक दैत्य अपने साथ साठ लाख सेना लेकर लड़ने लगा। परिवारित नामक असुर हाथी सवार, घुड़सवार आदि की टोलियों के साथ एक करोड़ की विशाल सेना के साथ युद्धभूमि में उतर आया। बिड़ाल नामक दैत्य पाँच अरब रथियों के साथ लड़ने लगा ।।४३-४४।। इनके अतिरिक्त और भी सहस्रों महादैत्य रथ, हाथी और घुड़सवारों की सेना की सहायता से युद्ध करने में लग गये। उस रणस्थल में कोटि-कोटि सहस्र

युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशु-पट्टिशैः।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशांस्तथापरे ।।४८।।
देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः।
साऽपि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका ।।४९।।
लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ।।५०।।
मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी।
सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेशरी ।।५१।।
चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ।।५२।।

रथ, हाथी और घोड़ों की सेना से घिरा हुआ स्वयं महिषासुर उपस्थित था। वे अगणित दानव देवी के साथ तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मुसल, खड्ग, परशु और पट्टिश नामक अस्त्र-शस्त्र का प्रहार करते हुए युद्ध में लगे थे। कुछेक दैत्यों ने मिलकर देवी पर शक्ति का प्रहार किया, कुछेक ने अपने पाश फेंके ।।४५-४८।। कुछ अन्य दैत्यों ने देवी के वध के उद्देश्य से उन पर खड्ग का प्रहार किया। देवी ने क्रुद्ध होकर लीला-स्वरूप अपने अस्त्र-शस्त्रों की भीषण वर्षा से उन दानवों के निक्षिप्त अस्त्रों को सहज में ही काट दिया। उनके मुख-कमल पर परिश्रम या क्लान्ति का लेशमात्र भी चिह्न नहीं दिखाई पड़ता था। देवता और ऋषि उनका स्तुति-गान कर रहे थे तथा वह महामाया परमेश्वरी उन दैत्यों पर अपने अस्त्र-शस्त्रों की बौछार कर रही थीं ।।४९-५०।।

देवी का वाहन सिंह भी क्रुद्ध होकर अपने अयालों (गर्दन के केशों) को हिलाता हुआ दैत्यों की सेना में इस प्रकार भ्रमण करने

त एव सद्यः सम्भूता गणाः शतसहस्रशः ।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपाला-ऽसि-पट्टिशैः ।।५३।।
नाशयन्तोऽसुरगणान् देवीशक्त्युपबृंहिताः ।
अवादयन्त पटहान् गणाः शङ्खांस्तथापरे ।।५४।।
मृदङ्गांश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे ।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्तिवृष्टिभिः ।।५५।।
खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् ।
पातयामास चैवान्यान् घण्टास्वनविमोहितान् ।।५६।।
असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् ।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ।।५७।।

लगा मानो किसी वन में दावाग्नि फैलकर क्रमशः बढ़ रही हो। देवी ने रणस्थल में युद्ध करते हुए दानवों के साथ जितने श्वांस छोड़े, वे सभी सैकड़ों-हजारों गणों के रूप में परिणत हो गये और हाथ में परशु, भिन्दिपाल, खड्ग तथा पट्टिश आदि अस्त्रों द्वारा दानवों से युद्ध करने में लग गये ।।५१-५३।। देवी की शक्ति से वर्धित गण लोग असुरों का संहार करते हुए नगाड़े, शंख आदि बाजे बजाने लगे ।।५४।। उस समरांगण में कितने ही गण मृदंग आदि बाजे बजा रहे थे।

इसके पश्चात् देवी ने त्रिशूल, गदा, तलवार चलाकर तथा शक्ति की वर्षा करके सैकड़ों असुरों का विनाश कर दिया। कितने ही राक्षसों को घण्टे की भयंकर आवाज से अचेत करके वध कर दिया ।।५५-५६।। अनेकों दैत्यों को देवी ने अपने पाश में बाँधकर भूमि पर घसीटा और कितने ही दानव उनकी पैनी तलवार के प्रहार

विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते।
वेमुश्च केचिद् रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ।।५८।।
केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे ।।५९।।
श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः।
केषाञ्चिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ।।६०।।
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः।
विच्छिन्नजङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ।।६१।।
एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद् देव्या द्विधा कृताः।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ।।६२।।

से दो-दो टुकड़ों में विभक्त हो गये ।।५७।। कितने ही राक्षस उनकी गदा के आघात से आहत होकर धराशायी हो गये, कितने ही मुसल की चोट खाकर आहतावस्था में मुँह से खून उगलने लगे ।।५८।। शूल के प्रहार से वक्षःस्थल फट जाने के कारण कितने ही दैत्य भूमि पर गिर गये। देवी की बाणवृष्टि से कितने ही दैत्यों का कटिप्रदेश भंग हो गया ।।५९।। बाज पक्षी की तरह वेग से झपटने वाले दानव अपने प्राणों का त्याग करने लगे। कितने ही राक्षसों की भुजाएँ आघात से छिन्न-भिन्न हो गयीं, कितनों की गरदनें कट गयीं ।।६०।। कितनों के मस्तक खण्ड-खण्ड होकर भूमि पर गिरने लगे। कुछ दैत्यों के शरीर बीच के भाग से ही विदीर्ण हो गये। कितने राक्षस जाँघहीन हो जाने से धरती पर गिर गये ।।६१।। देवी ने कितने ही दैत्यों के एक बाँह, एक पैर तथा एकाक्ष करके दो टुकड़ों में विदीर्ण करके उनका संहार कर डाला। कितने ही

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः ।
ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ।।६३।।
कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः ।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ।।६४।।
पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा ।
अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्स महारणः ।।६५।।
शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः ।
मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ।।६६।।
क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम् ।।६७।।

योद्धा राक्षस देवी के द्वारा छिन्न-मस्तक होकर भी पुनः सँभलकर उठते थे ।।६२।। और केवल धड़ के सहारे ही अच्छे-अच्छे अस्त्र-शस्त्रों को हाथ में लेकर युद्ध करने में तत्पर हो जाते। कटे हुए कबन्ध युद्ध के बाजों के स्वर पर नाचने लगते थे ।।६३।। कटे हुए कितने ही धड़ हाथों में खड्ग, शक्ति और ऋष्टि नामक हथियार लिये दौड़ते थे और कितने ही अन्य दैत्य 'ठहरो ! ठहरो !' कहकर देवी को युद्ध के लिए प्रेरित करते थे ।।६४।। जिस भूमि पर यह घनघोर युद्ध हुआ था, वहाँ की जमीन देवी द्वारा निक्षिप्त रथ, हाथी, घोड़े और दानवों की लाशों से ऐसी आच्छन्न हो गयी थी कि वहाँ पर किसी का गमनागमन सम्भव नहीं था ।।६५।। दानवदल में हाथी, घोड़े और मृतक असुरों के शरीर से इतना रक्तप्रवाह हुआ था कि वहाँ कुछ ही क्षणों में खून की बड़ी-बड़ी नदियाँ प्रवाहित होने

स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति॥६८॥
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः।
यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि॥ॐ॥६९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥२॥ उवाच १, श्लोकाः ६८, एवम् ६९, एवमादितः॥१७३॥



लगीं॥६६॥ जिस प्रकार तृण-समूह और काष्ठ की विशाल राशि को अग्नि कुछ ही क्षणों में भस्म कर देती है, उसी प्रकार जगज्जननी जगदम्बा ने असुरों के उस विशाल सैन्यसमूह को क्षणभर में नष्ट कर डाला॥६७॥ देवी का सिंह भी अपने गरदन के बालों को हिला-हिलाकर घोर गर्जन कर रहा था। कितने ही दैत्यों की उस गुरु गर्जन से ही मानो प्राण-पखेरू निकले जा रहे थे॥६८॥ देवी के गणों ने भी उन दानवों के साथ ऐसा भीषण युद्ध किया, जिससे आकाश में दर्शक बने देवतागण भी बहुत ही प्रसन्न हुए और उन पर आकाशमार्ग से सुमन की वृष्टि करने लगे॥६९॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी-व्याख्या में मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित महिषासुर की सेना का वध नामक द्वितीय अध्याय समाप्त॥२॥



तृतीयोऽध्यायः (३)

ध्यानम्[1]

ॐ उद्यद्भानु-सहस्रकान्तिमरुण-क्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र-विलसद् वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्ध-हिमांशु-रत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम्॥२॥
स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः।
यथा मेरुगिरेः शृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः॥३॥

ध्यान-जगदम्बिका के श्री-अंगों की शोभा सहस्रों उदित होते हुए सूर्यों के तुल्य है। उनकी रक्तवर्ण की साड़ी के साथ गले में मुण्डमाला सुशोभित हो रहा है। दोनों स्तन उनके रक्त चन्दनार्चित हैं। उनके कर-कमलों में जपमाला, विद्या, अभय तथा वर नामक-ये चार मुद्रायें शोभा पा रही हैं। उनके मुखकमल त्रिनेत्रों से युक्त होकर शोभायमान हो रहे हैं। मस्तक पर रत्नजड़ित मुकुट के साथ ही चन्द्रमा भी विराजमान हैं। वे स्वयं कमलासन पर आसीन हैं। ऐसी देवी को मैं भक्तियुक्तचित्त से नमस्कार करता हूँ।

ऋषि ने कहा-॥१॥ इस प्रकार दानवी सेना का संहार होते हुए देखकर सेनापति चिक्षुर क्रोधित होकर अम्बिका देवी से युद्ध करने

१. किसी के मत में प्रथम, मध्यम, उत्तर चरित्र के आदि में ही ध्यान-श्लोक पढ़ा जाता है, अन्य अध्यायों के आदि में नहीं।

तस्यच्छित्त्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान्।
जघान तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम्॥४॥
चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम्।
विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः॥५॥
सच्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः।
अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः॥६॥
सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान्॥७॥
तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन।
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः॥८॥

के लिए उनके सम्मुख आया ॥२॥ सुमेरु पर्वत के शिखर पर होने वाली मेघों की वर्षा की भाँति वह दानव देवी पर अपने बाणों की वर्षा करने लगा ॥३॥

तत्पश्चात् देवी ने अपने बाणों से उसके बाणसमूहों को अनायास ही नष्ट करके उसके सारथि और रथ के घोड़ों को मार डाला ॥४॥ इसके साथ ही उसके धनुष तथा ध्वजा को भी काटकर फेंक दिया। धनुष के कट जाने पर उसके समस्त अंगों को अपने बाणों से छेद डाला ॥५॥ अपने धनुष, रथ, घोड़े और सारथि के नष्ट हो जाने से वह दानव अपने तलवार और ढाल को लेकर देवी की ओर झपटा ॥६॥ उसने तेज धारवाली तलवार से सिंह के मस्तक पर आघात करके देवी की बाँयीं भुजा में अत्यन्त वेग से प्रहार किया ॥७॥ राजन्! देवी की बाँह के स्पर्श से वह तलवार भग्न हो गयी। अपना प्रहार निष्फल होते देखकर उस राक्षस ने क्रोध से रक्त नेत्र करके हाथों में शूल उठाया ॥८॥

चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः ।
जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात् ।।९।।
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत ।
तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुराः ।।१०।।
हते तस्मिन् महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ।।११।।
सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिकाद्रुतम् ।
हुंकाराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ।।१२।।
भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः ।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ।।१३।।

तब उस महादानव ने देवी भद्रकाली के ऊपर अपना शूल चलाया। वह आकाशमण्डल से गिरते हुए सूर्यमण्डल के समान अपने तेज से देदीप्यमान हो गया ।।९।। बड़े वेग से उस शूल को अपनी ओर आते देखकर प्रत्युत्तर में देवी ने भी अपना शूल चलाया। देवी के शूल के प्रहार से दानव-शूल के सैकड़ों खण्ड हो गये, साथ ही उस शूल के द्वारा महाबली सेनापति चिक्षुर का प्राणान्त हो गया ।।१०।। महिषासुर के महावीर सेनानायक चिक्षुर के वधोपरान्त देवताओं का पीडक चामर नामक राक्षस हाथी पर सवार होकर लड़ने के लिए आया ।।११।। उसने आते ही देवी पर शक्ति का आघात किया, परन्तु जगदम्बिका ने उसे केवल हुँकार मात्र से ही घायल एवं निष्प्रभ करके तत्क्षण भूमि पर सुला दिया ।।१२।।

अपनी खण्डित शक्ति को देखकर चामर परम कुपित हुआ। क्रोध में भरकर उसने शूल का वार किया, किन्तु देवी ने उस शूल को अपने बाणों द्वारा काट गिराया ।।१३।।

ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भान्तरे स्थितः।
बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥१४॥
युध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान् नागान् महीं गतौ।
युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥१५॥
ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा।
करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम् ॥१६॥
उदग्रश्च रणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः।
दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥१७॥
देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम्।
वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् ॥१८॥
उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम्।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥१९॥

इतने में अवसर पाकर देवी का सिंह हाथी के मस्तक पर उछल पड़ा और दानव के साथ बाहु-युद्ध करने को उद्यत हुआ ॥१४॥ वे दोनों लड़ते-लड़ते हाथी से भूमि पर उतर आये और अत्यन्त क्रोधित होकर परस्पर प्रचण्ड प्रहार करते हुए लड़ने लगे ॥१५॥ तत्पश्चात् देवी का सिंह आकाश की ओर प्रबल वेग से उछल पड़ा और गिरते समय अपने पैने पंजों के प्रहार से चामर का सिर धड़ से भिन्न कर दिया ॥१६॥ इसी प्रकार उदग्र दैत्य पत्थरों और वृक्षों की चोट खाकर रणस्थल में देवी के हाथों मारा गया और कराल राक्षस भी दाँतों, घूँसों एवं थप्पड़ों की मार से भूमि पर गिर पड़ा ॥१७॥ गदा के प्रहार से देवी ने उद्धत नामक राक्षस को चकनाचूर कर दिया। भिन्दिपाल से बाष्कल एवं बाणों से ताम्र तथा अन्धक को यमराज के घर भेज दिया ॥१८॥ त्रिनयना

बिडालस्यासिना कायात् पातयामास वै शिरः ।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ।।२०।।
एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः ।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ।।२१।।
कांश्चितुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् ।
लाङ्गूलताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान् ।।२२।।
वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वास-पवनेनान्यान् पातयामास भूतले ।।२३।।
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ।।२४।।

परमेश्वरी ने अपने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक दानव को मार गिराया ।।१९।। बिडाल दैत्य के मस्तक को तलवार के आघात से मुण्डहीन कर दिया। दुर्धर और दुर्मुख नामक दोनों राक्षसों को अपने बाणों से बींधकर यमालय में भेज दिया ।।२०।।

इस प्रकार अपनी सेना का क्षय होते देखकर महिषासुर ने भैंसे का रूप बनाकर देवी के गणों को त्रस्त करना प्रारम्भ किया ।।२१।। वह राक्षस किसी-किसी को थूथुन से मारकर, किसी-किसी पर खुरों के प्रहार से, किसी-किसी को पूँछ की चोट से और कुछ को अपने सींगों से विदीर्ण कर दिया ।।२२।।

कुछ गणों को प्रबल वेग से, किसी को सिंहनाद के द्वारा, किसी को घुमाकर और कितने को ही अपने निःश्वास वायु के झोंके से भूमि पर गिरा दिया ।।२३।। इस प्रकार गणों की सेना को तितर-बितर करके वह राक्षस भगवती के सिंह को मारने के लिए वेग से झपट पड़ा। इससे महामाया को अतीव क्रोध उत्पन्न हुआ ।।२४।।

सोऽपि कोपान् महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः ।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ।।२५।।
वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लाङ्गूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ।।२६।।
धुतशृङ्ग-विभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः ।
श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ।।२७।।
इति क्रोधसमाध्मातपतन्तं महासुरम् ।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्वधाय तदा करोत् ।।२८।।
सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम् ।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ।।२९।।

उधर महाबलशाली महिषासुर भी क्रुद्ध होकर भूमि को अपने खुरों से खोदने लगा और अपने सींगों से उठा-उठाकर बड़े-बड़े पर्वतों को फेंककर गर्जन करने लगा ।।२५।। उसके वेग से घुमाने के कारण पृथ्वी अत्यन्त क्षुभित होकर फटने-सी लगी । उसकी पूँछ से टकराकर सागर पृथ्वी को जलमग्न करने लगा ।।२६।। हिलते हुए सींगों के प्रहार से बादलों के समूह छिन्न-भिन्न हो गये । उसके श्वास की प्रबल वायु के कारण उड़ते हुए सैकड़ों पर्वत आकाश से भूमि पर गिरने लगे ।।२७।।

उस महादानव को क्रोध की मुद्रा में अपनी ओर लक्ष्य देखकर चण्डिका देवी ने भी उसको मारने के लिए उस पर महान क्रोध प्रकट किया ।।२८।। सर्वप्रथम देवी ने अपने पाश फेंककर उस महाबली असुर को बाँध लिया । अपने को उस महा रणस्थल में बँध जाने पर उस राक्षसराज ने भी अपने बनावटी महिष स्वरूप का परित्याग कर दिया ।।२९।।

ततः सिंहोऽभवत् सद्यो यावत् तस्याम्बिका शिरः ।
छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ।।३०।।
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तं खड्गचर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महागजः ।।३१।।
करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च ।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ।।३२।।
ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः ।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।३३।।
ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।
पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना ।।३४।।

तुरन्त ही वह दैत्य मायावी सिंह के रूप में देवी के सामने आ गया। ऐसी स्थिति में जैसे ही अम्बिका ने उसका शिरच्छेदन करना चाहा, त्योंही वह राक्षस खड्गधारी पुरुष भेष में दिखाई पड़ने लगा ।।३०।। देवी ने तत्काल ही बाणवृष्टि करके ढाल और तलवार के सहित उस महिषासुर को बेध दिया। तब वह मायावी राक्षस गजराज के रूप में परिवर्तित हो गया ।।३१।। गजराज के वेश में वह राक्षस अपनी सूँड़ से देवी के विशाल सिंह को खींचने और गरजने लगा। खींचने का प्रयास करते ही देवी ने अपनी तलवार से उसकी सूँड़ काट ली ।।३२।। तदनन्तर उस महादानव ने पुनः अपने पहले वाले भैंसे के रूप को ग्रहण कर लिया और पहले की तरह चराचर प्राणियों सहित त्रैलोक्य को आतंकित करने लगा ।।३३।। तत्पश्चात् जगज्जननी चण्डिका भवानी बारम्बार उत्तम मधुपान करते हुए आँखें लाल करके हँसने लगीं ।।३४।।

ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान्॥३५॥
सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः।
उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम्॥३६॥

देव्युवाच॥३७॥

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत् पिबाम्यहम्।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः॥३८॥

ऋषिरुवाच॥३९॥

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम्।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत्॥४०॥
ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः।
अर्धनिष्क्रान्त एवासीद् देव्या वीर्येण संवृतः॥४१॥

वह राक्षस बल और पराक्रम के मद में उन्मत्त की भाँति घोर गर्जन करने लगा और अपने सींगों पर उठा-उठाकर पर्वतों को देवी पर निक्षेप करने लगा॥३५॥ उस समय उसके चलाये हुए पर्वतों को देवी अपने बाणों से विचूर्ण करते हुए बोलीं। मधु के मद से बोलते समय उनका मुख लाल हो रहा था और जिह्वा लड़खड़ा रही थी॥३६॥

देवी बोलीं-॥३७॥ ओ मूढ़! मैं जब तक मधुपान करती हूँ, तब तक तू खूब मनमानी गरज ले। मेरे हाथ से यहीं तेरी मृत्यु होने पर अब शीघ्र ही देवगण भी गरजन करेंगे॥३८॥

ऋषि ने कहा-॥३९॥ ऐसा कहकर देवी उछलकर उस दैत्य पर चढ़ बैठीं। अपने पैरों से उसे दबोच कर देवी ने शूल से उसके कण्ठस्थल में प्रहार किया॥४०॥ दबाव के शिकंजे में जकड़ा होने

अर्धनिष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महासुरः ।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्त्वा निपातितः ।।४२।।
ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् ।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः ।।४३।।
तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।।ॐ।।४४।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः ।।३।।
उवाच ३, श्लोकाः ४१, एवम् ४४,
एवमादितः ।।२१७।।

●

पर भी महिषासुर अपने मुख से (दूसरे रूप में बाहर होने लगा) अभी वह शरीर के अर्धभाग से ही बाहर निकल सका था कि देवी ने अपने बल से उसे रोक दिया ।।४१।। वह दैत्य अर्ध निर्गतावस्था में ही देवी के साथ युद्ध में लग गया। तब देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसके मस्तक का छेदन कर दिया ।।४२।। महिषासुर के मरते ही उसकी बची-खुची सेना हाहाकार करती हुई भाग खड़ी हुई तथा समस्त देव अत्यन्त आनन्दित हुए ।।४३।। देवताओं ने दिव्य महर्षियों के साथ मिलकर भगवती दुर्गा की स्तुति की। गन्धर्वराज प्रमुदित होकर गान करने लगे तथा अप्सराएँ भी नाचने लगीं ।।४४।।

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के
अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित महिषासुर वध
नामक तीसरा अध्याय समाप्त ।।३।।

●

चतुर्थोऽध्यायः (४)

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ।।

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन् दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारुदेहाः ।।२।।

ध्यान-जिन देवी को देवगण चारों ओर से आवृत्त रखते हैं और सिद्धिलाभ की आकांक्षा वाले मनुष्य जिनकी सेवा-सुश्रूषा में तत्पर रहते हैं, उन 'जया' नामवाली दुर्गादेवी की आराधना करना उचित है। उनके अंगों का वर्ण काले मेघों के समान श्याम रंग का है। उनके कटाक्षमात्र से ही शत्रुसमूह भयाकुल हो उठता है, उनके मस्तक पर चन्द्रमा की रेखा बद्ध होकर शोभायमान होती है। उनके हाथों में शंख, चक्र, तलवार, त्रिशूल आदि शोभित हैं। वे तीन नेत्रों वाली देवी अपने वाहन सिंह के कन्धों पर सवार होकर अपने प्रभाव से त्रैलोक्य को पूर्ण कर रही हैं।

ऋषि ने कहा-॥१॥ अत्यन्त बलशाली पापात्मा दैत्य महिषासुर तथा उसकी दानवी सेना का देवी के हाथ से संहार हो जाने पर इन्द्रादि देवता नतमस्तक होकर भगवती दुर्गादेवी की स्तुति करने लगे। ऐसे समय में उनके सुन्दर अंगों में प्रफुल्लता के कारण

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेष-देवगण-शक्तिसमूह-मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षि-पूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ।।३।।
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिकाखिल-जगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ।।४।।
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ।।५।।

रोमांच हो रहा था ।।२।। देवताओं ने कहा–आपका स्वरूप ही सब देवों की शक्तिसमूह है, आपने अपनी शक्ति से सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त कर रखा है, आप समस्त देवों तथा महर्षियों के द्वारा परमपूज्य हैं। हे जगदम्बा ! हम आपको भक्तिभाव से प्रणाम करते हैं। आप हम लोगों का कल्याण करें ।।३।। जिन देवी के अतुलनीय प्रभाव और शौर्य का वर्णन करने में भगवान् शेषनाग, ब्रह्मा और शिवजी भी असमर्थ हैं, वे ही भगवती चण्डिका समस्त विश्व का पालन तथा अशुभकारी भय के नाश का विचार करें ।।४।। जो धर्मात्माओं के गृह में लक्ष्मी रूप से, दुरात्माओं के यहाँ निर्धनता रूप से, विशुद्ध अन्तःकरण वाले पुरुषों के हृदय में बुद्धि रूप से, सज्जनों में श्रद्धारूप से तथा कुलीन मनुष्यों में लज्जा के रूप से विराजमान रहती हैं, उन महामाया भगवती दुर्गा को हम सब

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ।।६।।
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ।।७।।
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ।।८।।

प्रणाम करते हैं। हे देवि! आप समस्त विश्व का पालन करिए ।।५।। हे देवि! हम आपके इस अचिन्तनीय रूप का असुरों के संहारक शौर्य तथा सम्पूर्ण देव-दानवों के सम्मुख उत्पन्न किये हुए अद्भुत चरित्र का वर्णन नहीं कर सकते ।।६।। आप ही विश्व की उत्पत्ति में कारणस्वरूप हैं, आप में तीनों गुण (सत्व, रज और तम) विद्यमान हैं, फिर भी दोषों के साथ आपका सम्पर्क नहीं होता। भगवान् विष्णु तथा शिवजी भी आपकी महिमा को नहीं जान सकते। यह चराचर विश्व आपका अंश है, आप ही सब जीवों के लिए आश्रयभूत हैं, क्योंकि एकमात्र आप ही सब की मूलभूत अव्याकृता परा प्रकृति हैं ।।७।। हे देवि! जिसके उच्चारण से सभी यज्ञों में देवताओं की तुष्टि होती है, वह 'स्वाहा' आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरों को भी तृप्ति प्रदान करती हैं। इस

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व-
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ।।९।।
शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथरम्य-पदपाठवतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ।।१०।।
मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा ।
श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ।।११।।

कारण सभी लोग आपको 'स्वधा' के नाम से सम्बोधित करते हैं ।।८।। हे देवि ! आप ही परा विद्या हैं, जिससे मोक्ष की प्राप्ति, अचिन्त्य महाव्रत स्वरूपता, समस्त दोषों से हीनता, जितेन्द्रियता, तत्त्व की सारता होती है और सभी मुनिजन जिसके लिए निरन्तर अभ्यासशील रहा करते हैं ।।९।। आप शब्दस्वरूपा, अत्यन्त निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथ (छन्द के रूप में गाया जाने वाला एक प्रकार का वेद मन्त्र) के मनोरम पद्य के पाठ से युक्त सामवेद की आधार हैं। आप ही देवी, तीनों वेद और छहों ऐश्वर्य से सम्पन्न भगवती हैं। विश्व की उत्पत्ति एवं पालन के निमित्त आप ही वार्ता (कृषि एवं जीविका) के रूप में प्रादुर्भूत हुई हैं। आप जगत् की महान पीड़ा की नाशकर्त्री हैं ।।१०।। हे देवि ! सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्व का ज्ञान प्राप्त करने के लिए आप मेधा शक्ति हैं, दुस्तर

ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
बिम्बानुकारि कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम् ।
अत्यद्भूतं प्रहृतमात्तरुषा तथाऽपि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ।।१२।।
दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटी-कराल-
मुद्यच्छशाङ्क-सदृश-च्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ।।१३।।
देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।

संसार-सागर से तारने वाली नौकास्वरूपिणी दुर्गादेवी आप ही हैं। आपकी किसी पदार्थ में आसक्ति नहीं है। आप ही कैटभ के शत्रु भगवान् विष्णु के वक्ष में निवास करने वाली लक्ष्मी तथा शिव द्वारा सम्मानित गौरी देवी भी हैं ।।११।।

आपका मुखकमल मृदु हास्य से युक्त, निर्मल, पूर्णचन्द्रबिम्ब के समान और उत्तम स्वर्ण की सुन्दर आभा से भासित हैं, फिर भी आपके इस अनुपम लावण्य को देखकर महिषासुर ने कुपित होकर आप पर आघात कर दिया, यह बात आश्चर्य में डाल देने वाली है ।।१२।। हे देवि! वही मुख जब क्रोध की मुद्रा में उदयकालीन चन्द्रमा के समान अरुण तथा वक्र भौंहों के कारण भयंकर हो उठा, तब उस रूप को देखकर महिषासुर का सहसा प्राणान्त नहीं हुआ, यह और भी अधिक आश्चर्य की बात है, क्योंकि क्रुद्ध यमराज के सामने कौन प्राणी जीवन धारण करने में समर्थ हो सकता है ।।१३।। हे परमात्मस्वरूपा देवि! आप प्रसन्न

विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ।।१४।।
ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ।।१५।।
धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृतिं करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादात्
लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ।।१६।।
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

हों, आपके प्रसन्न होने पर विश्व का उत्थान होता है और कुपित होने पर कितने ही वंशों का नाश हो जाता है, यह बात अनुभव द्वारा ही प्रत्यक्ष प्रमाणित हुई है। आपके क्रोधाग्नि में महिषासुर की विशाल वाहिनी (सेना) भी क्षणमात्र में भस्म हो उठी है ।।१४।। आप सदैव अभ्युदयकर्त्री हैं, आप जिन लोगों पर कृपादृष्टि रखती हैं, वे ही लोग देश में सम्मान, धन और ख्याति प्राप्त करते हैं। उन लोगों का धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने स्त्री, पुत्र और भृत्यों के साथ रहकर धन्य होते हैं ।।१५।। हे देवि! आपकी ही कृपाकटाक्ष से धर्मात्मा व्यक्ति श्रद्धापूर्वक सदैव धर्माचरण में संलग्न रहता है और उसके प्रभाव से स्वर्गलोक को प्राप्त करता है। अतएव आप निश्चय ही त्रैलोक्य को मनोवांछित फल प्रदान करती हैं ।।१६।। हे माँ दुर्गे! आप स्मरण मात्र से ही सब जीवों

दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ।।१७।।
एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ।।१८।।
दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ।।१९।।
खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम् ।

का भय निवारण करती हैं और स्वस्थ मनुष्यों द्वारा चिन्तन करने पर उन्हें परम कल्याणकारी बुद्धि देती हैं। दुःख-दरिद्र और भयहारी देवि ! आपका चित्त परोपकार के निमित्त सदैव द्रवित रहता है, ऐसा दूसरा कौन है ? ।।१७।। हे देवि ! जो राक्षस अनन्त काल तक नरक भोग करने के लिए पापाचार करते रहे, उन्हें युद्ध में वध करके स्वर्ग भेजने तथा संसार को सुखी करने के उद्देश्य से ही आप उनका वध करती हैं ।।१८।। आप अपने शत्रुओं पर शस्त्रों का आघात क्यों करती हैं ? आप केवल अपने दृष्टिपात से ही सम्पूर्ण दैत्य-समूहों को भस्म कर सकती हैं, तो भी आप ऐसा न करके युद्धस्थल में उनका संहार करती हैं। इस बात में भी कुछ रहस्य जान पड़ता है। वह यह है कि मेरे शस्त्रों के प्रहार से पवित्र होकर ये सब स्वर्गपुरी में जायें, इस प्रकार उनके प्रति भी आपके उत्तम विचार

यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ।।२०।।
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ।।२१।।
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र ।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ।।२२।।
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ।

होने हैं ।।१९।। खड्ग के तेजोराशि की भयंकर दीप्ति तथा आपके त्रिशूल के अग्रभाग की घनीभूत कान्ति से चकाचौंध होने पर भी असुरों की आँखें नष्ट नहीं हुईं, क्योंकि वे सब मनोरम किरणों से युक्त आनन्द प्रदान करने वाले आपके मुखचन्द्र का दर्शन कर रहे थे ।।२०।। हे देवि ! आपका शील दुरात्माओं के दुर्व्यवहार का निवारक है। आपका रूप अचिन्तनीय तथा अतुलनीय है, आपका पराक्रम देवताओं के विजेता दैत्यों का नाशक है। इस प्रकार आपने अपने शत्रुओं पर सदैव दया ही दर्शायी है ।।२१।। हे वरदात्री देवि ! आपके इस शौर्य की तुलना कहीं भी नहीं हो सकती, शत्रुओं को त्रस्त करने वाला एवं अत्यन्त मनोहारी रूप अन्यत्र कहाँ दिखाई पड़ सकता है। हृदय में दयालुता और युद्ध में निर्दयता-ये दोनों बातें एक साथ होने का भाव केवल त्रैलोक्य में आपके सिवा और

नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ।।२३।।
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ।।२४।।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ।।२५।।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ।।२६।।
खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ।।२७।।

ऋषिरुवाच ।।२८।।

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ।।२९।।

किसी में नहीं है ।।२२।। हे अम्बे ! आपने शत्रुओं का वध करके उन्हें अमरपद दिलाया है, उनसे प्राप्त होने वाले भय को हम लोगों से दूर किया है, हमारा आपको नमस्कार है ।।२३।। हे देवि ! आप शूल के द्वारा हमारा रक्षण करें। हे अम्बिके ! आप अपने खड्ग, घण्टा, ध्वनि और धनुष की टंकार से हमारी रक्षा कीजिए ।।२४।। हे चण्डिके ! आप हमारी पूर्व, पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तर में अपने त्रिशूल को घुमाकर हमारा परित्राण करें ।।२५।। आपके जो परम सुन्दर एवं अत्यन्त भीषण रूप त्रिभुवन में विचरण करते हैं, उसके द्वारा आप हमारी तथा भूतल की रक्षा करें ।।२६।।

हे अम्बिके ! आपके कर-कमलों में सुशोभित होने वाले खड्ग, शूल, गदा आदि जो भी अस्त्र-शस्त्र हों, उन सभी के द्वारा आप हम लोगों का रक्षण करें ।।२७।।

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ।।३०।।

देव्युवाच ।।३१।।

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ।।३२।।

देवा ऊचुः ।।३३।।

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ।।३४।।
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ।।३५।।
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ।।३६।।
तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धन-दारादि-सम्पदाम् ।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ।।३७।।

ऋषि ने कहा-।।२८।। इस प्रकार सब देवों ने उस जगन्माता का मिलकर स्तवन तथा नन्दनकानन (इन्द्रदेव के बगीचे का नाम) के दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-चन्दनादि के द्वारा पूजन किया ।।२९।। तदनन्तर दिव्य धूपों की सुगन्धि अर्पित किया। तब देवी ने करबद्ध होकर प्रणाम करते हुए उन देवताओं से कहा ।।३०।।

देवी ने कहा-।।३१।। हे देवगण ! तुम सब लोग मुझसे अपना अभीष्ट पदार्थ माँग लो ।।३२।। तब देवताओं ने कहा-।।३३।। भगवती की कृपा से हम लोगों की सभी आकांक्षाएँ पूर्ण हो गयी हैं, अब कुछ भी इच्छित वस्तु माँगने के लिए नहीं है ।।३४।।

हे महेश्वरि ! हम लोगों का यह परम शत्रु महिषासुर मारा गया है. इतने पर भी आप यदि हम लोगों को कुछ देना ही चाहती हैं ।।३५।। तो हम लोगों की यही इच्छा पूरी कीजिए कि जब कभी भी हम आपका स्मरण करें तब आप दर्शन देकर हम लोगों को संकट से मुक्त

ऋषिरुवाच ॥३८॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप॥३९॥
इत्येतत् कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी॥४०॥
पुनश्च गौरीदेहात् सा समुद्भूता यथाभवत्।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भ-निशुम्भयोः॥४१॥
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत् कथयामि ते॥ह्रींॐ॥४२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ उवाच ५, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३५, एवम् ४२, एवमादितः ॥२५९॥

करें। हे प्रसन्नवदना अम्बिके! जो भी व्यक्ति इन स्तोत्रों के द्वारा आपकी आराधना करे उसे धन-धान्यादि तथा स्त्री-पुत्रादि से सम्पन्न करें तथा सदैव हम लोगों पर आप प्रसन्न रहें ॥३६-३७॥

ऋषि बोले–॥३८॥ हे राजन्! देवों ने अपने तथा विश्व के कल्याणार्थ जब भद्रकाली देवी को स्तुति द्वारा प्रसन्न किया, तब वे 'तथाऽस्तु' (ऐसा ही हो) कहकर वहीं अन्तर्निहित हो गयीं ॥३९॥

हे राजन्! पूर्वकाल में त्रैलोक्य की हितकांक्षिणी देवी जिस प्रकार देवों के शरीर से प्रादुर्भूत हुई थीं, वह सब कथा मैंने तुम्हें सुना दी ॥४०॥ इसके पश्चात् देवों की हितकारिणी देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ और निशुम्भ नामक राक्षसों के संहार के लिए जिस प्रकार गौरी देवी के अंगों से अवतरित हुई थीं, उसका वर्णन मैं तुमसे सुनाता हूँ ॥४१-४२॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित इन्द्रादि-स्तुति नामक चौथा अध्याय समाप्त ॥४॥

पञ्चमोऽध्यायः (५)

विनियोगः-ॐ अस्य श्रीउत्तरचरित्रस्य रुद्रऋषिः, महासरस्वती देवता, अनुष्टुप् छन्दः, भीमा शक्तिः, भ्रामरी बीजम्, सूर्यस्तत्त्वम्, सामवेदः स्वरूपम्, महासरस्वतीप्रीत्यर्थे उत्तरचरित्रपाठे विनियोगः।

ध्यानम्

ॐ घण्टा-शूल-हलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥

'ॐ क्लीं' ऋषिरुवाच॥१॥

पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात्॥२॥

विनियोग—इस उत्तर चरित्र के ऋषि रुद्र, देवता महासरस्वती, अनुष्टुप् छन्द, भीमा शक्ति, भ्रामरी बीज, सूर्य तत्त्व तथा सामवेद स्वरूप है। महासरस्वती की प्रसन्नता के लिए उत्तर चरित्र के पाठ में इसके विनियोग का विधान है।

ध्यान—जिनके कर-कमलों में घण्टा, शूल, हल, शंख, मूसल, चक्र और धनुष-बाण है, जिनके शरीर की दीप्ति शारदीय चन्द्र के समान सुन्दर है, जो त्रैलोक्य की आधारभूता और शुम्भ-निशुम्भ आदि दैत्यों का संहार करने वाली हैं, उन गौरी देवी के शरीर से उत्पन्न महासरस्वती देवी का मैं निरन्तर स्मरण करता हूँ।

ऋषि ने कहा—॥१॥ प्राचीन काल में शुम्भ और निशुम्भ नामक दानवों ने अपने बल के मद में चूर होकर इन्द्र के हाथ से त्रैलोक्य

तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम्।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥३॥
तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥४॥
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥५॥
तयास्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताखिलाः।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः ॥६॥
इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम्।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥७॥

देवा ऊचुः ॥८॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥९॥

का राज्य एवं यज्ञ भाग छीनकर अधिकृत कर लिया ॥२॥ वे ही दोनों राक्षस सूर्य, चन्द्र, कुबेर, यम, वरुण आदि देवों के अधिकार भी भोगने लगे ॥३॥ वायु और अग्नि का कार्य भी वे ही दोनों करने लगे। उन दोनों दानवों ने सभी देवों को पराजित, अपमानित तथा राज्य-च्युत करके उन्हें स्वर्ग से बाहर खदेड़ दिया। उन दोनों बलशाली असुरों से अपमानित होकर देवताओं ने अपराजिता देवी का स्मरण किया ॥४-५॥ उन लोगों ने सोचा कि जगदम्बा ने हम लोगों को प्रसन्न होकर वर-प्रदान किया था कि संकटापन्न स्थिति में तुम्हारे स्मरण से मैं तुम्हें संकटमुक्त कर दूँगी ॥६॥ ऐसा निश्चय करके देवता लोग गिरिराज हिमाचल पर्वत पर जाकर भगवती विष्णुमाया की स्तुति करने लगे ॥७॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ।।१०।।
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ।।११।।
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ।।१२।।
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ।।१३।।
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै।।१४।।नमस्तस्यै।।१५।।नमस्तस्यै नमो नमः।।१६।।

देवताओं ने कहा–।।८।। देवी को नमस्कार है, महादेवी शिवा को मेरा सदैव नमस्कार है। प्रकृति एवं भद्रा को प्रणाम है। नियमपूर्वक जगदम्बा को हम लोग प्रणाम करते हैं।।९।। रौद्रा, नित्या, गौरी एवं धात्री को बारम्बार नमस्कार है। ज्योत्स्नामयी, चन्द्ररूपिणी एवं सुखस्वरूपिणी देवी को सदैव नमस्कार है।।१०।। शरण में आगतों की कल्याणकारिणी, वृद्धि एवं सिद्धिरूपिणी देवी को हमारा बारम्बार प्रणाम है। नैर्ऋति (राक्षसों की लक्ष्मी), राजाओं की लक्ष्मी तथा शर्वाणी-स्वरूपा जगज्जननी को हम प्रणाम करते हैं।।११।। दुर्गा, संकटहारिणी, सर्वसारभूता, सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्रादेवी को मेरा सतत् प्रणाम है।।१२।। अत्यन्त सौम्या, अत्यन्त रौद्रा देवी को हम बार-बार प्रणाम करते हैं। जगत् की आधारभूता कृति देवी को पुनः-पुनः मेरा प्रणाम है।।१३।। सब प्राणियों में

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै।।१७।।नमस्तस्यै।।१८।।नमस्तस्यै नमो नमः ।।१९।।
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।२०।।नमस्तस्यै।।२१।।नमस्तस्यै नमो नमः ।।२२।।
या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।२३।।नमस्तस्यै।।२४।।नमस्तस्यै नमो नमः।।२५।।
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।२६।।नमस्तस्यै।।२७।।नमस्तस्यै नमो नमः।।२८।।
या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।२९।।नमस्तस्यै।।३०।।नमस्तस्यै नमो नमः।।३१।।
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।३२।।नमस्तस्यै।।३३।।नमस्तस्यै नमो नमः।।३४।।
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।३५।।नमस्तस्यै।।३६।।नमस्तस्यै नमो नमः।।३७।।

विष्णुमाया के नाम से कही जाने वाली देवी को मेरा सतत नमस्कार है ।।१४-१६।। सभी प्राणियों में चेतना कहलाने वाली देवी को मेरा अभिवादन है ।।१७-१९।। सभी जीवों में बुद्धिरूप से निवास करने वाली देवी को मेरा बार-बार प्रणाम है ।।२०-२२।। सभी प्राणियों में निद्रारूप में स्थित देवी को मेरा प्रणाम है ।।२३-२५।। समस्त जीवों में क्षुधाग्नि रूप से विद्यमान देवी को मेरा प्रणाम है ।।२६-२८।। सभी जीवों में छाया रूप से स्थित, सभी प्राणियों में शक्तिरूप से

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।३८।।नमस्तस्यै।।३९।।नमस्तस्यै नमो नमः।।४०।।
या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।४१।।नमस्तस्यै।।४२।।नमस्तस्यै नमो नमः।।४३।।
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।४४।।नमस्तस्यै।।४५।।नमस्तस्यै नमो नमः।।४६।।
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।४७।।नमस्तस्यै।।४८।।नमस्तस्यै नमो नमः।।४९।।
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।५०।।नमस्तस्यै।।५१।।नमस्तस्यै नमो नमः।।५२।।
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।५३।।नमस्तस्यै।।५४।।नमस्तस्यै नमो नमः।।५५।।
या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।५६।।नमस्तस्यै।।५७।।नमस्तस्यै नमो नमः।।५८।।
या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।५९।।नमस्तस्यै।।६०।।नमस्तस्यै नमो नमः।।६१।।

स्थित, सभी जीवों में तृष्णारूप से स्थित, सभी जीवों में क्षमारूप से विद्यमान देवी को मेरा पुनः-पुनः प्रणाम है ।।२९-४०।। जो देवी सभी जीवों में जाति रूप से स्थित, लज्जारूप से स्थित तथा शान्ति रूप से स्थित हैं, उन देवी को मेरा बारम्बार अभिवादन है ।।४१-४९।। सभी प्राणियों में श्रद्धारूप से तथा कान्तिरूप से स्थित देवी को

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।६२।।नमस्तस्यै।।६३।।नमस्तस्यै नमो नमः।।६४।।
या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।६५।।नमस्तस्यै।।६६।।नमस्तस्यै नमो नमः।।६७।।
या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।६८।।नमस्तस्यै।।६९।।नमस्तस्यै नमो नमः।।७०।।
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।७१।।नमस्तस्यै।।७२।।नमस्तस्यै नमो नमः।।७३।।
या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै।।७४।।नमस्तस्यै।।७५।।नमस्तस्यै नमो नमः।।७६।।
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ।।७७।।
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै।।७८।।नमस्तस्यै।।७९।।नमस्तस्यै नमो नमः।।८०।।

मेरा नमस्कार है ।।५०-५५।। जो सभी जीवों में लक्ष्मीरूप तथा वृत्तिरूप से विद्यमान हैं, उन देवी को मैं पुनः-पुनः प्रणाम करता हूँ ।।५६-६१।। सभी जीवों में स्मृतिरूप से वर्तमान देवी को मेरा बार-बार प्रणाम है ।।६२-६४।। जिन देवी की सभी जीवों में दया तथा तुष्टिरूप से स्थिति है, उन देवी को मेरा प्रणाम है ।।६५-७०।। जो देवी सभी प्राणियों में मातृ तथा भ्रान्तिरूप से विद्यमान हैं, उन्हें मेरा बार-बार नमस्कार है ।।७१-७६।। जो देवी समस्त जीवों के इन्द्रिय वर्ग की स्वामिनी तथा सभी प्राणियों में व्याप्त रहनेवाली हैं, उन्हें मेरा नमस्कार है ।।७७।। जिन देवी की इस सृष्टि में

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥८१॥
या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः ॥८२॥

ऋषिरुवाच ॥८३॥

एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती ।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥८४॥
साब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा ॥८५॥

चैतन्यरूप से व्याप्ति है, उन देवी को मेरा प्रणाम है ॥७८-८०॥ प्राचीन काल में अपनी इष्ट-सिद्धि की पूर्ति होने से देवों ने जिनका स्तवन तथा देवों के राजा इन्द्र ने बहुकाल तक जिनका सेवन किया, वह कल्याणकारिणी ईश्वरी हमारा हित तथा मंगल करें तथा मेरी सभी आपदाओं का निवारण करें ॥८१॥ जिन परमेश्वरी को हम सब देवगण, दैत्यों द्वारा त्रस्त हो इस समय प्रणाम करते हैं तथा जो भक्तियुक्तचित्त के पुरुषों द्वारा स्मरण करने से समस्त संकटों को तत्काल टाल देती हैं, वे जगदम्बा हमारे संकट को नष्ट करें ॥८२॥

ऋषि बोले—॥८३॥ हे राजन्! देवताओं के इस स्तुतिपाठ के समय गंगास्नानार्थ वहाँ श्री पार्वती देवी आयी हुई थीं ॥८४॥ उन

स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः ।
देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ।।८६।।
शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका ।
कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ।।८७।।
तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत् सापि पार्वती ।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ।।८८।।
ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् ।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भ-निशुम्भयोः ।।८९।।
ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा ।
काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम् ।।९०।।
नैव तादृक् क्वचिद् रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ।।९१।।

सुन्दर भृकुटीवाली भगवती पार्वती ने देवताओं से प्रश्न किया-आप लोग यहाँ किसकी स्तुति कर रहे हैं ? तब उन्हीं के शरीर-कोश से उत्पन्न हुई शिवा देवी ने कहा- ।।८५।। युद्ध में निशुम्भ दैत्य से पराजित तथा शुम्भ से अपमानित होकर ये समस्त देवता मेरी ही स्तुति कर रहे हैं ।।८६।। पार्वतीजी के शरीरकोश से अम्बिका देवी की उत्पत्ति हुई थी, इसलिए वे इस त्रैलोक्य में (कौशिकी) नाम से सम्बोधित की जाती हैं ।।८७।। कौशिकी की उत्पत्ति के बाद पार्वती देवी का शरीर काले रंग में परिवर्तित हो गया, एतदर्थ वे हिमालय पर रहनेवाली कालिका देवी के नाम से प्रसिद्ध हुईं ।।८८।।

इसके पश्चात् वहाँ शुम्भ-निशुम्भ के भृत्य चण्ड-मुण्ड ने आकर परम मनोमुग्धकारी रूप वाली अम्बिका देवी को देखा ।।८९।।

देवी को देखकर वे शुम्भ दानव के पास जाकर बोले–महाराज ! मैंने हिमालय पर एक अत्यन्त रूपवती स्त्री देखी है, जिसकी कान्ति

स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा ।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान् द्रष्टुमर्हति ।।९२।।
यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ।
त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ।।९३।।
ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् ।
पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ।।९४।।
विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे ।
रत्नभूतमिहानीतं यदासीद् वेधसोऽद्भुतम् ।।९५।।
निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।
किञ्जिल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ।।९६।।

से हिमालय उद्भासित हो रहा है ।।९०।। वैसा अनिन्द्य रूप कभी किसी ने नहीं देखा होगा। हे असुराधिप ! आप पता लगाइए कि वह कौन है और उसे ग्रहण कर लीजिए ।।९१।। उस स्त्री-रत्न के समस्त अंग बहुत ही कमनीय हैं और वह अपने अंगों की आभा से समस्त दिशाओं को आलोकित कर रही है। हे दैत्यराज ! अभी तक वह हिमालय पर ही वर्तमान है, आप उसे चलकर देख सकते हैं ।।९२।। हे प्रभो ! इस समय आपके गृह में संसार के सभी रत्न, घोड़े, हाथी आदि शोभित हो रहे हैं ।।९३।। हाथियों में ऐरावत, वृक्षों में पारिजात तथा घोड़ों में उच्चैःश्रवा तो आपने ही इन्द्र से छिन लिया है ।।९४।। हंसों से जुता हुआ ब्रह्माजी का यह रत्नजड़ित अद्भुत विमान अब आपके यहाँ पड़ा है ।।९५।। महापद्म नामक कुबेर की निधि छीनकर आपने हस्तगत कर लिया है। केसरों से सुशोभित किंजल्किनी नाम की माला समुद्र ने आपको अर्पित कर दी है, जिसके कमल कभी भी नहीं कुम्हलाते और सदा हरे-भरे रहते हैं ।।९६।।

छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति ।
तथायं स्यन्दनवरो यः पुराऽऽसीत् प्रजापतेः ।।९७।।
मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वया हृता ।
पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ।।९८।।
निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः ।
वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ।।९९।।
एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते ।
स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ।।१००।।

ऋषिरुवाच ।।१०१।।

निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्ड-मुण्डयोः ।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ।।१०२।।
इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ।।१०३।।

सोना बरसाने वाला वरुणदेव का छत्र भी आपके घर में शोभित हो रहा है तथा प्रजापति का यह उत्तम रथ भी आपके पास उपलब्ध है ।।९७।। हे दैत्येश्वर ! मृत्यु की उत्क्रान्तिदा नामक शक्ति भी आपने अपने अधिकार में ले ली है तथा वरुण का पाश और समुद्रगर्भ के अनेकों रत्न आपके अनुज निशुम्भ के पास हैं। अग्नि ने स्वतः शुद्ध किये हुए दो वस्त्र आपको अर्पित किये हैं ।।९८-९९।।

हे दैत्यराज ! इस प्रकार आपने समस्त रत्नों का संग्रह कर लिया है, फिर यह स्त्रियों में रत्नमयी देवी को आपने क्यों छोड़ रखा है। इसे भी आप अपने अधिकार में कर लीजिए ।।१००।।

ऋषि ने कहा-।।१०१।। चण्ड-मुण्ड के मुख से ऐसी बात सुनकर शुम्भ ने अपने महादैत्य सुग्रीव को दूत बनाकर देवी के पास

स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने ।
सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ।।१०४।।

दूत उवाच ।।१०५।।

देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः ।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ।।१०६।।
अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु ।
निर्जिताखिल-दैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत् ।।१०७।।
मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ।।१०८।।
त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव गजरत्नं च हृत्वा देवेन्द्रवाहनम् ।।१०९।।

सन्देश कहलाने के लिए भेजा। उस दैत्य से शुम्भ ने कहा कि तुम उसे बातों में बहलाकर मेरे पास अतिशीघ्र लाने का प्रयत्न करना ।।१०२-१०३।। वह दूत पर्वत के उस मनोरम भाग में गया, जहाँ देवी विराजमान थीं। उनसे उस दैत्य ने मधुर वाणी में कहना प्रारम्भ किया ।।१०४।।

दूत ने कहा-।।१०५।। हे देवि! इस समय दैत्यराज शुम्भ ही इस त्रिभुवन के एकमात्र स्वामी हैं। मैं उनका दूत बनकर उनकी आज्ञा से तुम्हारे पास आया हूँ ।।१०६।। उनकी आज्ञा का पालन देवता लोग सदैव निर्विरोध रूप से करते आये हैं। कोई भी उनकी आज्ञा टालने का दुस्साहस नहीं कर सकता है। उन्होंने समस्त देवों पर विजय प्राप्त की है और तुम्हारे लिए जो सन्देश दिया है, उसे दत्तचित्त होकर सुनो ।।१०७।। समस्त विश्व मेरे अधीनस्थ है, देवता भी मेरी आज्ञा का पालन करते हैं। सम्पूर्ण यज्ञांशों को मैं ही भिन्न-

क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः ।
उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ।।११०।।
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ।।१११।।
स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम् ।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ।।११२।।
मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरुविक्रमम् ।
भज त्वं चञ्चलापाङ्गि रत्नभूतासि वै यतः ।।११३।।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।
एतद् बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ।।११४।।

भिन्न रूपों से ग्रहण करता हूँ ।।१०८।। तीनों लोकों के श्रेष्ठतम रत्न सभी मेरे अधिकार में हैं। देवराज इन्द्र का वाहन श्रेष्ठतम रत्न ऐरावत नाम का हाथी मेरे पास है ।।१०९।। क्षीरसागर के मन्थनकाल में उत्पन्न अश्वरत्न उच्चैःश्रवा को अब देवताओं ने मुझे अर्पित कर दिया है ।।११०।। हे सुन्दरि ! इन पदार्थों के अतिरिक्त और भी जितने अमूल्य रत्न या पदार्थ देवों, गन्धर्वों या नागों के अधिकार में थे, वे सब अब मेरे पास उपलब्ध हैं ।।१११।। हे देवि ! हम लोग तुम्हें स्त्रियों में रत्न मानते हैं। अतएव तुम हमारे पास आओ, क्योंकि उन अधिकृत रत्नों का उपभोग करने वाला एकमात्र मैं ही हूँ ।।११२।। हे चंचल चितवन वाली सुन्दरि ! तुम मेरे या मेरे भाई महापराक्रमी निशुम्भ के पास रहकर दुर्लभ सुखों का उपभोग करो, क्योंकि तुम रत्नस्वरूपिणी हो ।।११३।। मेरा वरण करके तुम अतुल सम्पत्ति तथा ऐश्वर्य की उत्तराधिकारी बनोगी। अपनी बुद्धि से ऐसा विचार कर तुम मेरी पत्नी बनना स्वीकार करो ।।११४।।

ऋषिरुवाच ॥११५॥
इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥११६॥

देव्युवाच ॥११७॥
सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किंचित् त्वयोदितम् ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥११८॥
किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्यां तत् क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात् प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥११९॥
यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥१२०॥
तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः ।
मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥१२१॥

ऋषि ने कहा–॥११५॥ दूत के मुख से ऐसी उक्ति सुनकर कल्याणमयी भगवती जगद्धात्री दुर्गा मन में गम्भीर भाव से मुसकराते हुए उस दूत से कहने लगीं ॥११६॥

देवी ने उस दूत को सम्बोधित करते हुए कहा–॥११७॥ हे दूत ! तुमने जो बात कही है, वह बिल्कुल सत्य है, इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है। शुम्भ तीनों लोकों का इस समय स्वामी और उसका भाई निशुम्भ भी उसी के सदृश पराक्रमशील है ॥११८॥ किन्तु इस विषय में मैंने पहले जो प्रतिज्ञा ठान ली है, उसे मैं किस प्रकार तोड़ सकती हूँ। मैंने अपनी अल्पज्ञता के कारण जो प्रतिज्ञा कर रखी है, उसे तुम्हें सुनाती हूँ ॥११९॥ मेरी प्रतिज्ञा है कि जो भी प्राणी मुझे समर में पराजित करेगा, जो मेरे अभिमान का खण्डन करेगा तथा जो मेरे ही समान पराक्रमी तथा साहसी

दूत उवाच ॥१२२॥

अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः ।
त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः ॥१२३॥
अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि ।
तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥१२४॥
इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे ।
शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् ॥१२५॥
सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ।
केशाकर्षण-निर्धूत-गौरवा मा गमिष्यसि ॥१२६॥

होगा, वही मेरा स्वामी बन सकेगा ॥१२०॥ इसलिए महादैत्य शुम्भ या निशुम्भ स्वयं ही जब यहाँ आकर मुझे पराजित कर दें तो मेरा विवाह उनसे हो सकता है। इसमें विलम्ब करना उचित नहीं है ॥१२१॥

तब देवी से दूत ने कहा-॥१२२॥ हे देवि ! तुम मेरे सामने ऐसी अभिमानपूर्ण बातें न करो। इस ब्रह्माण्ड में ऐसा कौन है जो शुम्भ-निशुम्भ के सामने खड़ा होने का साहस कर सके ॥१२३॥ अन्य निम्नकोटि के दैत्यों के सामने भी सारे देवता मिलकर युद्ध में पार नहीं पा सकते, फिर तुम अकेली स्त्री होकर क्या कर सकती हो ? ॥१२४॥ जिन शुम्भ आदि महापराक्रमी दैत्यों के आगे इन्द्रादि देवता भी भय के कारण युद्ध-विमुख हो गये, उनके सामने तुम अकेली स्त्री होकर कैसे जा सकती हो ॥१२५॥ अतएव तुम मेरा ही कहना मानकर शुम्भ-निशुम्भ के पास चलो। ऐसा करने से तुम्हारी महत्ता की रक्षा होगी, अन्यथा जब वे तुम्हारे केश पकड़कर बलपूर्वक घसीटते हुए ले जायेंगे, तब तुम्हें अपनी मर्यादा खो देनी पड़ेगी ॥१२६॥

देव्युवाच ॥१२७॥

एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥१२८॥
स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः ।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत् ॥ॐ॥१२९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
देव्या दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥
उवाच १, त्रिपान्मन्त्राः ६६, श्लोकाः ५४,
एवम् १२९, एवमादितः ॥३८८॥

दूत की बात सुनकर देवी ने उत्तर दिया-॥१२७॥ तुम्हारा कहना उचित ही है, शुम्भ-निशुम्भ निःसंदेह बलवान् और पराक्रमी दैत्य हैं, किन्तु मैं क्या करूँ ? मैंने पहले बिना सोचे-समझे ही ऐसी प्रतिज्ञा कर ली है कि उसे कैसे भंग करूँ ? ॥१२८॥ अतएव अब तुम वापस लौट जाओ और अपने स्वामी से मेरी कही हुई बातें आदर पूर्वक समझाकर कहो। उसके बाद वे जैसा उचित समझेंगे वैसा करेंगे ॥१२९॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के
अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित दूत-संवाद
नामक पाँचवाँ अध्याय समाप्त ॥५॥

षष्ठोऽध्यायः (६)

ध्यानम्

ॐ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरुरत्नावली-
भास्वद् देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम्।
माला-कुम्भ-कपाल-नीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां
सर्वज्ञेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः।
समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात्॥२॥
तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः।
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम्॥३॥
हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः।
तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम्॥४॥

ध्यान-मैं, सर्वज्ञेश्वर भैरव के अंक की निवासिनी परम श्रेष्ठ पद्मावती देवी की आराधना करता हूँ। वे देवी नागराज के आसन पर आसीन हैं, नागों के फणों में शोभित होनेवाली मणिमाला से उनका शरीर भासित हो रहा है। उनके अंगों की दीप्ति सूर्य के समान है और तीन नेत्र उनके सौन्दर्य का वर्धन कर रहे हैं। उनके हाथों में माला, कुम्भ, कपाल और कमल हैं तथा उनके मस्तक में अर्द्धचन्द्राकार मुकुट शोभायमान हो रहा है।

ऋषि कहने लगे-॥१॥ देवी के मुख से ऐसी बात सुनकर दूत को बहुत ही आश्चर्य हुआ और उसने दैत्यराज के पास जाकर विस्तारपूर्वक समाचार कहा॥२॥ दूत से ऐसा उत्तर सुनकर वह दैत्यराज अत्यन्त क्रोधित हो उठा और अपने सेनानायक धूम्रलोचन

तत्परित्राणदः कश्चिद् यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः ।
स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ।।५।।

ऋषिरुवाच ।।६।।

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः ।
वृत्तः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ।।७।।
स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम् ।
जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भ-निशुम्भयोः ।।८।।
न चेत् प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति ।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ।।९।।

देव्युवाच ।।१०।।

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः ।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ।।११।।

से कहा ।।३।। धूम्रलोचन ! तुम अतिशीघ्र अपनी सेना के साथ जाकर उस दुष्ट स्त्री का केश बलपूर्वक खींचते हुए यहाँ उठा लाओ ।।४।। उसका रक्षक यदि यक्ष, गन्धर्व, देवता आदि कोई भी हो तो तुम उसे अवश्य ही मार डालना ।।५।।

तब ऋषि ने कहा-।।६।। शुम्भ का आदेश पाकर वह धूम्रलोचन अपनी साठ हजार सेना के साथ वहाँ से तुरन्त ही चल पड़ा ।।७।। वहाँ पहुँचकर उसने हिमालय पर निवास करनेवाली देवी को देखा और ललकार कर आदेश भरे स्वर में कहा-अरी ! तू मेरे स्वामी शुम्भ-निशुम्भ के पास चल ।।८।। यदि इस समय तुम स्वेच्छा से मेरे साथ नहीं चलेगी तो मैं तुम्हारे केश पकड़कर घसीटते हुए जबरन तुम्हें ले चलूँगा ।।९।।

तब देवी ने उससे कहा-।।१०।। तुम दैत्यराज के आदेश से

ऋषिरुवाच ॥१२॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः ।
हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥१३॥
अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥१४॥
ततो धुतसटः कोपात् कृत्वा नादं सुभैरवम् ।
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥१५॥
कांश्चित् करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रम्य चाधरेणान्यान् स जघान महासुरान् ॥१६॥
केषाञ्चित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥१७॥

आये हो और तुम स्वयं भी बलवान् हो तथा तुम्हारे साथ इस समय विशाल-वाहिनी भी है। ऐसी अवस्था में यदि तुम मुझे बलात् भी ले चलोगे तो मैं तुम्हारा क्या बिगाड़ सकूँगी ? ॥११॥

ऋषि ने कहा-॥१२॥ देवी के उत्तर से धूम्रलोचन उनकी ओर दौड़ पड़ा। तब देवी अम्बिका ने 'हुँ' शब्द का उच्चारण करके उसे भस्मीभूत कर डाला ॥१३॥ तत्पश्चात् क्रुद्ध हुई उस विशाल सेना ने देवी पर आक्रमण कर दिया। फिर अम्बिका और राक्षसी सेनाओं में तीक्ष्ण बाणों, शक्तियों तथा फरसों का युद्ध आरम्भ हो गया ॥१४॥ इतने में ही देवी का वाहन सिंह भी क्रोध से गर्जन करके अपने गरदन के बालों को हिलाता हुआ असुरों की सेना में कूद पड़ा ॥१५॥ उस सिंह ने कुछ राक्षसों को पंजों के खरोंच से, कितनों को अपने जबड़ों से विदीर्ण करके और कितनों को धाराशायी करके ओष्ठ की दाढ़ों का प्रहार करके मार डाला ॥१६॥

विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः ॥१८॥
क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥१९॥
श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम्।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः ॥२०॥
चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः।
आज्ञापयामास च तौ चण्ड-मुण्डौ महासुरौ ॥२१॥
हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुभिः परिवारितौ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥२२॥

कितने दानवों का उस सिंह ने अपने नाखूनों से पेट फाड़ दिया, कितनों का सिर थप्पड़ मार-मार कर धड़ से अलग कर दिया ॥१७॥ कितनों की भुजाएँ और मस्तक उसने काट खाये तथा अपनी गरदन के बाल हिलाते हुए उसने कितनों के ही पेट चीरकर उनके रक्तपान कर डाले ॥१८॥ अत्यन्त क्रोधित देवी के उस वाहन महाबली सिंह ने क्षणमात्र में ही सारी दानवी सेना का अन्त कर दिया ॥१९॥

शुम्भ राक्षस को जब यह समाचार मिला कि युद्ध में धूम्रलोचन मारा गया और उसकी सेना सिंह के द्वारा नष्ट हो गयी ॥२०॥ तब वह अत्यन्त कुपित हुआ। क्रोध में आकर उसके अधरोष्ठ कंपित हो उठे। उसने चण्ड-मुण्ड नामक दो महाबली दैत्यों को आदेश दिया ॥२१॥ हे चण्ड-मुण्ड! तुम लोग अपनी विशाल सेना लेकर जाओ और उस देवी को घसीटकर अथवा उसे बाँधकर पकड़ लाओ। यदि इस प्रकार उसका आना कठिन हो तो उस पर समस्त दानवी सेना के शस्त्रों का प्रहार करके वहीं पर वध

केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि ।
तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ।। २३ ।।
तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते ।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ।।ॐ।। २४ ।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्य शुम्भ-निशुम्भ-सेनानीधूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः ।।६।। उवाच ४, श्लोकाः २०, एवम् २४, एवमादितः ।।४१२।।

●

सप्तमोऽध्यायः (७)

ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम् ।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलसच्चोलिकां रक्तवस्त्रां
मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुर-मधु-मदां चित्रकोद्भासिभालाम् ।।

कर देना ।।२२-२३।। उस दुष्टा की हत्या हो जाने तथा सिंह के मारे जाने पर उस अम्बिका को पाश से बद्ध करके यहाँ तुरन्त ही लौट आओ ।।२४।।

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित सेनापति शुम्भ-निशुम्भ एवं धूम्रलोचन-वध नामक छठा अध्याय समाप्त ।।६।।

●

ध्यान – मैं मातंगी देवी का चिन्तन करता हूँ। वे रत्नजटित सिंहासन पर विराजमान होकर बोलते हुए तोते के मधुर-शब्द को श्रवण कर रही हैं। वे श्याम वर्ण वाली देवी अपने एक पाद कमल

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्डपुरोगमाः ।
चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥२॥
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥३॥
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः ॥४॥
ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति ।
कोपेन चास्या वदनं मषीवर्णमभूत्तदा ॥५॥

पर रखकर मस्तक पर अर्धचन्द्र धारण किये हुए हैं। कह्लार फूलों की माला पहने हुए वे वीणावादन कर रही हैं। उनके अंग में कंचुकी कसी हुई है। वे लाल रंग की साड़ी धारण कर हाथ में शंखपात्र लिये हैं। उनके मुख पर मधु के हलके नशे का आभास हो रहा है और उनके ललाट में बिन्दी लगी हुई है।

ऋषि ने कहा—॥१॥ इसके पश्चात् शुम्भ दैत्य के आदेश से वे चण्ड-मुण्ड नामक दैत्य अपनी चतुरंगिणी (हाथी, घोड़े, रथ, पैदल) सेना को अस्त्र-शस्त्र से सज्जित करके चल पड़े ॥२॥ वहाँ पहुँच कर पर्वतराज हिमालय के स्वर्णमय शिखर के ऊपर सिंह पर आरूढ़ देवी को देखा। वे मन्द हास्य कर रही थीं ॥३॥ उन देवी को देखकर दानवी सेना उन्हें पकड़ने के लिए झपट पड़ी। किसी राक्षस ने धनुष उठाया, तो किसी ने म्यान से तलवार खींच ली और कुछेक देवी के पास आकर खड़े हो गये ॥४॥ तब अम्बिका ने उन पर अत्यन्त क्रोध प्रकट किया, उस समय क्रोधानल में दग्ध होने के कारण उनका मुख काला दिखाई पड़ने लगा ॥५॥

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम्।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥६॥
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा ॥७॥
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ॥८॥
सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान्।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥९॥
पार्ष्णि-ग्राहाङ्कुशग्राहि-योध-घण्टा-समन्वितान्।
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥१०॥

उनकी भौंहें तन गयीं और वहाँ से विकरालमुखी काली का प्रादुर्भाव हुआ। उनके हाथ में तलवार और पाश था ॥६॥ वे चीते के चमड़े की साड़ी पहने नरमुण्डों की माला से विभूषित होकर हाथ में विचित्र प्रकार की तलवार धारण किये हुए थीं। उनके शरीर का मांस सूखकर केवल अस्थिपंजर शेष रह गया था, जिसके कारण उनकी आकृति बड़ी ही डरावनी लग रही थी ॥७॥ उनका मुख-गह्वर बहुत विशाल था, जीभ लप-लप करने के कारण वे बहुत ही भयंकर जान पड़ रही थीं। उनके नेत्र भीतर की ओर गड्ढे में धँसे हुए और रक्तिम थे, वे भयंकर गर्जना से सभी लोगों को कम्पित कर रही थीं ॥८॥

वे कालिका देवी बड़े-बड़े असुरों का बध करती हुई प्रबल वेग से आसुरी सेना पर टूट पड़ीं और उन सबको अपना ग्रास बनाने लगीं ॥९॥ वे देवी पार्श्वरक्षकों, अंकुशधारी महावतों, बड़े-बड़े योद्धाओं और घण्टाधारी कितने ही विशालकाय हाथियों को एक

तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यतिभैरवम् ॥११॥
एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।
पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥१२॥
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः ।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥१३॥
बलिनां तद्बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् ।
ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत् तथा ॥१४॥
असिना निहताः केचित् केचित् खट्वाङ्गताडिताः ।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥१५॥
क्षणेन तद्बलं सर्वमसुराणां निपातितम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥१६॥

हाथ से पकड़ कर मुँह में निगल लेती थीं ॥१०॥ इसी प्रकार घोड़े, रथ और सारथि-सहित रथी सैनिकों को मुँह में डालकर वे बहुत ही भयानक आवाज में चबा रही थीं ॥११॥ किसी के बाल खींचकर, किसी का गला दबोंचकर, किसी को पैरतले रौंदकर और किसी को छाती के धक्के से भूमि पर गिराकर यमलोक भेज देती थीं ॥१२॥ वे दैत्यों द्वारा निक्षिप्त बड़े-बड़े अस्त्रों-शस्त्रों को मुँह से पकड़कर दाँतों से चूर-चूर कर डालती थीं ॥१३॥ काली ने उन बलशाली, दुराचारी दैत्यों की समस्त सेना को मसल दिया, कुछेक को खा गयीं और कितने को ही वहाँ से खदेड़ दिया ॥१४॥ कोई तलवार की मार से मार डाले गये, कोई खट्वांग (बहुत बड़ी तलवार) से पीटे गये और कितने ही नुकीले दाँतों से पिसकर मारे गये ॥१५॥ इस प्रकार देवी ने क्षणभर में उस आसुरी सेना का

शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः ।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ।।१७।।
तानि चक्राण्ड्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।
बभुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ।।१८।।
ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी ।
काली कराल-वक्त्रान्तर्दुर्दर्श- दशनोज्ज्वला ।।१९।।
उत्थाय च महासिं हं देवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ।।२०।।
अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद् भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ।।२१।।
हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ।।२२।।

संहार कर डाला। यह देखकर चण्ड उन विकराल काली की ओर दौड़ पड़ा ।।१६।। फिर महादैत्य मुण्ड ने बाणों की वर्षा करके तथा हजारों बार प्रयुक्त चक्रों से उन भयानक देवी को ढँक दिया ।।१७।। देवी के मुख में प्रविष्ट होते हुए वे अनेकों चक्र ऐसे जान पड़े मानो सूर्य के बहुत से मण्डल बादलों में समा गये हों ।।१८।। तब भयंकर गर्जना करने वाली काली ने रोष में भीषण अट्टहास किया। उस समय उनके विकराल मुख के भीतर कठिनता से दिखाई पड़ने वाले दाँतों की चमक से वे अत्यन्त उज्जवल दिखाई पड़ रही थीं ।।१९।। फिर तो देवी ने बहुत बड़ी तलवार से 'हं' शब्द का उच्चारण करके चण्ड के केश पकड़ लिये और अपनी तलवार से उसका मस्तक धड़ से अलग कर दिया ।।२०।।

चण्ड को मरा देखकर मुण्ड देवी की ओर दौड़ पड़ा। तब देवी ने क्रोधित होकर अपनी तलवार के आघात से उसे भी धराशायी कर दिया ।।२१।। चण्ड-मुण्ड के मरते ही बची-खुची

शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥२३॥
मया तवात्रोपहृतौ चण्ड-मुण्डौ महापशू।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥२४॥

ऋषिरुवाच ॥२५॥

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड-मुण्डौ महासुरौ।
उवाच कालीं कल्याणीं ललितं चण्डिका वचः ॥२६॥
यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवी भविष्यसि ॥ॐ॥२७॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये चण्डमुण्डवधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ उवाच २, श्लोकाः २५, एवम् २७, एवमादितः ॥४३९॥

सेना भय से व्याकुल होकर रणभूमि से पलायित हो गयी ॥२२॥ तब देवी चण्ड-मुण्ड के कटे हुए मस्तक को हाथ में लेकर चण्डिका के पास पहुँचकर विकट अट्टहास करके कहा-॥२३॥ हे देवि ! मैंने इन महापशु चण्ड-मुण्ड को तुम्हें अर्पित किया है। अब युद्धभूमि में तुम शुम्भ और निशुम्भ का स्वयं ही संहार करना ॥२४॥

ऋषि ने कहा-॥२५॥ चण्ड-मुण्ड के मस्तक को देखकर कल्याणमयी चण्डी ने काली से मधुर स्वर में कहा-॥२६॥ देवि ! तुम चण्ड और मुण्ड को लेकर मेरे पास आयी हो, इसलिए विश्व में तुम्हारी ख्याति चामुण्डा के नाम से होगी ॥२७॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित चण्ड-मुण्ड वध नामक सातवाँ अध्याय समाप्त ॥७॥

अष्टमोऽध्यायः (८)

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं
धृत - पाशाङ्कुश - बाण -चापहस्ताम् ।
अणिमादिभिरावृतां मयूखै-
रहमित्येव विभावये भवानीम् ।।

'ॐ' ऋषिरुवाच ।।१।।

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ।।२।।
ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् ।
उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ।।३।।
अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः ।
कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ।।४।।

ध्यान-मैं अणिमा आदि सिद्धियों (सिद्धियाँ आठ मानी गयी हैं, यथा- अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्य, प्राक्राम्य, ईशित्व और वशित्व) की रश्मियों से युक्त भवानी का ध्यान करता हूँ। उनका शरीर रक्तवर्ण, नेत्र करुणा के तरंगों से युक्त तथा हाथों में पाश, अंकुश, बाण और धनुष शोभित हो रहे हैं।

ऋषि ने कहा-।।१।। चण्ड-मुण्ड दैत्यों के मारे जाने पर दैत्यराज शुम्भ के मन में अत्यन्त क्रोध उत्पन्न हुआ और उसने अपनी समस्त दानवी सेना को युद्ध के लिए एक साथ प्रस्थान करने की आज्ञा दी ।।२-३।।

शुम्भ ने कहा-आज उदायुध नामक छियासी दैत्य सेना नायक अपनी सम्पूर्ण सेनाओं के साथ युद्धभूमि में चले। कम्बु नाम वाले

कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ।।५।।
कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः ।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ।।६।।
इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्य-सहस्त्रैर्बहुभिर्वृतः ।।७।।
आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम् ।
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ।।८।।
ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान् नृप ।
घण्टास्वनेन तन्नादमम्बिका चोपबृंहयत् ।।९।।
धनुर्ज्या-सिंह-घण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा ।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना ।।१०।।

दानवों के चौरासी सेनापति अपनी वाहिनी के साथ युद्धस्थल में जायें ।।४।। पचास कोटिवीर्य कुल के और सौ धौम्रकुलोत्पन्न असुर सेनापति मेरी आज्ञा से युद्ध में रवाना हो जायें ।।५।। कालक, दौर्हृद, मौर्य और कालकेय दैत्य भी युद्ध के लिए मेरी आज्ञा से तुरन्त तैयार होकर समरभूमि में चल दें ।।६।। क्रूर शासक असुरपति शुम्भ इस प्रकार सबको आदेश देकर स्वयं सहस्त्रों बड़े-बड़े सैन्यदल के साथ युद्ध के लिए रवाना हुआ ।।७।। उसकी विशाल सेना को अपनी ओर बढ़ते देखकर देवी चण्डिका ने धनुष की टंकार से पृथ्वी और आकाश को गुंजायमान कर दिया ।।८।। तत्पश्चात् देवी के वाहन सिंह ने भी भयंकर शब्द से दहाड़ना शुरू कर किया। फिर तो अम्बिका ने घण्टे के घोर रव से उस ध्वनि को और भी वर्धित कर दिया ।।९।। धनुष की टंकार, सिंह की

तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारिताः ।।११।।
एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् ।
भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः ।।१२।।
ब्रह्मेश-गुह-विष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्-रूपैश्चण्डिकां ययुः ।।१३।।
यस्य देवस्य यद्-रूपं यथाभूषणवाहनम् ।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ ।।१४।।
हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः ।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ।।१५।।
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी ।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा ।।१६।।

गर्जना और घण्टे की ध्वनि से समस्त दिशाएँ गुंजित हो उठीं। उस भीषण शब्द से काली ने अपने विकट मुख को और भी विस्तृत कर लिया तथा इस प्रकार से वह पूर्ण विजयिनी बनीं ।।१०।। उस भीषण नाद को सुनकर आसुरी सेनाओं ने चण्डिका, काली तथा सिंह को क्रोधपूर्वक चतुर्दिक् से घेर लिया ।।११।। हे राजन् ! इसी समय असुरों के संहार तथा देवताओं के उत्थान के लिए ब्रह्मा, शिव, कार्तिकेय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवों की महान् पराक्रम-सम्पन्न शक्तियाँ भी उनके शरीरों से निकलकर उन्हीं के रूप में देवी चण्डिका के पास गयीं ।।१२-१३।। देवताओं के रूप, वेश, वाहन आदि के अनुरूप ही उनकी शक्तियाँ असुरों से युद्ध करने के लिए आ गयीं ।।१४।। सर्वप्रथम हंस की सवारी पर बैठी हुई अक्षसूत्र और कमण्डलु से सुशोभित ब्रह्मा जी की शक्ति प्रकट हुई, जिसे ब्रह्माणी कहा जाता है ।।१५।।

कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ।।१७।।
तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-खड्ग-हस्ताभ्युपाययौ ।।१८।।
यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः ।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम् ।।१९।।
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः ।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेप-क्षिप्त-नक्षत्रसंहतिः ।।२०।।
वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता ।
प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ।।२१।।

महादेव की शक्ति बैल पर आरूढ़ होकर हाथों में श्रेष्ठ त्रिशूल धारण कर, शेषनाग का कङ्गन पंहने, मस्तक में चन्द्ररेखा से सज्जित होकर वहाँ आ गयीं ।।१६।। कार्तिकेय की शक्तिरूपा जगदम्बिका उन्हीं के अनुरूप मयूर पर आरूढ़ हो हाथ में शक्ति लेकर उन दानवों से युद्ध करने के लिए आ गयीं ।।१७।। इसी प्रकार भगवान् विष्णु की शक्ति गरुड़ के वाहन पर विराजमान होकर शंख, चक्र, गदा, धनुष तथा खड्ग लिये वहाँ उपस्थित हुईं ।।१८।। अनुपम यज्ञवाराह का रूप धारण करने वाले भगवान् विष्णु की वह शक्ति भी वाराह (शूकर) शरीर धारण कर वहाँ आ गयीं ।।१९।। भगवान् नृसिंह की नारसिंही शक्ति भी उन्हीं के अनुरूप शरीर धारण करके वहाँ आ पहुँची। उनकी गरदन के बालों के झोंके से आकाश की तारिकाएँ बिखर जाती थीं ।।२०।। इसी प्रकार इन्द्र की शक्ति हाथ में वज्र लिये ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर आयी। उस शक्ति के भी इन्द्र के समान ही सहस्र नेत्र थे ।।२१।।

ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः ।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकाम् ॥२२॥
ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा ।
चण्डिकाशक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी ॥२३॥
सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूत त्वं गच्छ भगवन् पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ॥२४॥
ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥२५॥
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥२६॥
बलावलेपादथ चेद् भवन्तो युद्धकाङ्क्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥२७॥

तब उन समस्त देवशक्तियों से आवृत शिवजी ने चण्डिका से कहा – मेरी प्रसन्नता के लिए तुम अब तुरन्त ही इन असुरों का बध करो ॥२२॥

तब देवी के शरीर से अत्यन्त भीषण और अति उग्र चण्डिका-शक्ति प्रकट हुई, जिसके द्वारा सैकड़ों शृगालिनों की-सी आवाज हो रही थी ॥२३॥ उस अपराजिता देवी ने धूमिल जटा वाले महादेव जी से कहा-भगवन् ! आप शुम्भ-निशुम्भ के पास दूत के वेश में जाइए ॥२४॥ और उन दोनों दानवों से कहिए। उनके साथ ही युद्ध में उपस्थित अन्य दानवों को भी यह सन्देश सुनाइए ॥२५॥ दैत्यों ! यदि तुम्हें जीने की इच्छा है तो पातालपुरी को लौट जाओ। इन्द्र को त्रैलोक्य का राज्य प्राप्त हो और देवगण यज्ञांश का उपभोग करें ॥२६॥ यदि बल के मद में तुम सभी युद्ध के इच्छुक हो तो

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् ।
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ।।२८।।
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः ।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता ।।२९।।
ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः ।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ।।३०।।
सा च तान् प्रहितान् बाणाञ्छूल-शक्ति-परश्वधान् ।
चिच्छेद लीलयाऽऽध्मात-धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ।।३१।।
तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान् ।
खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन् कुर्वती व्यचरत्तदा ।।३२।।
कमण्डलु - जलाक्षेप-हतवीर्यान् हतौजसः ।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन येन स्म धावति ।।३३।।

आओ। मेरी योगिनियाँ तुम्हारे कच्चे मांसभक्षण से तृप्ति पावें ।।२७।। उस देवी ने भगवान् शिव को दूत का कार्य सौंपा था, इसलिए वह 'शिवदूती' के नाम से जगत् में विख्यात हुई हैं ।।२८।। वे दैत्य भी शिवजी के मुँह से देवी की बात सुनकर कुपित हो गये और कात्यायनी की ओर लपके ।।२९।। तत्पश्चात् वे दैत्य क्रुद्ध होकर देवी पर बाण, शक्ति और ऋष्टि आदि अस्त्रों की वर्षा करने लगे ।।३०।। तब देवी ने भी धनुष की टंकार करके दैत्यों द्वारा निक्षिप्त, बाण, शूल, शक्ति, परशु आदि को खिलवाड़ में ही काट दिया ।।३१।। फिर काली आगे आकर राक्षसों को शूल के आघात से चीरने लगीं और खट्वांग के द्वारा उनको विध्वंस करती हुई रणस्थल में विचरण करने लगीं ।।३२।। ब्रह्माणी भी अपना कमण्डलु लेकर जिस ओर निकल जाती थीं उधर ही जल छिड़क कर शत्रुओं को तेज तथा

माहेश्वरी-त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी।
दैत्यान् जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना ॥३४॥
ऐन्द्रीकुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥३५॥
तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः।
वाराहमूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ॥३६॥
नखैर्विदारितांश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान्।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा ॥३७॥
चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा ॥३८॥
इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान्।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥३९॥

पराक्रमहीन कर देती थीं ॥३३॥ माहेश्वरी ने त्रिशूल, वैष्णवी ने चक्र तथा कार्तिकेय ने अपनी शक्ति के प्रहार से दानवों का नाश प्रारम्भ कर दिया ॥३४॥ इन्द्राणी के वज्र से आहत होकर सैकड़ों दैत्य खून की धारा बहाते हुए भूमि पर गिर पड़े ॥३५॥ वाराही-शक्ति ने कितने ही राक्षसों को थूथुन की चोट से नष्ट कर दिया। दाढ़ों के अग्रभाग से कितने की छाती को विद्ध कर दिया तथा कितने ही चक्र की चोट खाकर धरती पर गिर पड़े ॥३६॥ नारसिंही भी कितने ही दैत्यों को अपने नाखूनों से फाड़कर खा जातीं और सिंहनाद करके सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजाती हुई रणभूमि में विचरण करने लगीं ॥३७॥

कितने ही राक्षसगण शिवदूती के प्रबल अट्टहास से भयभीत होकर रणभूमि पर लोटने लगे। उनके गिरते ही शिवदूती उन्हें अपना भक्ष्य बना लेती थीं ॥३८॥

पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान् ।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥४०॥
रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणस्तदासुरः ॥४१॥
युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः ।
ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥४२॥
कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥४३॥
यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥४४॥
ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः ।
समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्रपातातिभीषणम् ॥४५॥

इस प्रकार क्रुद्ध देवियों के द्वारा बड़े-बड़े असुरों का संहार होते देख दानवी सेना पलायित होने लगी ॥३९॥ मातृगणों से त्रस्त होकर युद्ध से विमुख होते दैत्यों को देखकर रक्तबीज नामक महा-असुर अत्यन्त कुपित होकर युद्धभूमि में आ पहुँचा ॥४०॥ उसके शरीर से खून की बूँद टपकते ही उसी आकार का दूसरा दैत्य उत्पन्न हो जाता था ॥४१॥ महादैत्य रक्तबीज हाथ में गदा लेकर इन्द्रशक्ति के साथ युद्ध करने लगा। तब ऐन्द्री अपने वज्र के प्रहार से उसे आहत कर दिया ॥४२॥ वज्र से आहत होकर उसके शरीर से पृथ्वी पर रक्त टपकने लगा, जिससे उसी के समान अन्य दैत्य पैदा होने लग गये ॥४३॥ उसके शरीर से रक्त की जितनी बूँदें पृथ्वी पर गिरी थीं, उतने ही दैत्य उत्पन्न हो गये, जो उसी के समान पराक्रमी थे ॥४४॥ वे नये उत्पन्न राक्षस

पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥४६॥
वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥४७॥
वैष्णवीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः।
सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः ॥४८॥
शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥४९॥
स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक्।
मातॄः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥५०॥
तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥५१॥

मातृगणों के साथ भयंकर युद्ध करने लगे ॥४५॥ इन्द्राणी के वज्र-प्रहार से उसका मस्तक आहत होकर खून बहाने लगा, जिससे हजारों नये दैत्य उत्पन्न होकर सामने आ गये ॥४६॥ वैष्णवी ने अपने चक्र से रक्तबीज पर प्रहार किया, फिर ऐन्द्री ने गदा की चोट से घायल कर दिया ॥४७॥ वैष्णवी के चक्र से घायल होने के कारण उसके शरीर से बहुत अधिक रक्तपात हुआ, जिसके कारण इतने दैत्यों की उत्पत्ति हुई कि समस्त जगत् व्याप्त हो गया ॥४८॥ कौमारी ने शक्ति, वाराही ने खड्ग और माहेश्वरी ने त्रिशूल चलाकर रक्तबीज को आहत कर दिया ॥४९॥ अत्यन्त कुपित होकर रक्तबीज ने भी अपनी गदा से मातृशक्तियों पर आघात किया ॥५०॥ शक्ति, शूल आदि के द्वारा घायल होने से उसके रक्त के द्वारा अगणित महादैत्य उत्पन्न हुए ॥५१॥

तैश्चासुरासृक्सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् ।
व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ।।५२।।
तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा ।
उवाच कालीं चामुण्डे विस्तीर्णं वदनं कुरु ।।५३।।
मच्छस्त्रपातसम्भूतान् रक्तबिन्दून् महासुरान् ।
रक्त बिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ।।५४।।
भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान् महासुरान् ।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ।।५५।।
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् ।।५६।।

इस प्रकार उस महादैत्य से उत्पन्न नये दैत्यों के द्वारा समस्त विश्व आच्छादित हो गया। इस दृश्य को देखकर देवता लोग भयभीत हो गये ।।५२।। देवताओं को हतोत्साह देख चण्डिका ने शीघ्रता से काली से कहा–'चामुण्डे ! तुम अपना मुख और भी अधिक विस्तृत करो ।।५३।। मेरे शस्त्राघात से बहकर खून से उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को तुम अपने इस वेगवान् मुख से भक्षण कर डालो ।।५४।। इसी प्रकार रक्त से उत्पन्न होने वाले नये राक्षसों को तुम अपना भक्ष्य बनाकर रणस्थल में विचरण करती रहो। ऐसा करते रहने से जब उसके शरीर का सम्पूर्ण रक्त बहकर निकल जायेगा तब वह स्वयं ही मृत्यु को प्राप्त होगा ।।५५।। उन भयंकर दैत्यों को जब तुम चबा डालोगी तब दूसरे दैत्य उत्पन्न नहीं होंगे।' ऐसा कहकर चण्डिका देवी ने अपने शूल से रक्तबीज पर प्रहार किया ।।५६।।

मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम्।
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥५७॥
न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि।
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥५८॥
यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति।
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः ॥५९॥
तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम्।
देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ॥६०॥
जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम्।
स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमाहतः ॥६१॥
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः।
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥६२॥

और काली ने अपने मुख में उसका रक्त भर लिया। तब रक्तबीज ने चण्डिका पर गदा से आघात पहुँचाया ॥५७॥ किन्तु गदा के उस प्रहार से देवी को कोई क्षति नहीं हुई। रक्तबीज के घायल शरीर से बहुत अधिक रक्तपात हुआ ॥५८॥ किन्तु खून बहते ही चामुण्डा ने उस रक्त को अपने मुँह में भर लिया। रक्त गिरने से काली के मुख में जो दैत्य उत्पन्न होते थे, उन्हें काली चबा डालती थीं और उसने रक्तबीज का खून भी पान कर लिया। तब देवी ने रक्तबीज को वज्र, बाण, खड्ग (तलवार), ऋष्टि आदि के प्रहार से मार डाला। हे राजन्! इस प्रकार शस्त्रों के समूह से आहत एवं रक्तहीन होकर महादैत्य रक्तबीज भूतल पर गिर पड़ा। हे नरश्रेष्ठ! इसे देखकर देवों में हर्ष का समुद्र उमड़ पड़ा ॥५९-६२॥

तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ।।ॐ।।६३।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
रक्तबीजवधो नामाष्टमोऽध्यायः ।।८।। उवाच १,
अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ६१, एवम् ६३,
एवमादितः ।।५०२।।

●

नवमोऽध्यायः (९)

ध्यानम्

ॐ बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां
पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः ।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्र-
मर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ।।

उन असुरों के रक्तपात के मद से उन्मत्त होकर सम्पूर्ण मातृसमूह नृत्य करने लग गया ।।६३।।

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के
अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित रक्तबीज-वध
नामक आठवाँ अध्याय समाप्त ।।८।।

●

ध्यान—उन अर्धनारीश्वर का रंग बन्धूक पुष्प और सुवर्ण के समान रक्तपीतयुक्त है, उनकी भुजाओं में सुन्दर स्फटिक की माला, पाश, अंकुश और वरद-मुद्रा सुशोभित है, उनका आभरण अर्धचन्द्र तथा वे तीन नेत्रों से शोभायमान हो रहे हैं, ऐसे अर्धनारीश्वर की मैं शरण में हूँ।

'ॐ' राजोवाच ॥१॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् भवता मम ।
देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥२॥
भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते ।
चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥३॥

ऋषिरुवाच ॥४॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते ।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥५॥
हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥६॥
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥७॥
आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृत्तः ।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात् कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥८॥

राजा ने कहा–॥१॥ हे भगवन्! आपने रक्तबीज बध सम्बन्धित देवी चरित्र का विचित्र माहात्म्य मुझे बताया॥२॥ रक्त-बीज की मृत्यु के अनन्तर क्रुद्ध शुम्भ और निशुम्भ ने आगे क्या किया? अब मैं उनका वर्णन सुनना चाहता हूँ॥३॥

तब ऋषि ने राजा से कहा–॥४॥ हे राजन्! युद्ध में रक्तबीज तथा अन्य राक्षसों के हनन से शुम्भ-निशुम्भ के क्रोध की पराकाष्ठा हो गयी॥५॥ इस प्रकार अपनी विशाल दैत्यसेना का संहार होते देख क्रुद्ध निशुम्भ देवी की ओर दौड़ पड़ा। उसके साथ ही दानवों की प्रमुख सेना थी॥६॥ उसके आगे-पीछे तथा पार्श्व-भाग में बड़े-बड़े अंगरक्षक दैत्य थे, जो कुपित होकर अपने होंठ काटते हुए

ततो युद्धमतीवासीद् देव्या शुम्भ-निशुम्भयोः ।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ।।९।।
चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्वशरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ।।१०।।
निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ।।११।।
ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ।।१२।।
छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम् ।।१३।।

देवी को मार डालने के उद्देश्य से आये ।।७।। महाबली शुम्भ भी अपनी समस्त सेना के साथ मातृगणों से युद्ध करने के पश्चात् चण्डिका के वध करने के लिए आ पहुँचा ।।८।। इसके अनन्तर शुम्भ-निशुम्भ का घमासान युद्ध देवी के साथ होने लगा। वे दोनों महाबलवान् दैत्य मेघों की तरह अपने बाणों की देवी पर भीषण वर्षा कर रहे थे ।।९।। उन दोनों के निक्षिप्त बाणों को चण्डिका ने अपने बाणों से काटकर शस्त्रों द्वारा उन राक्षसों के अंगों को पीड़ित कर दिया ।।१०।। तब निशुम्भ ने तेज धारवाली तलवार और चमकती हुई ढाल लेकर देवी के वाहन सिंह के मस्तक पर आघात किया ।।११।। अपने वाहन सिंह के प्रहारित होने पर देवी ने क्षुरप्र नामक बाण के द्वारा निशुम्भ की उस तलवार को काट गिराया तथा अष्टरजत जड़ित ढाल को भी टुकड़े-टुकड़े कर दिया ।।१२।। ढाल और तलवार से रहित होकर उस दानव ने शक्ति का प्रयोग किया। किन्तु चक्र के द्वारा देवी ने उस शक्ति को दो

कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।
आयातं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥१४॥
आविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति ।
सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥१५॥
ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम् ।
आहत्य देवीं बाणौघैरपातयत भूतले ॥१६॥
तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे ।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥१७॥
स रथस्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः ।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥१८॥
तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत् ।
ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम् ॥१९॥

खण्ड कर दिये ॥१३॥ तब निशुम्भ क्रोध से तिलमिला उठा और देवी का वध करने के लिए अपना शूल संभाला। किन्तु देवी ने उस शूल को मुक्के की मार से ही चूर्ण कर डाला ॥१४॥ तब उसने अपनी गदा को घुमाकर देवी पर आघात किया परन्तु वह गदा देवी के त्रिशूल से कटकर नष्ट हो गयी ॥१५॥ इसके अनन्तर वह दैत्य हाथ में फरसा लेकर देवी की ओर बढ़ा। तब देवी ने अपने बाणों की वृष्टि से उस दैत्य को धराशायी कर दिया ॥१६॥ अपने पराक्रमी भाई को धरती पर गिरते देख शुम्भ अत्यन्त क्रोधित होकर देवी को मारने के लिए दौड़ा ॥१७॥ अपनी आकाशव्यापी लम्बी अष्टभुजाओं से उक्त वह दैत्य रथ पर आयुधों से सुसज्जित होकर शोभित होने लगा ॥१८॥ उसे आते देखकर देवी ने अपना शंखनाद और धनुष की प्रत्यंचा द्वारा रणस्थल में घोर टंकार किया ॥१९॥

पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥२०॥
ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः।
पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दश ॥२१॥
ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत्।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥२२॥
अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥२३॥
दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः ॥२४॥
शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा।
आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥२५॥

इसके पश्चात् सम्पूर्ण दैत्य-सेना के तेज को नष्ट करने वाले घण्टे के नाद से समस्त दिशाओं को गुंजायमान कर दिया ॥२०॥ जिस सिंह की गर्जना को सुनकर बड़े-बड़े मदमत्त गजराज भी सहम जाते थे, उस देवी-वाहन सिंह ने अपनी दहाड़ से दशों दिशाओं को कँपा दिया ॥२१॥ तब काली ने आकाश में छलाँग लगाकर अपने दोनों हाथों से पृथ्वी पर प्रहार किया। उस क्रिया में ऐसा भयंकर शब्द उत्पन्न हुआ, जिससे पहले के सभी शब्द उसमें विलीन हो गये ॥२२॥ तब शिवदूती ने असुरों के लिए अशुभ अट्टहास करके सब राक्षसों का दिल दहला दिया, परन्तु इन सबसे शुम्भ को अत्यन्त क्रोध हुआ ॥२३॥ उस समय देवी ने शुम्भ को लक्ष्य करके कहा-'ओ दुरात्मन्! खड़ा रह, खड़ा रह', तब आकाशमार्ग में खड़े

सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम्।
निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते ॥२६॥
शुम्भमुक्ताञ्छरान् देवी शुम्भस्तत् प्रहिताञ्छरान्।
चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥२७॥
ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम्।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥२८॥
ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥२९॥
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥३०॥

सभी देवगण देवी की जय-जयकार करने लगे ॥२४॥ तब शुम्भ ने ज्वालाओं से लपलपाती हुई अत्यन्त भीषण शक्ति चलायी। अग्निमयी पर्वत के सदृश उस भयंकर शक्ति को देवी ने बड़े भारी लुआठी से दूर कर दिया ॥२५॥ उस समय शुम्भ के सिंहनाद से त्रैलोक्य गूँज उठे। हे राजन्! उसकी ध्वनि से ऐसा प्रतीत हुआ मानो वज्रपात हुआ हो, जिसमें अन्य सभी शब्द समा गये ॥२६॥ शुम्भ तथा देवी के परस्पर चलाये हुए बाणों को दोनों प्रतिद्वन्द्वियों ने अपने बाणों द्वारा सैकड़ों और हजारों टुकड़े कर डाले ॥२७॥ तब क्रुद्ध होकर चण्डिका देवी ने शुम्भ पर अपने त्रिशूल से प्रहार किया। उस आघात को सहन न कर सकने के कारण शुम्भ दैत्य चेतनाहीन होकर भूमि पर गिर पड़ा ॥२८॥

इतने में ही निशुम्भ की चेतना लौट आयी और उसने बाणों की वर्षा करके देवी, काली तथा उनके वाहन सिंह को घायल कर

ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी।
चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ।।३१।।
ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम्।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ।।३२।।
तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ।।३३।।
शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम्।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ।।३४।।
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः।
महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ।।३५।।

दिया ।।२९।। फिर उस असुरराज ने अपने दस हजार हाथों को पैदा करके चक्रों के आघात से देवी को आच्छादित कर डाला ।।३०।।

तब असह्य पीड़ा निवारिणी देवी दुर्गा ने क्रुद्ध होकर अपने बाणों से उन चक्रों तथा बाणों को काट दिया ।।३१।। तब देवी के इस अतुलनीय शौर्य को देखकर निशुम्भ अपने सैन्यदल के साथ चण्डिका का वध करने के उद्देश्य से हाथ में गदा लेकर बहुत वेग से उन पर झपटा ।।३२।। देवी ने अपने तीक्ष्ण तलवार से उसकी गदा को काट दिया। गदा नष्ट होते ही उसने हाथ में शूल धारण कर लिया ।।३३।।

देवताओं के पीड़क शुम्भ को हाथ में शूल लेकर आते देख चण्डिका ने बड़े वेग से अपना शूल चलाकर उसके वक्ष को विद्ध कर दिया ।।३४।। शूल से छाती छिद जाने पर, उसी के समान महाकाय दैत्य उसकी छाती से निकल कर 'खड़ी रह, खड़ी रह'

तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः ।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद् भुवि ।।३६।।
ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्राक्षुण्णशिरोधरान् ।
असुरांस्तांस्तथा काली शिवदूती तथापरान् ।।३७।।
कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः ।
ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ।।३८।।
माहेश्वरीत्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथाऽपरे ।
वाराहीतुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ।।३९।।
खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।
वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ।।४०।।

कहता हुआ बोलने लगा ।।३५।। उस निकलते हुए दैत्य की बात पर देवी अट्टहास कर उठीं और तलवार से उसका सिर काट गिराया, तब वह दैत्य भूमि पर गिरकर ढेर हो गया ।।३६।। तत्पश्चात् सिंह अपनी दाढ़ों से उस दैत्य की गरदन चबाने लगा, वह दृश्य बहुत ही डरावना प्रतीत हो रहा था। उधर काली तथा शिवदूती ने भी दूसरे दानवों को खाना शुरू कर दिया ।।३७।। कौमारी की शक्ति से विदारित होकर कितने ही महादानव नाश को प्राप्त हुए। ब्रह्माणी के मन्त्रपूत जल के द्वारा कितने ही दैत्य निष्प्रभ होकर भाग गये ।।३८।। कितने ही दानव माहेश्वरी के त्रिशूल से छिन्न-भिन्न होकर नष्ट हो गये। वाराही के थूथुन की मार से कितनों की हड्डी-पसली चूर-चूर हो गयी ।।३९।। वैष्णवी ने अपने चक्र के प्रहार से राक्षसों के खण्ड-खण्ड कर डाले। ऐन्द्री के हाथ चलाये हुए वज्र से आहत होकर कितनों को ही अपनी जान गँवानी

केचिद् विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे काली-शिवदूती-मृगाधिपैः ।।ॐ।।४१।।

इति[1] श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥ उवाच २, श्लोकाः ३९, एवम् ४१, एवमादितः ॥५४३॥

●

दशमोऽध्यायः (१०)

ध्यानम्

ॐ उत्तप्तहेमरुचिरां रवि-चन्द्र-वह्नि-
नेत्रां धनुश्शरयुताङ्कुशपाशशूलम् ।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम् ।।

पड़ी ॥४०॥ उस युद्ध में कुछ दानव नष्ट हो गये, कुछ भाग खड़े हुए तथा अगणित राक्षस काली, शिवदूती और सिंह के द्वारा काल-कवलित हो गये ॥४१॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित निशुम्भ-वध नामक नवाँ अध्याय समाप्त ॥९॥

●

ध्यान-जिनका वर्ण तप्त सोने के सदृश है, सूर्य, चन्द्र और अग्नि ही उनके तीन नेत्र हैं तथा वे अपने कर-कमलों में धनुष-

---

१. इति शब्दो हरेल्लक्ष्मीं वधः कुलविनाशकः ।
अध्यायो हरते प्राणान् मार्कण्डेयादिकं वदेत् ॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम्।
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः ॥२॥
बलावलेपाद् दुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्ध्यसे यातिमानिनी ॥३॥

देव्युवाच ॥४॥

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥५॥
ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखालयम्।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥६॥

बाण, अंकुश, पाश और शूल धारण किये हुए हैं, ऐसे अर्धचन्द्राकार शशिभूषित मस्तक वाली शिवशक्तिस्वरूपिणी भगवती कामेश्वरी देवी का मैं हृदय में ध्यान करता हूँ।

ऋषि ने कहा-॥१॥ हे राजन्! अपने प्राणप्रिय भाई निशुम्भ को मृत तथा सारी सेना का विनाश देखकर शुम्भ ने क्रोधपूर्वक कहा-॥२॥ दुष्टा दुर्गे! तू अपने बल से गर्वित होकर मिथ्या अभिमान न कर। तू बड़ी स्वाभिमानिनी बनी फिरती है, किन्तु दूसरी स्त्रियों के बल पर लड़ाई लड़ रही है ॥३॥

तब देवी ने कहा-॥४॥ ओ दुष्ट! मैं नितान्त अकेली ही हूँ। देख, ये सब मेरी ही विभूतियाँ हैं, अतएव मुझमें ही सन्निहित हो रही हैं ॥५॥

तत्पश्चात् ब्रह्माणी आदि सम्पूर्ण देवियाँ अम्बिका देवी के शरीर में विलीन हो गयीं। उस समय वहाँ पर केवल अम्बिका देवी ही विद्यमान रह गयीं ॥६॥

देव्युवाच ॥७॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता ।
तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥८॥

ऋषिरुवाच ॥९॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥१०॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद् भूयः सर्वलोकभयङ्करम् ॥११॥
दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥१२॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्रहुङ्कारोच्चारणादिभिः ॥१३॥

तब देवी ने कहा–॥७॥ मैं अपनी विभूतियों से अनेक रूपों में यहाँ प्रकट हुई थी। अब उन सब आकारों को मैंने समेट लिया है। अब मैं अकेली ही युद्ध के लिए सन्नद्ध हूँ। तुम भी स्थिर-भाव से तत्पर हो जाओ ॥८॥

ऋषि ने कहा–॥९॥ सभी देवताओं और दानवों के समक्ष देवी और शुम्भ में घमासान युद्ध प्रारम्भ हुआ ॥१०॥ उन दोनों प्रतिद्वन्द्वियों का युद्ध तीक्ष्ण शस्त्रों के प्रहार तथा बाणों की वर्षा के कारण बहुत ही भयंकर प्रतीत होने लगा ॥११॥ उस समय देवी के छोड़े हुए सैकड़ों दिव्यास्त्रों को शुम्भ ने अपने अस्त्रों द्वारा काट डाला ॥१२॥ इसी प्रकार प्रत्युत्तर में देवी ने भी शुम्भ द्वारा निक्षेपास्त्रों को क्षणभर में ही अपने 'हुँकार' शब्द के उच्चारण मात्र से ही विनष्ट कर दिया ॥१३॥

ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः।
सापि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः॥१४॥
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम्॥१५॥
ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत्।
अभ्यधावत् तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः॥१६॥
तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम्॥१७॥
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः॥१८॥
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः।
तथापि सोऽभ्यधावत् तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान्॥१९॥

तब उस दानव ने अपने सैकड़ों बाणों को चलाकर देवी को ढँक दिया। ऐसा देखकर कुपित देवी ने भी अपने बाण से उसके धनुष काट दिये॥१४॥ धनुष कट जाने पर दैत्यराज ने हाथ में शक्ति उठा ली, किन्तु देवी ने अपने चक्र के द्वारा उस शक्ति को खण्डित कर दिया॥१५॥ तदनन्तर उस दैत्य ने सैकड़ों चन्द्रमा की भाँति चमचमाती हुई ढाल तथा तलवार लेकर देवी पर आक्रमण कर दिया॥१६॥ तब चण्डिका ने उसके आते ही अपने तीक्ष्ण बाणों से उस चमचमाती हुई ढाल तथा तलवार को काट दिया॥१७॥ इसके बाद उस दानव के घोड़े और सारथि मृत्यु को प्राप्त हुए, धनुष तो उसका कट ही चुका था, फिर तो अब उसने अम्बिका-वध के लिए भयंकर मुद्गर हाथ में उठाया॥१८॥ उस मुद्गर को भी देवी ने अपने बाणों से काट दिया, फिर भी वह

स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ।।२०।।
तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ।।२१।।
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ।।२२।।
नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ।।२३।।
ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह ।
उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले ।।२४।।
स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः ।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया ।।२५।।

दैत्य हिम्मत न हार कर केवल मुक्का बाँधकर द्रुत गति से देवी की ओर झपट पड़ा ।।१९।। उस दैत्य ने देवी के हृदय में अपने मुक्के से प्रहार किया, और देवी ने भी उसकी छाती में एक थप्पड़ मारा ।।२०।। देवी के इस थप्पड़ से वह भूमि पर गिर गया, किन्तु वह सँभलकर पुनः उठ खड़ा हुआ ।।२१।। फिर वह एकाएक देवी पर उछल पड़ा और देवी को लेकर आकाश में उड़ चला। तब देवी आकाश में निराधार रह कर ही उसके साथ युद्ध करने लगीं ।।२२।। उस समय आकाश में दोनों परस्पर युद्ध करने लगे। उनके इस युद्ध को देखकर ऋषि-मुनि विस्मित हो गये ।।२३।। फिर अम्बिका ने शुम्भ के साथ दीर्घकाल तक युद्ध करने के पश्चात् उसे घुमाकर भूमि पर पटक दिया ।।२४।। पृथ्वी पर गिरने के पश्चात् वह दैत्य पुनः देवी से युद्ध करने के लिए द्रुत गति से दौड़ पड़ा ।।२५।।

तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ।।२६।।
स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ।।२७।।
ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाऽभवन्नभः ।।२८।।
उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः ।
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ।।२९।।
ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ।
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ।।३०।।
अवादयं स्तथैवाऽन्ये ननृतुश्चाऽप्सरोगणाः ।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः ।।३१।।

तब दैत्यराज शुम्भ को आते देखकर देवी ने त्रिशूल से उसकी छाती वेध कर उसे भूतल पर गिरा दिया ।।२६।। उस त्रिशूल के भयंकर आघात से आहत होकर उसके प्राण निकल गये और वह समस्त सागरों, द्वीपों तथा पर्वतों सहित सम्पूर्ण पृथ्वी को आन्दोलित करता हुआ धरती पर आ गिरा ।।२७।। उस दुरात्मा की मृत्यु से समस्त विश्व आह्लादित हो गया, आकाश निर्मल दिखाई पड़ने लगा ।।२८।। उत्पातसूचक मेघ और उल्कापात सभी शान्त हो गये तथा नदियाँ भी अपने स्वाभाविक गति से प्रवाहित होने लगीं ।।२९।। उस दैत्य का क्षय होने से सभी देवों को अपार हर्ष हुआ और गन्धर्वादि मधुर गान करने लगे ।।३०।। अन्य गन्धर्व वाद्य-वादन करने तथा अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। पवित्र वायु बहने लगी, सूर्य की मलिनता दूर होकर प्रभा चमकने लगी ।।३१।।

जज्वलुश्चाऽग्नयः शान्ताः शान्ता दिग्जनितस्वनाः ।।ॐ।।३२।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ।।१०।।

उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः २७,

एवम् ३२, एवमादितः ।।५७५।।

●

एकादशोऽध्यायः (११)

ध्यानम्

ॐ बालरवि-द्युतिमिन्दु-किरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ।।

'ॐ' ऋषिरुवाच ।।१।।

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे
सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् ।

अग्निशाला की बुझी हुई अग्नि प्रज्वलित हो गयी तथा समस्त दिशाओं में गूँजने वाले भीषण शब्द भी शान्त हो गये ।।३२।।

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के

अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित शुम्भ-वध

नामक दसवाँ अध्याय समाप्त ।।१०।।

●

ध्यान-जिनके अंगों की कान्ति प्रातःकालीन बालसूर्य के सदृश है, चन्द्रमा के मुकुट से उनका मस्तक सुशोभित है, उभरे हुए स्तनों एवं तीन नेत्रों से युक्त, मुख पर मन्द हास्य, हाथों में वरद, अंकुश, पाश एवं अभय-मुद्रा शोभित हो रहे हैं ऐसी भुवनेश्वरी देवी का मैं चिन्तन करता हूँ ।

कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्
विकाशि-वक्त्राब्ज-विकाशिताशाः ।।२।।
देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ।।३।।
आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ।।४।।
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया ।

ऋषि ने कहा-।।१।। देवी के द्वारा शुम्भ का वध होने पर इन्द्रादि देवता अग्निदेव को आगे करके कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय उन देवगणों की मनोवांछा पूर्ण होने से उनके मुख की कान्ति चमक रही थी और उस प्रकाश से सम्पूर्ण दिशाएँ आलोकित हो रही थीं।।२।।

देवताओं ने कहा-शरणापन्न की पीड़ा निवारक देवि! हमारे ऊपर प्रसन्न होइए। सम्पूर्ण जगत् की जननी! प्रसन्न होओ। हे विश्वेश्वरि! विश्व का त्राण करो। हे देवि! तुम्हीं चराचर विश्व की अधिष्ठात्री हो।।३।। तुम्हीं इस जगत् की एकमात्र आधारभूता हो, क्योंकि पृथ्वी के रूप में तुम्हारी ही अवस्थिति है। हे देवि! तुम्हारा पौरुष अलंघनीय है, तुम्हीं जल के रूप में स्थित होकर समस्त जगत् को तृप्त करती हो।।४।। तुम अनन्त बलशालिनी वैष्णवी शक्ति हो।

सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ।।५।।
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ।।६।।
सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ।।७।।
सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।८।।
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनी ! ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।।९।।

इस जगत् की कारणरूपिणी परा माया हो। हे देवि! तुमने ही इस सम्पूर्ण जगत् को मोह में डाल रखा है। तुम्हारी प्रसन्नता पाकर ही लोग पृथ्वी पर मोक्षलाभ करते हैं ।।५।। हे देवि ! समस्त विद्याएँ तुम्हारे भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं। इस विश्व में जितनी भी नारियाँ हैं वे सब तुम्हारी ही प्रतिमूर्ति हैं। हे जगदम्बे ! तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है, तुम्हारी स्तुति किस प्रकार हो सकती है ? तुम सभी स्तवनीय पदार्थों से परे और परा वाणी हो ।।६।। जब तुम्हीं सर्वस्वरूपा देवी होकर स्वर्ग तथा मोक्षदायिनी हो तब इसी रूप में तुम्हारी स्तुति हो गयी। तुम्हारी स्तुति के लिए इससे बढ़कर दूसरी और कौन-सी बात हो सकती है ।।७।। समस्त प्राणियों के हृदय-प्रदेश में बुद्धिरूप बनकर निवास करने तथा स्वर्ग और मोक्ष देनेवाली नारायणि देवि ! तुम्हें हमारा नमस्कार है ।।८।। क्रमशः

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि! नमोऽस्तु ते ।।१०।।
सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ।।११।।
शरणागत-दीनार्त-परित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्त्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१२।।
हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१३।।
त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनी ।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१४।।

कला, काष्ठा आदि रूप में परिणाम की ओर ले जानेवाली तथा विश्व के उपसंहार में समर्थ नारायणी ! तुम्हें मेरा नमस्कार है ।।९।। नारायणी ! तुम सभी मांगलिक वस्तुओं को देनेवाली मंगलमयी हो । तुम्हीं कल्याणदायिनी शिवस्वरूपा हो । सभी पुरुषार्थों की प्रदानकर्त्री, शरणागतवत्सला, त्रिनयना एवं गौरी हो । तुम्हें मेरा प्रणाम है ।।१०।। तुम सृजन, पालन और संहार की शक्तिभूता सनातनी देवी, गुणाधार तथा सर्वगुण सम्पन्न हो । हे नारायणी ! तुम्हें प्रणाम है ।।११।। शरणागत असहायों, पीड़ितों आदि की रक्षा में तत्पर रहनेवाली तथा समस्त क्लेशनिवारिणी नारायणी देवी ! तुम्हें मेरा प्रणाम है ।।१२।। हे नारायणी ! तुम ब्रह्माणी के वेश में हंसों के विमान पर बैठकर कुशमिश्रित जल का छिड़काव करती रहती हो, तुम्हें मेरा प्रणाम है ।।१३।। माहेश्वरी रूप से त्रिशूल, चन्द्रमा एवं साँपों को धारण करनेवाली तथा बैल की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवि ! तुम्हें नमस्कार है ।।१४।।

मयूर-कुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१५।।
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-गृहीत-परमायुधे ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१६।।
गृहीतोग्र-महाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे ।
वराहरूपिणी शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१७।।
नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१८।।
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।१९।।
शिवदूती-स्वरूपेण हतदैत्यमहाबले ! ।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ।।२०।।

मयूरों और मुरगों से आच्छादित महाशक्ति धारिणी कौमारी रूपवाली निष्पापे नारायणि ! तुम्हें मेरा अभिवादन है ।।१५।। शंख, चक्र, गदा और शार्ङ्ग धनुषरूप श्रेष्ठ अस्त्रों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिसम्पन्ना नारायणी ! तुम प्रसन्न हो, और तुम्हें प्रणाम है ।।१६।। हाथ में भयानक चक्र और दाढ़ों पर पृथ्वी को उठाये वाराही रूप वाली कल्याणमयी नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है ।।१७।। दैत्यों के वध के लिए भयंकर नृसिंहरूप से उद्योग करनेवाली तथा त्रैलोक्य की रक्षा में तत्पर रहने वाली नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है ।।१८।। मस्तक पर किरीट और हाथ में महावज्र धारण करनेवाली, सहस्रों नेत्रों से युक्त होकर उद्दीप्त प्रतीत होनेवाली, वृत्रासुर का वध करने वाली, इन्द्रशक्तिस्वरूपिणी नारायणि देवि ! तुम्हें प्रणाम है ।।१९।।

दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२१॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे ।
महारात्रि महाऽविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२२॥
मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥२४॥
एतत् ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥२५॥
ज्वाला-करालमत्युग्रमशेषासुर-सूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥२६॥

शिवदूती बनकर दानवों की असंख्य सेना का संहार करनेवाली भयानक रूप बनाने तथा विकट गर्जना करनेवाली नारायणि ! तुम्हें प्रणाम है ॥२०॥ दाढ़ों के कारण विकट मुखवाली, मुण्डमाला से विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपिणी नारायणि ! तुम्हें मेरा अभिवादन है ॥२१॥ लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महा अविद्यारूपा, नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥२२॥ मेधा, सरस्वती, श्रेष्ठा, ऐश्वर्यरूपा, पार्वती, महाकाली, संयमपरायणी तथा सबकी अधिष्ठात्री नारायणि ! तुम्हें नमस्कार है ॥२३॥ सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सर्वशक्तिसम्पन्ना दिव्यरूपा दुर्गे देवि ! आप हमारी सभी भयों से रक्षा करें । तुम्हें नमस्कार है ॥२४॥ हे कात्यायनी ! तीन नेत्रों से विभूषित तुम्हारा सौम्य मुख सम्पूर्ण भयों से हमारा त्राण करे । तुम्हें हमारा प्रणाम है ॥२५॥

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ।।२७।।
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ।।२८।।
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानं न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ।।२९।।
एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य
धर्मद्विषां देवि महासुराणाम् ।

भद्रकाली ! ज्वाला की लपटों के कारण विकट प्रतीत होने वाला अत्यन्त भीषण और समस्त दानवों का संहारक तुम्हारा त्रिशूल हमारी रक्षा करे। तुम्हें मेरा नमस्कार है ।।२६।। हे देवि ! सम्पूर्ण जगत् जिसकी ध्वनि से व्याप्त होकर दानवों को निष्प्रभ कर देता है, वह तुम्हारा घण्टा हम लोगों का कलुष (पाप) से उसी प्रकार रक्षा करे जिस प्रकार माता अपने पुत्रों की अशुभ कर्मों से रक्षा करती है ।।२७।। हे चण्डिके ! राक्षसों के रक्त और चर्बी से चर्चित तुम्हारे हाथों में शोभित होने वाला खड्ग हमारा मंगल करे। हे देवी ! तुम्हें हमारा प्रणाम है ।।२८।। हे देवि ! तुम्हारी प्रसन्नता से समस्त रोगों का शमन होता है, क्रुद्ध होने पर मनोऽभिलषित इच्छाओं का नाश हो जाता है। जो लोग तुम्हारे शरणापन्न हो गये हैं, उन पर विपत्ति की कभी छाया भी नहीं पड़ती। तुम्हारे शरणागत लोग अन्यों के शरणदाता बन जाते हैं ।।२९।। हे देवि ! अम्बिके ! तुमने इन विधर्मी

रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं
कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ॥३०॥
विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या।
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥
रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाऽब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥३२॥
विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥३३॥

महादानवों का संहार अपने स्वरूप को विभिन्न भागों में विभाजित करके किया है, तुम्हारे सिवा अन्य कोई इसे नहीं कर सकता था ॥३०॥ विद्याओं में ज्ञान को उद्भासित करने वाले शास्त्रों में तथा वेदों में तुम्हारे अतिरिक्त और किस वर्णन है। तुम्हारे सिवा दूसरी ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो इस जगत् को अज्ञानरूपी अन्धकार के कारण आच्छादित ममतारूपी गर्त में सदैव भटकती रहे ॥३१॥ जहाँ दैत्य, भयंकर विषधर साँप, शत्रु, लुटेरों की जमात और दावाग्नि हो, वहाँ तथा समुद्र के बीच में साथ रहकर तुम विश्व का निरन्तर कल्याण करती रहती हो ॥३२॥

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ।।३४।।
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणी ।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ।।३५।।

देव्युवाच ।।३६।।

वरदाहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ।।३७।।

हे विश्वेश्वरि ! तुम विश्व की पालनकर्त्री, विश्वरूपा और सम्पूर्ण विश्व की धारयित्री हो। तुम भगवान् विश्वेश्वर के लिए भी वन्द्य हो। जो लोग भक्तिभाव से तुम्हारे सामने मस्तक टेकते हैं, वे निखिल विश्व के आश्रयदाता बन जाते हैं ।।३३।।

हे देवि ! प्रसन्न हो। असुरों का वध करके तुमने जिस प्रकार शीघ्र ही हमारा उद्धार किया है, उसी प्रकार सदैव हमें शत्रुभय से मुक्त कराओ। समस्त जगत का पाप-ताप नाश करें। उत्पात एवं पापों के परिणामस्वरूप उत्पन्न महामारी आदि उपद्रवों को शीघ्र ही निवारण करें ।।३४।। विश्व की पीड़ा दूर करने वाली देवि ! हम तुम्हारे चरणों में नतमस्तक हुए हैं, हमारे पर प्रसन्न होओ। त्रिलोकवासियों की आराध्या परमेश्वरि ! सब लोगों को वर प्रदान करो ।।३५।।

देवी ने कहा—।।३६।। देवो ! मैं वर देने के लिए तत्पर हूँ। तुम अपना ईप्सित वर मुझसे प्राप्त कर लो। संसार के कल्याणकारक वर को मैं अवश्य ही दूँगी ।।३७।।

देवा ऊचुः ॥३८॥

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥३९॥

देव्युवाच ॥४०॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥४१॥
नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचल निवासिनी ॥४२॥
पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४३॥
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान् महासुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥४४॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥४५॥

देवताओं ने कहा-॥३८॥ हे सर्वेश्वरि ! तुम इसी प्रकार त्रैलोक्य की सम्पूर्ण विपत्तियों को निवारण करो और हमारे शत्रुओं का क्षय करती रहो ॥३९॥

ऐसा सुनकर देवी ने कहा-॥४०॥ वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाइसवें युग में शुम्भ और निशुम्भ नामक दो अन्य दानवों की उत्पत्ति होगी ॥४१॥ तब मैं नन्दगोप की पत्नी यशोदा के गर्भ से अवतरित होकर विन्ध्याचल में जाकर रहूँगी और उन दोनों दैत्यों का नाश करूँगी ॥४२॥ तदनन्तर मैं पृथ्वी पर भयंकर रूप से अवतार ग्रहण कर वैप्रचित्त नाम वाले असुरों का संहार करूँगी ॥४३॥ उन दैत्यों के भक्षणकाल में मेरे दाँत अनार पुष्प की तरह लाल हो

भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा ।।४६।।
ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ।।४७।।
ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ।।४८।।
शाकम्भरीति विख्याति तदा यास्याम्यहं भुवि ।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ।।४९।।
दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ।।५०।।

जाएँगे ।।४४।। तब स्वर्ग में देवता और मृत्युलोक में मनुष्य गण सदैव मेरा स्तवन करते हुए मुझे 'रक्तदन्तिका' के नाम से सम्बोधित करेंगे ।।४५।। तत्पश्चात् जब भूतल पर सौ वर्षों तक वृष्टि नहीं होगी और जल का अभाव रहेगा, तब मनुष्यों की स्तुति से मैं भूमि पर 'अयोनिजा' रूप में उत्पन्न होऊँगी ।।४६।। उत्पत्ति के बाद शत नेत्रों से मुनियों को देखूँगी। तब मनुष्य 'शताक्षी' नाम से मेरा कीर्तन करेंगे ।।४७।। देवताओं ! उस समय मैं अपने शरीर से उत्पन्न शाकों द्वारा ही सम्पूर्ण जगत् का भरण-पोषण करूँगी। वर्षा न होने तक वे शाक द्वारा ही प्राण धारण करेंगे ।।४८।। ऐसा करने पर पृथ्वी में 'शाकम्भरी' नाम से मेरी प्रसिद्धि होगी। उसी अवतार में मैं दुर्ग नामक महादैत्य का संहार करूँगी ।।४९।। इससे मेरा नाम 'दुर्गा देवी' रूप में विख्यात होगा। फिर जब मैं भीमरूपा बनकर मुनियों की रक्षा के लिए हिमालयवासी दानवों का भक्षण करूँगी,

रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात्।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥५१॥
भीमा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥५२॥
तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम्।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥
भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः।
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥
तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ॐ॥५५॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ५०, एवम् ५५, एवमादितः ॥६३०॥

●

उस समय सब मुनिजन भक्तिपूर्वक मस्तक झुकाकर मेरी स्तुति करेंगे ॥५०-५१॥ उस समय मेरा नाम 'भीमा देवी' के रूप में प्रसिद्ध होगा। जब अरुण नामक दानव त्रैलोक्य में उपद्रव करेगा ॥५२॥ तब मैं तीनों लोक के हितार्थ षट्पादयुक्त अगणित भौंरों का रूप धारण कर उसका संहार करूँगी ॥५३॥ उस समय सब लोग मुझे 'भ्रामरी' के नाम से जानेंगे। इसी प्रकार मैं दानवी उत्पात होने पर अवतार लेकर शत्रुओं का वध करती रहूँगी ॥५४-५५॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित देवी-स्तुति नामक ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त ॥११॥

●

द्वादशोऽध्यायः (१२)

ध्यानम्

ॐ विद्युद्दाम समप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट- विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

'ॐ' देव्युवाच ।।१।।

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः ।
तस्याहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ।।२।।
मधु-कैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद् वधं शुम्भ-निशुम्भयोः ।।३।।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ।।४।।

ध्यान-मैं त्रिनयना दुर्गा देवी का ध्यान करता हूँ। उनके अंगों की शोभा विद्युत् के समान है। वे सिंह के कन्धों पर आसीन भयानक प्रतीत हो रही हैं। अनेक कन्याएँ हाथ में ढाल-तलवार लिये उनकी सेवा में खड़ी हैं। उन्होंने अपने हाथों में चक्र, गदा, तलवार, ढाल, बाण, धनुष, पाश और तर्जनी मुद्रा धारण किये हैं। उनका स्वरूप तेजोमय अग्नि के तुल्य है तथा उनके मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट शोभित हो रहा है।

देवी ने कहा-।।१।। हे देवताओं! जो कोई प्रतिदिन स्थिरचित्त से मेरा स्तवन इन स्तुतियों के द्वारा करेगा, उसकी सारी विपदाओं को मैं निश्चित रूप से दूर कर दूँगी ।।२।। जो मधु-कैटभ का विनाश, महिषासुर का वध तथा शुम्भ-निशुम्भ के संहार के वर्णन का पाठ

न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः ।
भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ।।५।।
शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।
न शस्त्रानलतोयौघात् कदाचित् सम्भविष्यति ।।६।।
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ।।७।।
उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ।।८।।
यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम ।
सदा न तद्विमोक्ष्यामि सांनिध्यं तत्र मे स्थितम् ।।९।।

करेंगे ।।३।। एवं अष्टमी, नवमी तथा चतुर्दशी तिथि को एकाग्र मन से भक्तिभाव से युक्त होकर मेरे इस उत्तम माहात्म्य को सुनेंगे ।।४।। उन्हें पाप की छाया नहीं लगेगी। उन पर पापजनित बाधाएँ भी नहीं आयेंगी, उनके घर में कभी निर्धनता का राज्य नहीं रहेगा और न तो कभी उन्हें अपने प्रियजनों के वियोग का कष्ट ही उठाना होगा ।।५।। इतना ही नहीं, वरन् उन्हें शत्रु, लुटेरे, राजा, शस्त्र, अग्नि तथा ज़लराशि से भी कभी भय उत्पन्न नहीं होगा ।।६।। इसलिए सभी लोगों को शान्तभाव से भक्तिपूर्वक मेरे इस माहात्म्य का पठन-पाठन और श्रवण-मनन करना चाहिए। यह परम कल्याणप्रद है ।।७।। मेरा माहात्म्य माहामारी-जनित सभी उपद्रवों तथा दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों तापों को शमन करने वाला है ।।८।। मेरे जिस मन्दिर में विधिपूर्वक प्रतिदिन इस माहात्म्य का पाठ होता है, वहाँ मेरा सदा निवास रहता है ।।९।।

बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे ।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ।।१०।।
जानताऽजानता वापि बलिपूजां तथा कृताम् ।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम् ।।११।।
शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ।।१२।।
सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धन-धान्य-सुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ।।१३।।
श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ।।१४।।
रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते ।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ।।१५।।

बलि, पूजन, हवन तथा महोत्सव के अवसरों पर मेरे इस चरित्र का पूर्णरूपेण पाठ तथा श्रवण करना चाहिए ।।१०।। कोई भी मनुष्य विधान को जानकर या अनजाने में ही मेरे उद्देश्य से जो बलि, पूजा या होमादि करेगा उसे मैं सहर्ष स्वीकार करूँगी ।।११।। शरत्कालीन दुर्गापूजन के समय जो कोई भी इस माहात्म्य को भक्तिभाव से श्रवण करेगा, वह मेरे प्रसाद से सभी विपत्तियों से मुक्त होकर धन-धान्य और पुत्रादि से परिपूर्ण होगा-इसमें तिलभर भी संशय नहीं है ।।१२-१३।। मेरे इस माहात्म्य, उत्पत्ति की सुन्दर गाथाएँ तथा युद्धकालीन पराक्रम के श्रवण मात्र से ही मनुष्य भयरहित हो जाता है ।।१४।। मेरे माहात्म्य के सुनने वाले व्यक्तियों के शत्रु नष्ट होते, उन्हें कल्याणपद प्राप्त होता एवं उनके कुल

शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ।।१६।।
उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ।।१७।।
बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् ।
संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ।।१८।।
दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् ।
रक्षो-भूत-पिशाचानां पठनादेव नाशनम् ।।१९।।
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् ।
पशुपुष्पार्घ्यधूपैश्च गन्ध-दीपैस्तथोत्तमैः ।।२०।।
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् ।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ।।२१।।

प्रफुल्लित रहते हैं ।।१५।। शान्तिकर्म में, अशुभ स्वप्न-दर्शन होने पर तथा ग्रहजनित भयंकर पीड़ा होने में, मेरे इस माहात्म्य को सुनना चाहिए ।।१६।। ऐसा करने से सभी बाधाएँ तथा भयंकर ग्रह-पीड़ाएँ शान्त होती हैं और मनुष्यों को अशुभ फलकारी स्वप्न शुभ फल देने वाला हो जाता है ।।१७।। यह माहात्म्य बालग्रहों से आक्रान्त शिशुओं के लिए शान्तिदायक तथा मनुष्यों के संगठन में पारस्परिक वैमनस्य उत्पन्न होने पर उनमें मित्रता स्थापित कराने वाला सिद्ध होता है ।।१८।। इस माहात्म्य से सम्पूर्ण दुराचारियों के बल का क्षय होता है। इसके पाठ से दानवों, भूतों तथा पिशाचों का नाश होता है ।।१९।। मेरा यह माहात्म्य मेरे सान्निध्य की उपलब्धि कराने वाला है। उपासकों के द्वारा साल भर तक पशु, पुष्प, अर्घ्य, धूप, दीप, गन्ध आदि श्रेष्ठ सामग्रियों द्वारा पूजन

प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन् सकृत्सुचरिते श्रुते ।
श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति ।।२२।।
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम ।
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम् ।।२३।।
तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते ।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ।।२४।।
ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः ।।२५।।
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः ।
सिंह-व्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ।।२६।।
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा ।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ।।२७।।

करने, ब्राह्मणों को भोजन कराने, हवन करने, प्रतिदिन अभिषेक करने, नाना प्रकार के भोगों का अर्पण करने तथा दान देने से मुझे उतनी प्रसन्नता नहीं होती जितनी इस उत्तम चरित्र का एक बार श्रवण करने से होती है। इस माहात्म्य को सुनने से पाप-पुंजों का क्षय एवं आरोग्य लाभ होता है ।।२०-२२।। मेरी उत्पत्ति का कीर्तन करने से समस्त भूतों से रक्षा होती है तथा मेरा युद्ध-सम्बन्धी चरित्र दुष्ट दानवों का संहारक है ।।२३।। इसके श्रवण मात्र से ही मनुष्य निर्भय हो जाता है। हे देवताओं ! तुमने और महर्षियों ने मेरी जो स्तुतियाँ की हैं ।।२४।। तथा ब्रह्माजी द्वारा की हुई स्तुतियाँ सभी कल्याणकारी बुद्धि देती हैं। वन में, सुनसान स्थल में या दावाग्नि से घिर जाने पर, ।।२५।। जनहीन स्थान में, लुटेरों के चक्कर में आ जाने पर, शत्रुओं द्वारा बन्दी होने पर, अथवा वन में सिंह, व्याघ्र, जंगली हस्तियों

पतस्तु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे ।
सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ।।२८।।
स्मरन् ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात् ।
मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ।।२९।।
दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ।।३०।।

ऋषिरुवाच ।।३१।।

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ।।३२।।
पश्यतामेव देवानां तत्रैवाऽन्तरधीयत ।
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान् यथा पुरा ।।३३।।
यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ।।३४।।
जगद्विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुलविक्रमे ।
निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः ।।३५।।

के पीछा करने पर, ।।२६।। राजाज्ञा से बन्धन या बधस्थल पर ले जाने के समय अथवा समुद्र में यात्रा करते समय तूफान के कारण नाव डगमगाने पर, ।।२७।। भयंकर युद्ध में शस्त्रों का आघात होने, वेदना से पीड़ित होने, इतना ही नहीं, वरन् समस्त भीषण बाधाओं के सामने आने पर, ।।२८।। जो कोई इस चरित्र का स्मरण करता है, वह व्यक्ति संकट को पार हो जाता है। मेरे प्रभाव से सिंह आदि हिंसक जन्तु नाश को प्राप्त होते तथा लुटेरे एवं शत्रु भी मेरे चरित्र का स्मरण करने वाले लोगों से दूर भाग जाते हैं।।२९-३०।।

ऋषि ने कहा—।।३१।। ऐसा कहकर सब देवों के देखते-देखते ही पराक्रम वाली भगवती चण्डिका वहीं अन्तर्ध्यान हो गयीं। तब सभी देवता शत्रु के मारे जाने से यज्ञांश का उपभोग पहले की

एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः ।
सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ।।३६।।
तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ।।३७।।
व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ।
महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ।।३८।।
सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ।।३९।।
भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे ।
सैवाभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ।।४०।।

तरह निर्भय होकर करने लगे और अपने अधिकार का उपयोग करने लगे। महाबलवान् दैत्य शुम्भ-निशुम्भ की मृत्यु के अनन्तर शेष बचे-खुचे दैत्य पाताललोक को चले गये ॥३२-३५॥ हे राजन्! इस प्रकार भगवती अम्बिका शाश्वत और नित्य होते हुए भी बारम्बार अवतरित होकर भू-भार हरण करके संसार का रक्षण करती हैं ॥३६॥ वे ही इस विश्व को मोहित करतीं, जगत् की सृष्टि करतीं तथा प्रार्थना करने पर सन्तुष्ट हो विज्ञान और स्मृति प्रदान करती हैं ॥३७॥ हे राजन्! महाप्रलय काल में महामारी स्वरूपिणी वे महाकाली ही इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं ॥३८॥ समय-समय पर वे ही महामारी होतीं और वे ही स्वयं अजन्मा होते हुए भी सृष्टि के रूप में उत्पन्न होती हैं। वे सनातनी देवी ही समय के अनुरूप समस्त जीवों की रक्षा करती हैं ॥३९॥ मनुष्यों के उत्थानकाल में वे ही गृह में लक्ष्मी के रूप में निवास करतीं और उन्नति प्रदान करती हैं और फिर वे ही पतनकाल में निर्धनता के

स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप-गन्धादिभिस्तथा।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम्॥ॐ॥४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः॥१२॥ उवाच २, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३७, एवम् ४१, एवमादितः॥६७१॥

●

त्रयोदशोऽध्यायः (१३)

ध्यानम्

ॐ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्।
पाशा-ऽङ्कुश-वरा-भीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे॥

'ॐ' ऋषिरुवाच॥१॥

एतत् ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम्।
एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत्॥२॥

वेश में विनाश का कारण बनती हैं॥४०॥ पुष्प, धूप, गन्ध आदि से विधिवत् पूजन करके उनका स्तवन करने से वे धन-धान्य, पुत्र, सद्बुद्धि तथा उत्तम गति को प्रदान करती हैं॥४१॥

इस प्रकार मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित फल-स्तुति नामक बारहवाँ अध्याय समाप्त॥१२॥

●

ध्यान-जिनके शरीर की कान्ति बालकालीन सूर्य की भाँति है, जिनके चार भुजाएँ और तीन नेत्र तथा जो अपने हाथों में पाश, अंकुश, वर एवं अभय की मुद्रा धारण करती हैं ऐसी उन शिवादेवी का मैं ध्यान करता हूँ।

विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया ।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ।।३।।
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे ।
तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम् ।।४।।
आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ।।५।।

मार्कण्डेय उवाच ।।६।।

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ।।७।।
प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् ।
निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च ।।८।।
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ।
संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसंस्थितः ।।९।।

ऋषि ने कहा–।।१।। हे राजन् ! इस प्रकार मैंने तुमसे देवी के श्रेष्ठ माहात्म्य का कथन किया। इस जगत् की धारयित्री देवी का ऐसा ही प्रभाव है ।।२।। उन्हीं के द्वारा विद्या अर्थात् ज्ञान का उदय होता है। भगवान् विष्णु की मायास्वरूपा उन भगवती द्वारा ही तुम, ये वैश्य तथा अन्य विवेकशील लोग मुग्ध होते हैं, इस समय भी मोहित हुए हैं एवं आगे भी इसी प्रकार होते रहेंगे। महाराज ! तुम उन्हीं परमेश्वरी का शरण ग्रहण करो ।।३-४।। अपने उपासकों को वे भोग, स्वर्ग तथा मुक्तिलाभ कराती हैं ।।५।।

मार्कण्डेयमुनि ने कहा–।।६।। मेधामुनि से ऐसा वचन सुनकर राजा सुरथ ने उत्तम व्रतधारी उन महाभाग महर्षि को नमस्कार किया। वे अत्यन्त ममता तथा राजभ्रष्ट होने के कारण बहुत क्षुब्ध हो उठे थे ।।७-८।। महामुने ! इसलिए विरक्ति के कारण वे राजा तथा वैश्य तत्क्षण तपस्या के लिये चले गये और वे जगदम्बा के दर्शनार्थ नदी

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन्।
तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम्॥१०॥
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्प-धूपाग्नि-तर्पणैः।
निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ॥११॥
ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम्।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः॥१२॥
परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका॥१३॥

देव्युवाच॥१४॥

यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन।
मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत्॥१५॥

के तट पर तपसाधन करने लगे॥९॥ वे वैश्य देवीसूक्त का उत्तम जप करते हुए तपस्या में लीन हुए। ये दोनों ही नदी-तीर पर देवी की मिट्टी की प्रतिमा स्थापित करके उनकी पुष्प, धूप और हवन आदि के द्वारा उपासना करने लगे। उन्होंने सर्वप्रथम अपने आहार की मात्रा कम कर दी, तदनन्तर निराहार रहकर एकाग्रचित्त से देवी का चिन्तन करने लगे॥१०-११॥ वे दोनों अपने शरीर के रक्त से सिंचित बलि चढ़ाते हुए निरन्तर तीन वर्षों तक संयमी होकर उपासना करते रहे॥१२॥ उन लोगों की उग्र तपस्या से प्रसन्न होकर जगत् की धारयित्री चण्डिका देवी ने प्रत्यक्ष प्रकट होकर कहा॥१३॥

देवी ने कहा—॥१४॥ राजन्! अपने कुल को प्रमुदित करने वाले वैश्य! तुम लोगों की जो मनोवांछा हो, वह मुझसे माँग लो। मैं तुम लोगों से प्रसन्न हूँ। अतः तुम्हें सब कुछ दे सकूँगी॥१५॥

मार्कण्डेय उवाच ॥१६॥

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ।
अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥१७॥
सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः ।
ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥१८॥

देव्युवाच ॥१९॥

स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥२०॥
हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥२१॥
मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद् विवस्वतः ॥२२॥
सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति ॥२३॥
वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः ॥२४॥
तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥२५॥

मार्कण्डेयजी बोले–॥१६॥ देवी की बात सुनकर राजा ने दूसरे जन्म में अक्षय राज्य प्राप्त करने का वर माँगा तथा इस जन्म में भी शत्रुओं की समस्त सेना को बलपूर्वक पराजित कर पुनः राज्य पर अधिकार जमा लेने का वरदान माँगा ॥१७॥ वैश्य अत्यन्त बुद्धिमान् मनुष्य था, उसका मन सांसारिक विषयों से विरक्त हो चुका था, इसलिये उस समय उस वैश्य ने ममता और अन्धकार मिटाने वाले ज्ञान की प्राप्ति का वर माँग लिया ॥१८॥

तब देवी ने कहा–॥१९॥ हे राजन्! तुम अल्पकाल में ही शत्रुओं को जीतकर अपना राज्य पा लोगे। अब वहाँ पर तुम्हारा राज्य स्थिर रहेगा ॥२०-२१॥ मृत्यु के पश्चात् तुम सूर्य के अंश से जन्म लेकर इस पृथ्वी पर सावर्णिक मनु के नाम से प्रसिद्ध होओगे ॥२२-२३॥ हे वैश्यश्रेष्ठ! तुमने जिस वर को पाने की

मार्कण्डेय उवाच ॥२६॥

इति दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ॥२७॥
बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ।
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥२८॥
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः[१] ॥२९॥
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥क्लीं ॐ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सुरथ-वैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ उवाच ६, अर्धश्लोकाः ११, श्लोकाः १२, एवम् २९, एवमादितः ॥७००॥ समस्ता उवाच-मन्त्राः ५७, अर्धश्लोकाः ४२, श्लोकाः ५३५, अवदानानि ६६॥

●

मुझसे इच्छा जतायी है, उसे भी मैं देती हूँ। तुम्हें मोक्षप्राप्ति के लिए ज्ञान की उपलब्धि होगी ॥२४-२५॥

मार्कण्डेयजी ने कहा—॥२६॥ उन दोनों को इस प्रकार मनोभिलषित वरदान देकर तथा उनके द्वारा अपनी स्तुति श्रवण कर देवी अम्बिका वहीं अन्तर्निहित हो गयीं। देवी से इस प्रकार का वरदान पाकर क्षत्रियों में श्रेष्ठ सुरथ नामक राजा सूर्य के अंश से जन्म ग्रहण करके सावर्णि नामक मनु होंगे ॥२७-२९॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या में मार्कण्डेयपुराण के सावर्णिक मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में वर्णित सुरथ तथा वैश्य को वरप्रदान नामक तेरहवाँ अध्याय समाप्त ॥१३॥

●

१. अत्र क्वचित्पुस्तके 'ॐ सावर्णिर्भविता मनुः' इत्येव पाठः।

उत्तरन्यासः

हृदयादिन्यास:

ॐखड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।।हृदयाय नमः।
ॐशूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च। शिरसे स्वाहा।
ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि।। शिखायै वषट्।
ॐसौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्। कवचाय हुम्।
ॐखड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।। नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐसर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते।। अस्त्राय फट्।

इत्युत्तरन्यासः।

ध्यानम्

ॐविद्युद्दाम-समप्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम्।

उपयुर्क्त विधि से दुर्गासप्तशती का पाठ पूर्ण कर हृदयादिन्यास और ध्यान कर देवीसूक्त का पाठ करें।

हृदयादिन्यास- 'खड्गिनी शूलिनी घोरा०' से लेकर 'दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते' पर्यन्त एक-एक श्लोक पढ़ते हुए हृदयादि षडंगन्यास करें।

ध्यान - तत्पश्चात् 'विद्युद्दाम-समप्रभां' श्लोक पढ़ कर भगवती

हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

[1]देवी-सूक्तम्

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।१।।
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ।।२।।
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ।।३।।
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ।।४।।
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ।।५।।
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।६।।
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।७।।
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।८।।

दुर्गा का ध्यान कर देवीसूक्त का पाठ करें ।

१. देवीसूक्त की हिन्दी टीका पाँचवें अध्याय के पृष्ठ (२७२-२७६) में देखिए ।

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।९।।
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१०।।
या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।११।।
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१२।।
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१३।।
या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१४।।
या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१५।।
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१६।।
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१७।।
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१८।।
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।१९।।

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२०॥
या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥
या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥
या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२३॥
या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥
या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२६॥
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ॥२७॥
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥
स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥२९॥

या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः ।।३०।।

इति देवीसूक्तं समाप्तम् ।

नवार्णमंत्र-जपः

ततो देवीसूक्तस्य पाठं कृत्वाऽष्टोत्तरशतसंख्याकं 'ॐऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवार्णमन्त्रं जपेत् । तत्पश्चात्-

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ।।

इति पठित्वा, देव्या वामहस्ते जपं निवेदयेत् । ततः सप्तशती-रहस्यत्रयं पठेत्[1] ।

प्राधानिकं रहस्यम्

विनियोगः–ॐ अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य नारायण ऋषिरनुष्टुप्-छन्दः, महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, यथोक्तफलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ।

तदनन्तर देवीसूक्त का पाठ कर एक माला 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इस नवार्ण मन्त्र का जप करे।

पश्चात् 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं' श्लोक पढ़कर देवी के बायें हाथ में जप निवेदन कर सप्तशती के रहस्यत्रय का पाठ करे। कुछ लोग रहस्यत्रय का पाठ नहीं भी करते हैं।

विनियोग–सप्तशती ने इन तीनों रहस्यों के ऋषि नारायण, छन्द

---

१. केचिज्जना रहस्य-त्रयस्य पाठं न कुर्वन्ति ।

राजोवाच

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः ।
एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥१॥
आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज ।
विधिना ब्रूहि सकलं यथावत् प्रणतस्य मे ॥२॥

ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ।
भक्तोऽसीति न मे किञ्चित् तवावाच्यं नराधिप ॥३॥
सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ।
लक्ष्या-लक्ष्य-स्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥४॥
मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती ।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रति नृप मूर्धनि ॥५॥

अनुष्टुप् तथा देवता महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती हैं। शास्त्रों में कथित फल की उपलब्धि के निमित्त जपकाल में इनका विनियोग किया जाता है।

राजा ने कहा-भगवन्! आपने चण्डिका के अवतारों की कथा तो मुझे सुनायी। हे ब्रह्मन्! अब उनके अवतारों की प्रधान प्रकृति का विवेचन कीजिए॥१॥ हे विप्रवर! मैं आपके चरणों में नतमस्तक हुआ हूँ। मुझे देवी के किस स्वरूप की किस विधि से उपासना करनी चाहिए, यह सब आप यथार्थ रूप से बतलाने की कृपा करें॥२॥

ऋषि ने कहा-राजन्! यह रहस्य अत्यन्त गोप्य है। इस रहस्य का वर्णन किसी से नहीं करना चाहिए। किन्तु मेरे भक्त हो, इसलिए भक्तों के लिए मेरे पास अगोपनीय कुछ भी नहीं है॥३॥ त्रिगुणमयी परमेश्वरी महालक्ष्मी देवी ही सबका मूल कारण हैं, वे ही समस्त

तप्तकाञ्चनवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ।।६।।
शून्य तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ।
बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ।।७।।
सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राङ्कितवरानना ।
विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ।।८।।
खड्गपात्र-शिरःखेटैरलङ्कृत - चतुर्भुजा ।
कबन्धहार शिरसा बिभ्राणा हि शिरःस्रजम् ।।९।।
सा प्रोवाच महालक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमा ।
नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ।।१०।।

विश्व को दृश्य तथा अदृश्य रूप से व्याप्त करके स्थित हैं ।।४।। हे राजन्! वे अपने चारों भुजाओं में बिजौरे का फल, गदा, ढाल, पानपात्र, मस्तक पर नाग, लिंग तथा योनि आदि वस्तुओं को धारण करती हैं ।।५।। उनकी कान्ति तप्त स्वर्ण के समान है तथा उनके आभूषण भी तप्त स्वर्ण के ही निर्मित हैं। उन्होंने अपने तेज से इस शून्य जगत् को परिपूर्ण कर रखा है ।।६।। इस समस्त विश्व को शून्य देखकर केवल तमोगुणरूप उपाधि के द्वारा परमेश्वरी महालक्ष्मी ने एक अन्य श्रेष्ठ रूप धारण कर रखा है ।।७।। उस रूप का प्रादुर्भाव एक नारी के रूप में हुआ, जिसके शरीर की आभा निखरे हुए कज्जल की तरह काले रंग की थी। उसका श्रेष्ठ मुख दाढ़ों से शोभायमान हो रहा था। नेत्र बहुत ही विशाल और कटि क्षीण थी ।।८।। उसकी चार भुजाओं में ढाल, तलवार, प्याला और खण्डित मुण्ड सुशोभित था। उनके वक्षस्थल पर धड़ (कबन्ध) की तथा मस्तक पर मुण्डों की मालाएँ पड़ी हुई थीं ।।९।। इस रूप में

तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम्।
ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ।।११।।
महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा।
निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ।।१२।।
इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः।
एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ।।१३।।
तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप।
सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ।।१४।।
अक्षमालाङ्कुशधरा वीणा-पुस्तकधारिणी।
सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ।।१५।।
महाविद्या महावाणी भारती वाक् सरस्वती।
आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा च धीश्वरी ।।१६।।

उत्पन्न नारीश्रेष्ठ तामसी देवी ने महालक्ष्मी देवी से कहा-'माता जी ! आपको मेरा प्रणाम है। मुझे आप मेरा नाम और कार्य बताइए' ? ।।१०।।

तब नारियों में श्रेष्ठ उस तामसी देवी से महालक्ष्मी ने कहा- 'मैं तुम्हारा नामकरण करती हूँ और तुम्हारे कार्यों को भी बतलाती हूँ ।।११।। महामाया, महाकाली, महामारी, क्षुधा, तृषा, एकबीरा, कालरात्रि तथा दुरत्यया ।।१२।। ये ही तुम्हारे नाम हैं, तुम्हारे ये नाम कर्मों के द्वारा ही लोकों में अभिहित होंगे। इन नामों के द्वारा जो कोई तुम्हारे कर्मों को जानकर तुम्हारा पाठ करता है, वह सुखी होता है' ।।।१३।। हे राजन् ! महाकाली से महालक्ष्मी ने ऐसा कहकर अत्यन्त शुद्ध सत्त्वगुण सम्पन्न होकर अन्य रूप धारण किया, जो चन्द्र के समान गौर वर्ण का था ।।१४।। उस श्रेष्ठ नारी के हाथ में अक्षमाला, अंकुश, वीणा तथा पुस्तक थी।

अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम्।
युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥१७॥
इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम्।
हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥१८॥
ब्रह्मन् विधे विरिञ्चेति धातरित्याह तं नरम्।
श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥१९॥
महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह।
एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥२०॥
नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम्।
जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥२१॥

महालक्ष्मी ने उसका भी नामकरण किया ॥१५॥ महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, वेदगर्भा और धीश्वरी (बुद्धि की अधिष्ठात्री)–इस प्रकार से तुम्हारे नाम होंगे ॥१६॥

इसके पश्चात् महाकाली तथा महासरस्वती से महालक्ष्मी ने कहा– 'देवियो ! तुम दोनों अपने-अपने गुणों के अनुरूप स्त्री-पुरुष के युग्म पैदा करो' ॥१७॥ महालक्ष्मी ने जब उन दोनों से ऐसा कहकर स्वयं ही स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा उत्पन्न किया। वे दोनों ही निर्मल ज्ञान से सम्पन्न, सुन्दर तथा कमलासन पर विराज रहे थे। उस युग्म में एक स्त्री और एक पुरुष था ॥१८॥ तदनन्तर महालक्ष्मी माता ने पुरुष को ब्रह्मन्! विधे! विरंचि तथा धातः!–इस नाम से सम्बोधित किया और स्त्री को श्री! पद्मा! कमला! लक्ष्मी!–इत्यादि नामों से विभूषित किया ॥१९॥ इसके पश्चात् महाकाली तथा महासरस्वती ने भी एक-एक जोड़ा उत्पन्न किया। इन जोड़ों के रूप तथा नाम का कथन मैं तुमसे करता हूँ ॥२०॥ महाकाली ने नील

स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः।
त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥२२॥
सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप।
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥२३॥
विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥२४॥
एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे।
चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥२५॥
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम्।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥

चिह्नयुक्त कण्ठ, लाल बाहु, श्वेत शरीर और मस्तक पर चन्द्रमौलि धारण करने वाले पुरुष तथा गौर वर्ण की स्त्री को उत्पन्न किया ॥२१॥ वह पुरुष रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी और त्रिलोचन के नाम से विख्यात हुआ तथा स्त्री के त्रयी, विद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा और स्वरा-ये नाम प्रसिद्ध हुए ॥२२॥ हे राजन्! गौरवर्ण की स्त्री और श्यामवर्ण के पुरुष को महासरस्वती ने प्रकट किया। उन दोनों के नाम भी तुम्हें मैं बतला देता हूँ ॥२३॥ उनमें श्यामवर्ण पुरुष के नाम विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव और जनार्दन हुए तथा गौरांगी स्त्री उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा और शिवा-इन नामों से विख्यात हुईं ॥२४॥ इस प्रकार तीनों युवतियाँ ही तत्क्षण पुरुष रूप में परिवर्तित हो गयीं। इसके रहस्य को ज्ञानचक्षु वाले ही जान सकते हैं, किन्तु अज्ञानी लोग इसे नहीं समझ सकते ॥२५॥ हे राजन्! महालक्ष्मी ने त्रयी विद्यारूप सरस्वती को ब्रह्मा के लिए पत्नी रूप में अर्पित कर दिया, रुद्र को वरदात्री गौरी

स्वरया सह सम्भूय विरिञ्चोऽण्डमजीजनत् ।
विभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ।।२७।।
अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ।
महाभूतात्मकं सर्वं जगत्-स्थावर-जङ्गमम् ।।२८।।
पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः ।
संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ।।२९।।
महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी ।
निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत् ।।३०।।
नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ।।ॐ।।३१।।

इति प्राधानिकं रहस्यं समाप्तम् ।

तथा भगवान् वासुदेव को लक्ष्मी को दे दिया ।।२६।। इस प्रकार सरस्वती के साथ युक्त होकर ब्रह्माजी ने इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया और परम पराक्रमशाली भगवान् रुद्र ने गौरी के साथ मिलित होकर उसका भेदन किया ।।२७।। राजन् ! उस ब्रह्माण्ड में प्रधान (महत्तत्त्व) आदि कार्यसमूह-पंचमहाभूतों से युक्त सम्पूर्ण स्थावर-जंगम रूप इस जगत् की उत्पत्ति हुई ।।२८।। तदनन्तर लक्ष्मी के साथ भगवान् विष्णु ने उस जगत् का भरण-पोषण किया और प्रलयकाल में गौरी के साथ शिव ने उस समस्त विश्व का संहार कर दिया ।।२९।। महाराज ! महालक्ष्मी ही सर्वसत्त्वमयी तथा सब तत्त्वों की अधिष्ठात्री हैं। वे ही निर्गुण और सगुण रूप में नाना प्रकार के नाम धारण करती हैं ।।३०।। सगुणवाचक सत्य, ज्ञान, चित्, महामाया आदि नाम-भेदों से इस महालक्ष्मी का निरूपण करना उचित है। केवल महालक्ष्मी मात्र नाम से ही या अन्य प्रत्यक्ष आदि प्रमाण के द्वारा उनका वर्णन नहीं किया जा सकता ।।३१।।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका में प्राधानिक रहस्य समाप्त ।

वैकृतिकं रहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐ त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता।
सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥१॥
योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा।
मधु-कैटभनाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥२॥
दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥३॥
स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप।
रूप-सौभाग्य-कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥४॥
खड्ग-बाण-गदा-शूल-चक्र-शङ्ख-भुशुण्डिभृत्।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥५॥

ऋषि ने कहा-'हे राजन्! महालक्ष्मी के प्रथम जो सत्त्वगुण, त्रिगुणमयी, तामसी आदि भेद से तीन रूप वर्णित किये गये हैं, वे ही शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा, भगवती आदि नामों से अभिहित हैं ॥१॥ तमोगुणी महाकाली ही विष्णु भगवान् की योगनिद्रा कही गयी हैं। ब्रह्माजी ने मधु, कैटभ वध के लिए जिनकी स्तुति की थी, उन्हीं देवी का नाम महाकाली है ॥२॥ वे दस मुखों, दस भुजाओं एवं दस पादों से युक्त हैं। उनका वर्ण काजल के समान है तथा वे तीस नेत्रों की विशाल पंक्ति से शोभायमान हैं ॥३॥ हे राजन्! दाँतों और दाढ़ों के चमकने के कारण उनका रूप भीषण होने पर भी वे रूप, सौभाग्य, कान्ति एवं महत् सम्पत्ति की देने वाली हैं ॥४॥ उनके हाथों में खड्ग, बाण, गदा, शूल, चक्र, शंख, भुशुण्डि, परिघ, धनुष तथा रक्त टपकता हुआ भग्न मुण्ड शोभित रहता है ॥५॥

एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया।
आराधिता वशीकुर्यात् पूजाकर्तुश्चराचरम्॥६॥
सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽऽविर्भूतामितप्रभा।
त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी॥७॥
श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला।
रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा॥८॥
सुचित्रजघना चित्र-माल्याम्बर-विभूषणा।
चित्रानुलेपना कान्ति-रूप-सौभाग्यशालिनी॥९॥
अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती।
आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात्॥१०॥

भगवान् विष्णु की महाकाली ही दुरुह माया हैं। इनकी उपासना करने पर उपासक चराचर विश्व को अपने अधीनस्थ कर लेता है॥६॥ समस्त देवों के अंगों से जिनकी उत्पत्ति हुई थी, वे असीम कान्तिमयी साक्षात् महालक्ष्मी ही हैं। वे ही त्रिगुणमयी प्रकृति तथा महिषासुरमर्दिनी हैं॥७॥ उनका मुखमण्डल गौरवर्ण, भुजाएँ श्याम-वर्ण, स्तनप्रदेश अत्यधिक श्वेत वर्ण, कटिप्रदेश और चरण लोहित वर्ण तथा जाँघें और पिंडलियाँ नील वर्ण की हैं। विश्व में अजेय होने के कारण उनमें अपने पराक्रम का गर्व भी है॥८॥ कटि का अग्रभाग विविध वर्णों के वस्त्रों से आच्छन्न होने से वह अत्यन्त मनोहारी एवं विचित्र दीख पड़ती हैं। उनकी माला, वस्त्र, आभरण तथा अंगलेपन की सभी वस्तुएँ विचित्र ही हैं। वे रूप, लावण्य और सौभाग्य से विभूषित हैं॥९॥ उनकी भुजाएँ अगणित होने पर भी उन्हें अष्टादश भुजाओं वाली मानकर पूजा करना उचित है। अब उनके दक्षिण हस्त के निम्नांग से लेकर वामपार्श्व के निचले

अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा।
चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः॥११॥
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः।
अलङ्कृत-भुजामेभिरायुधैः कमलासनाम्॥१२॥
सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप।
पूजयेत् सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत्॥१३॥
गौरीदेहात् समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया।
साक्षात् सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिबर्हिणी॥१४॥
दधौ चाष्टभुजा बाण-मुसले शूल-चक्रभृत्।
शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप॥१५॥
एषा सम्पूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति।
निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी॥१६॥

हाथों में जो-जो अस्त्र सुशोभित हैं, उनका वर्णन किया जा रहा है॥१०॥ अक्षमाला, पद्म, बाण, तलवार, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शंख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, ढाल, धनुष, पानपात्र और कमण्डलु इन उपर्युक्त अस्त्रों को वे धारण करने वाली हैं। वे कमलासन पर आसीन हैं, सर्वदेवमयी तथा सभी प्राणियों की ईश्वरी हैं। हे राजन्! जो इन महालक्ष्मी देवी की आराधना करता है, वह समस्त लोकों तथा देवों का भी स्वामी बन जाता है॥११-१३॥

पार्वतीजी के शरीर से जो एकमात्र सत्त्वगुणी होकर उत्पन्न हुई थीं, जिन्होंने शुम्भ नामक दैत्य का वध किया था, उन्हें साक्षात् सरस्वती कहा गया है॥१४॥ हे पृथ्वीपते! उनकी आठ भुजाएँ हैं तथा उनके हाथों में क्रमशः बाण, मूसल, शूल, चक्र, शंख, घण्टा, हल और धनुष सुशोभित होता है॥१५॥ निशुम्भमर्दिनी तथा शुम्भासुर-संहारिणी

इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ।
उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥१७॥
महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती ।
दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥१८॥
विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ।
वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥१९॥
अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।
दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥२०॥

सरस्वती देवी की भक्ति-भावयुक्त होकर पूजा करने पर प्राणी को सर्वज्ञता प्राप्त होती है ॥१६॥

हे राजन् ! मैंने तुम्हें महाकाली आदि तीनों मूर्तियों के स्वरूप बताये, अब जगज्जननी महालक्ष्मी तथा इन महाकाली आदि तीनों मूर्तियों की भिन्न-भिन्न उपासना विधि कहता हूँ, उसे सुनो ॥१७॥ जब महालक्ष्मी की पूजा करनी हो तो उन्हें मध्यभाग में स्थापित करे। तदनन्तर उनके दक्षिण और वाम पार्श्व में क्रमशः महाकाली तथा महासरस्वती की प्रतिमा स्थापित कर पूजन करना चाहिए और पिछले भाग में तीनों युगल देवताओं की स्थापना कर पूजा करना उचित है ॥१८॥ महालक्ष्मी के ठीक पीछे की ओर मध्यभाग में सरस्वती के साथ ब्रह्मा की पूजा करे। उनके दक्षिण भाग में गौरी के साथ रुद्र की तथा वाम पार्श्व में लक्ष्मी के साथ विष्णु का पूजन करे। महालक्ष्मी आदि तीनों देवियों के सामने निम्नलिखित तीन देवियों की भी पूजा करनी चाहिए ॥१९॥ मध्य में स्थित महालक्ष्मी के आगे बीच के भाग में अट्ठारह भुजाओंवाली महालक्ष्मी की पूजा करे। उनके वाम पार्श्व में दसमुखी महाकाली तथा दक्षिण भाग में

अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ।
दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ।।२१।।
काल-मृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्टप्रशान्तये ।
यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिबर्हिणी ।।२२।।
नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्र-विनायकौ ।
नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ।।२३।।
अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः ।
अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ।।२४।।
महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ।
ईश्वरी पुण्य-पापानां सर्वलोकमहेश्वरी ।।२५।।

अष्टभुजी महासरस्वती का पूजन करना चाहिए ।।२०।। हे राजन् ! सभी अनिष्टों की शान्ति के निमित्त जब अष्टादश भुजाओं वाली महालक्ष्मी के दशमुखी काली या अष्टभुजा सरस्वती का पूजन करना हो तब इनके दाहिने पार्श्व में काल की तथा बायें पार्श्व में मृत्युदेव का विधिवत् पूजन करना अनिवार्य है। जब शुम्भासुर-संहारिणी अष्टभुजा देवी की पूजा करनी हो तब साथ ही उनकी नौ[1] शक्तियों एवं दाहिने भाग में रुद्र तथा वाम भाग में गणपति का पूजन करना भी उचित है।

'नमो देव्यै०' इस स्तोत्र मन्त्र से महालक्ष्मी देवी की आराधना करनी चाहिए ।।२१-२३।। उनके तीन अवतारों के पूजन-काल में स्तोत्र में वर्णित मन्त्रों का ही प्रयोग करना चाहिए। अष्टादश भुजाओं वाली महिषासुरमर्दिनी महालक्ष्मी ही विशेषतया आराध्य हैं, क्योंकि

---

१ ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, ऐन्द्री, शिवदूती और चामुण्डा ये ही देवी की नौ शक्तियाँ मानी गयी हैं।

महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ।।२६।।
अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गन्ध-पुष्पैस्तथाऽक्षतैः ।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नाना-भक्ष्य-समन्वितैः ।।२७।।
रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ।
(बलि-मांसादि-पूजेयं विप्रवर्ज्या मयेरिता ।।
तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित् ।)
प्रणामा-ऽचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ।।२८।।
स-कर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्ति-भाव-समन्वितैः ।
वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ।।२९।।
पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ।
दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ।।३०।।

वे ही महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती भी कही जाती हैं। वे ही पुण्य-पापों की स्वामिनी तथा समस्त लोकों की स्वामिनी हैं ।।२४-२५।। महिषासुरनाशिनी महालक्ष्मी का भक्ति-भाव से उपासना करने वाला ही संसार का यथार्थ स्वामी है। अतएव जगद्धात्री भक्तवत्सला भगवती चण्डिका की पूजा अवश्यमेव करनी चाहिए ।।२६।।

देवी के पूजन-सामग्री में अर्घ्य, आभूषण, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप, अनेकों प्रकार के भक्ष्य द्रव्यों से युक्त नैवेद्य, रक्तसिंचित बलि, मांस, मदिरा आदि व्यवहृत होता है। (हे राजन् ! बलि और मांसादि से पूजन करने का विधान ब्राह्मणों के लिए नहीं है। ब्राह्मणों के लिए मांस-मदिरा का व्यवहार सर्वथा वर्ज्य है)। प्रणाम, आचमनीय-जल, सुगन्धित चन्दन, कपूर तथा ताम्बूल आदि निवेदित करके भक्तिपूर्वक देवी का पूजन करना चाहिए। देवी के सामने छिन्न

वाहनं पूजयेद् देव्या धृतं येन चराऽचरम् ।
कुर्याच्च स्तवनं धीमांस्तस्या एकाग्रमानसः ।।३१।।
ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ।
एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ।।३२।।
चरितार्धं तु न जपेज्जपञ्छिद्रमवाप्नुयात् ।
प्रदक्षिणा-नमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ।।३३।।
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः ।
प्रतिश्लोकं च जुहुयात् पायसं तिल-सर्पिषा ।।३४।।
जुहुयात् स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।
भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत् सुसमाहितः ।।३५।।

मस्तक वाले महिषासुर की पूजा करनी चाहिए, जिसने भगवती के साथ सायुज्य पद प्राप्त कर लिया। इसी प्रकार देवी के सामने दाहिनी ओर उनके वाहन सिंह की भी पूजा करनी चाहिए, जो समस्त धर्मों का प्रतीक स्वरूप एवं षड्विध विभूतियों से सम्पन्न है। उसी ने इस चराचर विश्व को धारण किया है। तत्पश्चात् बुद्धिमान मनुष्य स्थिर मन से देवी का स्तवन करे॥२७-३१॥ तदनन्तर तीनों पूर्वोक्त चरित्रों द्वारा करबद्ध होकर देवी की स्तुति करे। यदि कोई एक ही चरित्र के द्वारा स्तुति करना चाहे तो केवल मध्यम चरित्र का ही पाठ करना चाहिए॥३२॥ किन्तु प्रथम और उत्तम चरित्रों में से एक का पाठ न करे। आधे चरित्र का पाठ करना भी निषिद्ध है। जो आधे चरित्र का पाठ करता है उसे पाठ करने का फल नहीं मिलता। पाठ समाप्ति के बाद आराधक देवी की प्रदक्षिणा करके नमस्कार करें तथा प्रमाद त्यागकर जगदम्बा के निमित्त मस्तक पर हाथ जोड़कर अपनी त्रुटियों के लिए उनसे बारम्बार क्षमा-याचना करें। सप्तशती

प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्य चात्मनि ।
सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ।।३६।।
एवं यः पूजयेद् भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।
भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ।।३७।।
यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ।
भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत् परमेश्वरी ।।३८।।
तस्मात् पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ।
यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ।।३९।।

इति वैकृतिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ।

का प्रत्येक श्लोक मन्त्रस्वरूप है, उसी मन्त्र के द्वारा तिल और घृत से निर्मित खीर का हवन करें ।।३३-३४।। अथवा सप्तशती में उल्लिखित मन्त्रों के द्वारा चण्डिका देवी के लिए पवित्र हविष्यान्न का हवन करना चाहिए। हवन के अनन्तर महालक्ष्मी के नाम-मन्त्रों का उच्चारण करते हुए एकाग्र मन से पुनः उनकी पूजा करनी चाहिए ।।३५।। तदनन्तर विनम्र भाव से हाथ जोड़कर मन और इन्द्रियों का निग्रह करते हुए देवी को नमस्कार करे और अपने अन्तर्मन में उनका ध्यान करके देर तक चिन्तन करे। चिन्तनकाल में इतनी तल्लीनता होनी चाहिए जिससे बाह्य-जगत् का ज्ञान न रह जाये ।।३६।।

इस प्रकार प्रतिदिन भक्तिपूर्वक मनुष्य परमेश्वरी का पूजन करके ईप्सित भोगों को भोगता है और अन्त में देवी का सायुज्य (मोक्ष) प्राप्त कर लेता है ।।३७।। जो व्यक्ति प्रतिदिन भक्तवत्सला चण्डी देवी की पूजा नहीं करता, उसके समस्त पुण्य कर्मों को भगवती जलाकर भस्मसात् कर देती हैं ।।३८।। इसलिए हे राजन् ! तुम सर्वलोक महेश्वरी की शास्त्रोक्त विधि से पूजन करके सुख के भागी हो सकोगे ।।३९।।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या में वैकृतिक-रहस्य समाप्त।

मूर्ति-रहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐनन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा ।
स्तुता या पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ।।१।।
कनकोत्तमकान्तिः या सुकान्ति-कनकाम्बरा ।
देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ।।२।।
कमलाङ्कुश-पाशाब्जैरलङ्कृत-चतुर्भुजा ।
इन्दिरा कमला लक्ष्मीः\सा श्री रुक्माम्बुजासना ।।३।।
या रक्तदन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयानघ ।
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ।।४।।
रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ।
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ।।५।।

ऋषि ने कहा-हे राजन् ! नन्द से उत्पन्न होने वाली नन्दा नाम की देवी की यदि भक्तिभाव से उपासना, और पूजन किया जाये तो वे तीनों लोकों को आराधक के अधीनस्थ कर देती हैं ।।१।। उनके अंगों की कान्ति स्वर्ण के समान उत्तम है। वे सुनहले रंग के सुन्दर वस्त्र पहनती हैं, उनकी आभा सुवर्ण के समान है तथा सुवर्ण के उत्तम आभूषण भी धारण करती हैं ।।२।। उनकी चार भुजाओं में क्रमशः कमल, अंकुश, पाश और शंख शोभित हो रहे हैं। उनके नामों की संज्ञा इन्दिरा, कमला, लक्ष्मी, श्री तथा रुक्माम्बुजासना (अर्थात् सुवर्णमय कमल के आसन पर आसीन) हैं। हे निष्पाप नरेश ! मैंने सर्वप्रथम जिन रक्तदन्तिका देवी के नाम से उल्लेख किया है, अब मैं उनके स्वरूप का वर्णन करूँगा, उसे

रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदन्तिका ।
पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ।।६।।
वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ।
दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ।।७।।
कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ।
भक्तान् सम्पाययेद् देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ।।८।।
खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा ।
आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ।।९।।

श्रवण करो। वह सब प्रकार के भयों को नष्ट करने वाली हैं ।।४।। उनके परिधान, शरीर का वर्ण और सम्पूर्ण आभरण भी लाल रंग के हैं। यहाँ तक कि उनके आयुध, नेत्र, केश, तीक्ष्ण नाखून और दन्तावली भी लाल ही है। इसी कारण वे रक्तदन्तिका कही जातीं और अत्यन्त भीषण दिखाई पड़ती हैं। जैसे, स्त्री अपने पति के प्रति अनुरक्त रहती है, वैसे ही देवी भी अपने भक्तों पर (स्नेहमयी जननी की तरह) अनुरक्त रहकर उसकी सेवा-शुश्रुषा करती हैं ।।५-६।। रक्तदन्तिका देवी का आकार वसुन्धरा के समान विस्तृत है। उनके स्तनद्वय सुमेरु पर्वत के सदृश हैं। वे लम्बे-चौड़े डील-डौल वाले अत्यन्त पीन (मोटे) तथा बहुत ही मनोरम हैं। कठोरता होने पर भी उनमें कमनीयता है तथा वे आनन्द के पूर्ण सागर हैं, देवी अपने भक्तों को दोनों स्तनों का पान कराती हैं, क्योंकि उनके स्तन समस्त कामनाओं की सिद्धि करने वाले हैं ।।७-८।। उनकी चार भुजाओं में खड्ग, पानपात्र, मूसल और हल शोभा पाते हैं। वे ही रक्तचामुण्डा और योगेश्वरी के नाम से भी प्रसिद्ध हैं ।।९।।

अनया व्याप्तमखिलं जगत्-स्थावर-जङ्गमम् ।
इमां यः पूजयेद् भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ।।१०।।
(भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ।)
अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुः स्तवम् ।
तं सा परिचरेद् देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ।।११।।
शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ।
गम्भीर-नाभिस्त्रिवली-विभूषित-तनूदरी ।।१२।।
सुकर्कश-समोत्तुङ्ग-वृत्त-पीन-घनस्तनी ।
मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ।।१३।।
पुष्प-पल्लव-मूलादि-फलाढ्यं शाकसञ्चयम् ।
काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युभयापहम् ।।१४।।

उनके द्वारा यह चराचर जगत् परिव्याप्त है। जो इन रक्तदन्तिका देवी की भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह भी चराचर जगत् में व्याप्त हो जाता है ॥१०॥ (वह ईप्सित भोगों का उपभोग कर अन्त में देवी के साथ सायुज्य लाभ कर लेता है।) जिस प्रकार पतिपरायणा नारी अपने पति की प्रतिदिन सेवा करती है, ठीक उसी प्रकार रक्तदन्तिका देवी भी अपनी पूजा और स्तवन करने वाले भक्त का रक्षण के रूप में परिचर्या करती हैं ॥११॥ शाकम्भरी देवी के शरीर की आभा नील वर्ण की है। नील पद्म की भाँति उनके नेत्र हैं, नाभि भाग नीचा है तथा तीन रेखाओं से युक्त सूक्ष्म उदर है ॥१२॥ उनके दोनों कुच अत्यन्त कठोर, समतल, ऊँचे, गोल, पीन तथा परस्पर मिलित हैं। उनका निवास कमल में है। हाथों में बाणों से परिपूर्ण मुष्टि, कमल, शाकों का समूह तथा चमकीला धनुष है। वह

कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति बिभ्रती परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ।।१५।।
विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम् ।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ।।१६।।
शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायन्-जपन् सम्पूज्यन्-नमन् ।
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं फलम् ।।१७।।
भीमाऽपि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ।
विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ।।१८।।
चन्द्रहासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती ।
एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ।।१९।।
तेजोमण्डलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकान्तिभृत् ।
चित्रानुलेपना देवी चित्राभरणभूषिता ।।२०।।

शाकसमूह फूल, पर्ण, मूल एवं फलों से युक्त हैं और वह असीम मनोवांछा के रसों से पूर्ण तथा क्षुधा, पिपासा एवं मृत्युभय नाशक है। उन्हीं का नाम शाकम्भरी, शताक्षी तथा दुर्गा है ।।१३-१५।। वे शोकरहित, दुष्टदमनी तथा पाप-ताप शामक हैं। उमा, गौरी, सती, चण्डी, कालिका और पार्वती भी उन्हीं के नाम हैं ।।१६।। जो कोई शाकम्भरी देवी का स्तवन, ध्यान, जप, पूजन और वन्दन करता है, वह शीघ्र ही अन्न, पान तथा अमृतरूप अक्षयफल का अधिकारी बनता है ।।१७।। भीमा देवी का भी नील वर्ण है। उनकी दाढ़ें और दाँतचमकीले हैं। उनके नेत्र विशाल, स्त्री का स्वरूप, स्तन गोलाकार और स्थूल है। उनके हाथों में चन्द्रहास नामक तलवार,

चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते ।
इत्येता मूर्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ।।२१।।
जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित् त्वया ।।२२।।
व्याख्यानं दिव्यमूर्तीनामभीष्टफलदायकम् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ।।२३।।
सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि ।
पाठमात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ।।२४।।
देव्या ध्यानं मया ख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं महत् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् ।।२५।।

डमरू, मस्तक और पानपात्र है। वे ही एकवीरा, कालरात्रि तथा कामदा के नामों से ख्यात होकर महिमान्वित होती हैं ।।१८-१९।।

भ्रामरी देवी के शरीर की आभा विपुल वर्णों से मिश्रित है। वे अपने तेजप्रभा के कारण दुर्धर्ष दीख पड़ती हैं। उनका अंगराज भी विविध रंगों का है तथा वे विचित्र आभरणों को धारण करती हैं ।।२०।।

चित्रभ्रमरपाणि और महामारी आदि नामों से उनका गुणगान किया जाता है। हे राजन्! इस प्रकार जगज्जननी चण्डिका देवी की मूर्तियों का वर्णन किया गया है ।।२१।। उनका कीर्तन कामधेनु के समान सभी आकांक्षाओं को पूर्ण करने वाला है। यह रहस्य बहुत ही गोपनीय है। इनका वर्णन किसी दूसरे से नहीं करना चाहिए ।।२२।।

दिव्य मूर्तियों का यह आख्यान मनोभिलषित फलदाता है, इसलिए प्रयत्नपूर्वक तुम सतत देव्याराधन में लगे रहो ।।२३।। सप्तशती के मन्त्रों के केवल पाठ से ही मनुष्य को सात जन्मों के

(एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यसि ।
सर्वरूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत् ।।
अतोऽहं विश्वरूपां तां नमामि परमेश्वरीम् ।)

इति मूर्तिरहस्यं सम्पूर्णम् ।

●

उत्तरपूजनम्

आवाहितानां देवानाम् उत्तरपूजनार्थं सर्वोपचारार्थे गन्धाऽक्षत-पुष्पाणि समर्पयामि ।

इँत्युत्तरपूजनम् ।

●

अर्जित ब्रह्महत्यादिक समस्त पापों से छुटकारा हो जाता है ।।२४।। इसलिए मैंने देवी के गुप्त से गुप्ततर ध्यान का कथन किया है, जो समस्त इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है ।।२५।।

(उनके प्रसाद से तुम सर्वेसर्वा हो जाओगे। देवी का स्वरूप सर्वरूपयुक्त है तथा यह सम्पूर्ण विश्व देवी से युक्त है। अतः मैं उन विश्वरूपा परमेश्वरी को प्रणाम करता हूँ।)

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित मूर्ति-रहस्य समाप्त ।

●

उत्तरपूजन—इसके बाद 'आवाहितानां देवानाम्' से लेकर 'गन्धाऽक्षत-पुष्पाणि समर्पयामि' तक पढ़कर स्थापित देवताओं पर चन्दन, अक्षत और पुष्प चढ़ाये।

इस प्रकार उत्तरपूजन समाप्त ।

●

आरार्तिक्यम्

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम् ।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ।।

ॐ इदꣳ हविः प्प्रजननं मे ऽअस्तु दशवीरꣳ सर्व्वगणꣳ स्वस्तये । आत्मसनि प्प्रजासनि पशुसनि लोकसन्न्यभयसनि । अग्निः प्प्रजां बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयो रेतो ऽअस्म्मासु धत्त ॥ आ रात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्प्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि बृहती व्वितिष्ठस ऽआत्वेषं वर्त्तते तमः ॥

इत्यावाहित-समस्तदेवानां कर्पूरनीराजनं समर्पयामि ।

मन्त्रपुष्पाञ्जलिः

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्प्रथमान्न्यासन् । तेह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।

आरती—तदनन्तर 'कदलीगर्भसम्भूतं०' से 'आवाहित-समस्त-देवानां कर्पूरनीराजनं समर्पयामि' तक पढ़कर कपूर की आरती करे ।

मन्त्रपुष्पांजलि—तत्पश्चात् हाथ में फूल लेकर 'ॐ यज्ञेन यज्ञमय-

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायि स्यात्। सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति। तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः।

ॐ व्विश्वतश्चक्षुरुत व्विश्वतोमुखो व्विश्वतोबाहुरुतव्विश्वतस्पात् सम्बाहुब्भ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमिं जनयन् देवऽएकः॥

इत्यावाहितदेवानां मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

आशीर्वादः

ॐ पुनस्त्वाऽदित्या रुद्राव्वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो व्वसुनीथ यज्ञैः। घृतेन त्वन्तन्वं व्वर्द्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः॥

ॐ दीर्घायुस्त ओषधे खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम्। अथो त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा व्विरोहतात्॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु
गो-वाजि-हस्ति-धन-धान्य-समृद्धिरस्तु।

जन्त०' से लेकर 'जनयन् देवऽएकः' तक पढ़कर आवाहित देवताओं पर पुष्पांजलि समर्पित करें।

आशीर्वाद प्रदान—इसके बाद आचार्य 'ॐ पुनस्त्वाऽदित्या रुद्रा०'

ऐश्वर्यमस्तु बलमस्तु रिपुक्षयोऽस्तु
वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु ।।
श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते ।
धनं धान्यं पशु बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ।।
यावद् भागीरथी गङ्गा तावद्देवो महेश्वरः ।
यावद् वेदाः प्रवर्तन्ते तावत्त्वं विजयी भव ।।
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ।।

इत्याशीर्वादः समाप्तः ।

पञ्चभूसंस्कारः

अस्मिन् स-नवग्रहमख-दुर्गार्चनाख्ये कर्मणि पञ्चभू-संस्कारपूर्वकमग्निस्थापनं करिष्ये ।

से 'मित्राणामुदयस्तव' तक पढ़कर यजमान को आशीर्वाद दे ।

पंचभू-संस्कार—हाथ में जल लेकर 'अस्मिन् स-नवग्रहमख-दुर्गार्चनाख्ये०' से 'अग्निस्थापनं करिष्ये' तक अग्निस्थापन का संकल्प पढ़कर जल छोड़ दे ।

तत्पश्चात् हाथ में मुट्ठी भर कुशा लेकर वेदी को झाड़े और उन कुशाओं को ईशान कोण में रख दे । पुनः जल-मिश्रित गोबर से वेदी को लीपे एवं स्रुवा के मूल भाग के नीचे से ऊपर को तीन रेखा करे, रेखा के अनुसार अनामिका और अँगूठे से जहाँ रेखा किया गया है, वहाँ की एक-एक बार मिट्टी को उठावे और बायें हाथ मे रखे, फिर बायें हाथ की सब मिट्टी को दाहिने हाथ में रखकर ईशान कोण में फेंक दे । पुनः उन रेखाओं पर जल छिड़के ।

कुशैः परिसमूह्य, तान् कुशानैशान्यां परित्यज्य १, गोमयोदकेनोपलिप्य २, स्रुवेणोल्लिख्य ३, अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य ४, जलेनाऽभ्युक्ष्य ५ ।

अग्निस्थापनम्

ॐ अ॒ग्निं दू॒तं पुरो दधे हव्य॒वाह॒मुप॑ ब्रुवे । दे॒वाँ२॥ आसा॑दयादि॒ह ॥

इति मन्त्रेणाग्निमुपसमाधायाऽग्निं स्थापयेत् ।

ग्रहपूजनम्

ततः पूर्वनिर्मितहस्तमात्रं चतुरस्रं ग्रहवेद्यां श्वेतवस्त्रं प्रसार्य, नवग्रहमण्डलं विलिख्य मध्यादिकोष्ठेषु उक्तदिक्षु विदिक्षु [1]सूर्यादिग्रहाणां स्थापनं पूजनं च कुर्यात् । तद्यथा-

अग्निस्थापन– काँसे की थाली या मृत्तिका पात्र में अग्नि मँगाकर 'ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे०' इस मन्त्र से अपने मुख के सामने वेदी पर अग्निस्थापन करें ।

१. सूर्यादिग्रहस्थापनक्रमः । स्कान्दे–

'ईशाने मण्डलं कृत्वा ग्रहाणां स्थापनं ततः ।
वृत्तमण्डलमादित्यमर्धचन्द्रं निशाकरम् ॥
त्रिकोणं मण्डलं चैव बुधं च धनुषाकृतिम् ।
गुरुमष्टदलं प्रोक्तं चतुष्कोणं च भार्गवम् ॥
नराकृतिं शनिं विन्द्याद् राहुं च मकराकृतिम् ।
केतुं खड्गसमं ज्ञेयं ग्रहमण्डलके शुभे ॥'

अथवा

वृत्तमण्डलमादित्यं चतुरस्रं निशाकरम् ।
त्रिकोणं मङ्गलं चैव बुधं वै बाणसन्निभम् ॥

जपा-कुसुम-सङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आ कृष्णेन॒ रज॑सा॒ वर्त्त॑मानो निवे॒शय॑न्न॒मृतं॒ मर्त्यं॑ञ्च । हि॒र॒ण्यये॑न सवि॒ता रथे॒ना दे॒वो या॑ति॒ भुव॑नानि॒ पश्य॑न् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य! इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः,

---

ग्रहपूजन—तत्पश्चात् चौकोर हाथ-भर की बनी ग्रहवेदी पर सफेद वस्त्र बिछावे और उस पर नवग्रह-मण्डल का निर्माण कर मध्य आदि कोष्ठों (खानों) में कथित आठों दिशाओं में सूर्यादि ग्रहों का स्थापन और पूजन करें ।

गुरवे पट्टिशाकारं पञ्चकोणं भृगुं तथा ।
मन्दे च धनुषाकारं सूर्पाकारं तु राहवे ।।
केतवे च ध्वजाकारं मण्डलानि क्रमेण तु ।
शुक्रा-ऽर्कौ प्राङ्मुखौ ज्ञेयौ गुरु-सौम्यावुदङ्मुखौ ।।
प्रत्यङ्मुखौ शनि-सोमौ शेषा दक्षिणतो मुखाः ।
मध्ये तु भास्करं विन्द्याच्छशिनं पूर्व-दक्षिणे ।।
दक्षिणे लोहितं विन्द्याद् बुधं पूर्वोत्तरेण तु ।
उत्तरेण गुरुं विन्द्याद् पूर्वेणैव तु भार्गवम् ।।
पश्चिमे तु शनिं विन्द्याद् राहुं दक्षिण-पश्चिमे ।
पश्चिमोत्तरतः केतुम् इत्येषा ग्रहसंस्थितिः ।।
आदित्याभिमुखाः सर्वे साऽधि-प्रत्यधिदेवताः ।
अधिदेवता दक्षिणे वामे प्रत्यधिदेवताः ।।
अरुणौ सूर्य-भौमौ च श्वेतौ शुक्र-निशाकरौ ।
हरितवर्णो बुधश्चैव पीतवर्णो गुरुस्तथा ।
कृष्णवर्णाः शनि-राहु-केतवस्तु तथैव च ।।

सूर्यमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

दधि-शङ्ख-तुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् ।
ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावाहयाम्यहम् ।।

ॐ इमन्देवा ऽअसपत्नꣳ सुवद्ध्वम्महते क्षत्त्राय महते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्य्य पुत्त्रममुष्यै पुत्त्रमस्यै विश ऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम! इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि ।।२।।

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजःसम-प्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अग्निर्म्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्व्या ऽअयम् । अपाꣳ रेताꣳसि जिन्वति ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिकापुरोद्भव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम! इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः, भौममावाहयामि स्थापयामि ।।३।।

प्रियङ्गुकलिकाभासं रूपेणाऽप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम् ।।

सूर्याद्यावाहन—तदनन्तर 'जपा-कुसुम-सङ्काशं०' से लेकर 'सूर्यमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर सूर्य का, 'दधि-शङ्ख-तुषाराभं०' से 'सोममावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त कहकर सोम का, धरणीगर्भ-

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथा-मयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थे अद्ध्युत्तरस्मिन् विश्श्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध! इहागच्छेह तिष्ठ बुधाय नमः, बुध-मावाहयामि स्थापयामि ।।४।।

देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम् ।
वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ बृहस्पते ऽअति यदर्य्यो अर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतु-मज्जनेषु । यद्दीदयच्छवस ऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते! इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि ।।५।।

हिम-कुन्द-मृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पयः

सम्भूतं०' से 'भौममावाहयामि स्थापयामि' तक बोलकर भौम का, 'प्रियङ्गु-कलिकाभासं०'–'बुधमावाहयामि स्थापयामि' से बुध का आवाहन और स्थापन करे।

इसी प्रकार 'देवानां च मुनीनां च०' से लेकर 'बृहस्पति-मावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर बृहस्पति का, 'हिम-कुन्द-

सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस ऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकटिदेशोद्भव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र ! इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽ आपो भवन्तु पीतये । शं य्योरभिस्रवन्तु नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर ! इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहिकागर्भसम्भूतं राहुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ कया नश्चित्र ऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोद्भव पैठिनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो ! इहागच्छेह तिष्ठ राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि ।।८।।

मृणालाभं०' से 'शुक्रमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर शुक्र का, 'नीलाम्बुज-समाभासं०' से 'शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त कहकर शनि का, 'अर्द्धकायं महावीर्यं०' से लेकर

पालाशधूम्रसङ्काशं　तारकाग्रहमस्तकम्　।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम्　।।

ॐ केतुं कृण्ण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या ऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो! इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः, केतुमावाहयामि स्थापयामि ।।९।।

[1]अधिदेवतास्थापनम्

ततो ग्रहदक्षिणपार्श्वेऽधिदेवतास्थापनं कुर्यात् ।

पञ्चवक्त्रं वृषारूढमुमेशं च त्रिलोचनम् ।
आवाहयामीश्वरं तं खट्वाङ्गवरधारिणम् ।।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् । उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईश्वर इहागच्छ इह तिष्ठ ईश्वराय नमः, ईश्वरमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

'राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर राहु का और 'पालाशधूम्रसङ्काशं०' से 'केतुमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर केतु का आवाहन और स्थापन करें ।

अधिदेवता स्थापन—तत्पश्चात् सूर्यादि ग्रहों के दाहिनी ओर अधिदेवता का स्थापन करें । यथा-'पञ्चवक्त्रं वृषारूढमुमेशं च०' से लेकर 'ईश्वरमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर ईश्वर,

---

१.स्कान्दे- शिवः शिवा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेन्द्रयमकालकाः ।
चित्रगुप्तोऽथ भान्वादि-दक्षिणे चाऽधिदेवताः ।।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीमुमामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ श्रीश्श्च ते लक्ष्मीश्श्च पत्न्यावहोरात्त्रे पार्श्र्वे नक्षत्त्राणि रूपमश्श्विनौ व्यात्तम् । इष्ण्णन्निषाणामुम्मं ऽइषाण सर्व्वलोकम्मं ऽइषाण ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः उमेहागच्छ इह तिष्ठ उमायै नमः, उमामावाहयामि स्थापयामि ।।२।।

रुद्रतेजःसमुत्पन्नं देवसेनाग्रजं विभुम् ।
षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ यदक्क्रन्दः प्रथमञ्जायमान ऽउद्यन्त्समुद्द्रादुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू ऽउपस्तुत्यं महि जातन्ते ऽअर्व्वन् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्देहागच्छ इह तिष्ठ स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि ।।३।।

देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम् ।
चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ विष्ण्णोर्‌ रराटमसि विष्ण्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्ण्णोः स्यूरसि विष्ण्णोर्द्ध्रुवोऽसि । वैष्ण्णवमसि विष्ण्णवे त्वा ॥

'हेमाद्रि तनयां देवीं०'–उमामावाहयामि स्थापयामि' से उमा, 'रुद्रतेजः–समुत्पन्नं०'–'स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि' से स्कन्द,

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ।।४।।

कृष्णाजिनाऽम्बरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम् ।
वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर ऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।।५।।

देवराजं गजारूढं शुनासीरं शतक्रतुम् ।
वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ सजोषा ऽइन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् । जहि शत्रूँ२।। रपमृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः,

'देवदेवं जगन्नाथं०'–'विष्णुमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त श्लोक तथा मन्त्र-वाक्य पढ़कर विष्णु का आवाहन एवं स्थापन करें । इसी तरह 'कृष्णाजिनाऽम्बरधरं०' से लेकर 'ब्रह्माणमावाहयामि

इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम् ।
रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम् ।।

ॐ य॒माय॒ त्वाङ्गिरस्वते पितृमते॒ स्वाहा । स्वाहा घ॒र्म्माय॒ स्वाहा घ॒र्मः पि॒त्रे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ इह तिष्ठ यमाय नमः, यममावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

अनाकारमनन्ताख्यं वर्तमानं दिने दिने ।
कलाकाष्ठादिरूपेण कालमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ कार्षिरसि समु॒द्रस्य॒ त्वाक्षित्त्या॒ऽउन्नयामि । समापो ऽअ॒द्भिरग्मत॒ समोषधीभि॒रोषधीः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कालेहागच्छ इह तिष्ठ कालाय नमः, कालमावाहयामि स्थापयामि ।।८।।

धर्मराजसभासंस्थं कृता-ऽकृत-विवेकिनम् ।
आवाहयेच्चित्रगुप्तं लेखनीपत्रहस्तकम् ।।

ॐ चित्रावसो स्व॒स्ति ते पा॒रमशीय ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्तेहागच्छ इह तिष्ठ चित्रगुप्ताय नमः, चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि ।।९।।

स्थापयामि' तक से ब्रह्मा, 'देवराजं गजारूढं०' से 'इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर इन्द्र, 'धर्मराजं महावीर्यं'-'यममावाहयामि स्थापयामि' तक से यम, 'अनाकारमनन्ताख्यं०'-'कालाय नमः, कालमावाहयामि स्थापयामि' तक से काल और 'धर्मराजसभासंस्थं०'

[1]प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

ततो ग्रहवामपार्श्वे प्रत्यधिदेवतास्थापनं कुर्यात् ।

रक्तमाल्याम्बरधरं रक्त-पद्मासन-स्थितम् ।
वरदाभयदं देवमग्निमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ२ऽआसादयादिह ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

आदिदेवसमुद्भूता जगच्छुद्धिकरा शुभाः ।
औषध्याप्यायनकरा अपामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऽऊर्ज्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अप इहाऽऽगच्छत तिष्ठत अद्भ्यो नमः, अप आवाहयामि स्थापयामि ।।२।।

शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम् ।
सर्वशस्याश्रयां देवीं धरामावाहयाम्यहम् ।।

से आरम्भ कर 'चित्रगुप्ताय नमः, चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर चित्रगुप्त का आवाहन एवं स्थापन करें ।

प्रत्यधिदेवता स्थापन-तदनन्तर ग्रहों के बायीं ओर प्रत्यधिदेवता का आवाहन पूर्वक स्थापन करें । 'रक्तमाल्याम्बरधरं०' से 'अग्निमावाहयामि स्थापयामि' तक से अग्नि, 'आदिदेवसमुद्भूता०'-'अप-

१.स्कान्दे- अग्निरापो धरा विष्णुः शक्रेन्द्राणी पितामहाः ।
पन्नगाकः क्रमाद्वामे ग्रहप्रत्यधिदेवताः ॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिवी इहागच्छ इहतिष्ठ पृथिव्यै नमः, पृथिवीमावाहयामि स्थापयामि ॥३॥

शङ्ख-चक्र-गदा-पद्महस्तं गरुडवाहनम्।
किरीट-कुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पाᳪसुरे स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ॥४॥

ऐरावतगजारूढं सहस्राक्षं शचीपतिम्।
वज्रहस्तं सुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ इन्द्र ऽआसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर ऽएतु सोमः। देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ॥५॥

आवाहयामि स्थापयामि' से अप, 'शुक्लवर्णां विशालाक्षीं०'-'पृथिवीमावाहयामि स्थापयामि' तक से पृथिवी, 'शङ्ख-चक्र-गदा-पद्महस्तं०'-'विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि' से विष्णु, 'ऐरावतगजारूढं०' से 'इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर इन्द्र का आवाहन एवं स्थापन करें।

प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम् ।
नानाऽलङ्कारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आदित्यै रास्नासीन्द्राण्ण्या ऽउष्णीषः । पूषासि घर्म्माय दीष्व ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राणि इहागच्छेह तिष्ठ इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीमावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

आवाहयाम्यहं देवदेवेशं च प्रजापतिम् ।
अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम् ।।

ॐ प्प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो व्विश्वा रूपाणि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु व्वयंᳬस्याम पतयो रयीणाम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापते इहागच्छेह तिष्ठ प्रजापतये नमः, प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान् ।
आवाहयाम्यहं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान् ।।

ॐ नमोऽस्तु सर्प्पेब्भ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेब्भ्यः सर्प्पेब्भ्यो नमः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पा इहागच्छत तिष्ठत सर्पेभ्यो

उपर्युक्त प्रकार से ही 'प्रसन्नवदनां देवीं०' से आरम्भ कर 'इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीमावाहयामि स्थापयामि' पर्यन्त उच्चारण कर इन्द्राणी, 'आवाहयाम्यहं देवदेवेशं०' से 'प्रजापतये नमः, प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि' तक से प्रजापति, 'अनन्ताद्यान् महाकायान्'

नमः, सर्पानावाहयामि स्थापयामि ॥८॥

हंसपृष्ठसमारूढं देवतागणपूजितम्।
आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम्॥

ॐ ब्रह्म यज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो व्वेन ऽआवः। स बुध्न्या ऽउपमा ऽअस्य व्विष्ठाः सतश्श्च योनिमसतश्श्च व्विवः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छेह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ॥९॥

पञ्चलोकपालस्थापनम्

ततो [1]विनायकादिपञ्चलोकपालदेवता वास्तोष्पतिं क्षेत्रपालं चाऽऽवाहयेत्।

लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।
आवाहयाम्यहं देवं गणेशं सिद्धिदायकम्॥

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो

से 'सर्पेभ्यो नमः, सर्पानावाहयामि स्थापयामि' तक बोलकर सर्प, 'हंसपृष्ठसमारूढं०' से 'ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर ब्रह्मा का आवाहन और स्थापन करें।

पंचलोकपाल स्थापन—इसके बाद विनायक आदि पंचलोकपाल, वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल का आवाहन पूर्वक स्थापन करे। 'लम्बोदरं

१. गणेशश्चाऽम्बिका वायुराकाशश्चाऽश्विनौ तथा।
ग्रहाणामुत्तरे पञ्च लोकपालाः प्रकीर्तिताः॥ - इति स्कन्दपुराणोक्तम्।

मम । आहमजानि गर्ब्भधमा त्वमजासि गर्ब्भधम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये इहागच्छेह तिष्ठ गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे ।
नानाजातिकुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गे इहागच्छेह तिष्ठ दुर्गायै नमः, दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।।२।।

आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणम् ।
सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ।।

ॐ वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान्सोमपीतये ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छेह तिष्ठ वायवे नमः, वायुमावाहयामि स्थापयामि ।।३।।

अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम् ।
आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम् ।।

ॐ घृतंघृतपावानः पिबत वसां वसापावानः

महाकायं०' से गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि' तक से गणपति, 'पत्तने नगरे ग्रामे०'-'दुर्गामावाहयामि स्थापयामि' तक से दुर्गा, 'आवाहयाम्यहं'-'वायुमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर

पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिश आदिशो विदिश ऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश इहागच्छेह तिष्ठ आकाशाय नमः, आकाशमावाहयामि स्थापयामि ।।४।।

देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषग्वरौ ।
आवाहयाम्यहं देवावश्विनौ पुष्टिवर्द्धनौ ।।

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विनौ इहागच्छतां इह तिष्ठताम् अश्विभ्यां नमः, अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ।।५।।

वास्तोष्पतिं विदिक्कार्यं भूशय्याभिरतं प्रभुम् ।
आवाहयाम्यहं देवं सर्वकर्मफलप्रदम् ।।

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो ऽअनमीवो-भवा नः । यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पते इहागच्छेहतिष्ठ वास्तोष्पतये नमः, वास्तोष्पतिमावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

भूत-प्रेत-पिशाचाद्यैरावृतं शूलपाणिनम् ।
आवाहये क्षेत्रपालं कर्मण्यस्मिन् सुखाय नमः ।।

वायु, 'अनाकारं शब्दगुणं०'-'आकाशमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर आकाश और 'देवतानां च भैषज्ये०' से 'अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर अश्विनी का आवाहन और स्थापन करें ।

ॐ नहि स्प्पश्मविदन्नन्यमस्म्माद्वैश्श्वानरात्पुर ऽएतारमग्ग्नेः । एमेनमवृधन्नमृता ऽअमर्त्यं व्वैश्श्वानरं क्षैत्त्रजित्याय देवाः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपते इहागच्छेह तिष्ठ क्षेत्राधिपतये नमः, क्षेत्राधिपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

[1]दशदिक्पालस्थापनम्

ततो मण्डलाद् बहिः दशदिक्पालानामावाहनं कुर्यात् ।

इन्द्रं सुरपतिश्रेष्ठं वज्रहस्तं महाबलम् ।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै शतयज्ञाधिपं प्रभुम् ।।

ॐ त्त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्क्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।।१।।

इसी प्रकर 'वास्तोष्पतिं विदिक्कार्यं०' से 'वास्तोष्पतिमावाहयामि स्थापयामि' तक कहकर वास्तोष्पति, 'भूत-प्रेत-पिशाचाद्यैरावृतं'-'क्षेत्राधिपतिमावाहयामि स्थापयामि' तक से क्षेत्राधिपति का आवाहन पूर्वक स्थापन करें ।

दशदिक्पाल स्थापन–तत्पश्चात् ग्रहमण्डल के बाहर पूर्व दिशा से प्रदक्षिण क्रम से दशदिक्पालों का आवाहन पूर्वक स्थापन करें । यथा–'इन्द्रं सुरपतिश्रेष्ठं०' से लेकर 'इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि' तक

---

१. रुद्रो वह्निः पितृपतिर्नैर्ऋतो वरुणो मरुत् ।
कुबेर ईशो ब्रह्मा च ह्यनन्तो दश दिक्पतिः ॥ - इति संग्रहे ।

त्रिपादं सप्तहस्तं च द्विमूर्द्धानं द्विनासिकम् ।
षण्नेत्रं च चतुःश्रोत्रमग्निमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ त्वन्नो ऽअग्ग्ने तव देव पायुभिर्म्मघोनो रक्ष तन्वश्च्च व्वन्द्य । त्त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेषᳪ रक्क्षमाणस्तव व्व्रते ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छेह तिष्ठ अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।।२।।

महामहिषमारूढं दण्डहस्तं महाबलम् ।
यज्ञसंरक्षणार्थाय यममावाहयाम्यहम् ।।

ॐ यमाय त्त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमेहागच्छेह तिष्ठ यमाय नमः, यममावाहयामि स्थापयामि ।।३।।

सर्वप्रेताधिपं देवं निर्ऋतिं नीलविग्रहम् ।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै नरारूढं वरप्रदम् ।।

ॐ असुन्न्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्त्यामन्न्विहि तस्करस्य । अन्न्यमस्म्मदिच्छ सा त ऽइत्त्या नमो देवि निर्ऋते तुब्भ्यमस्तु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋते इहागच्छेह तिष्ठ निर्ऋतये

पढ़कर इन्द्र, 'त्रिपादं सप्तहस्तं च०'-अग्निमावाहयामि स्थापयामि' से अग्नि, 'महामहिषमारूढं०'-'यममावाहयामि स्थापयामि' तक से यम,

नमः, निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि ।।४।।

शुद्ध-स्फटिक-सङ्काशं जलेशं यादशां पतिम् ।
आवाहये प्रतीचीशं वरुणं सर्वकामदम् ।।

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा न आयुः प्रमोषीः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छेह तिष्ठ वरुणाय नमः, वरुणमावाहयामि स्थापयामि ।।५।।

मनोजवं महातेजं सर्वतश्चारिणं शुभम् ।
यज्ञसंरक्षणार्थाय वायुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । वायो ऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छेह तिष्ठ वायवे नमः, वायुमावाहयामि स्थापयामि ।।६।।

आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम् ।
महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतिं विभुम् ।।

'सर्वप्रेताधिपं देवं०'-'निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि' से निर्ऋति, 'शुद्धस्फटिक-सङ्काशं०'-'वरुणमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर वरुण का आवाहन एवं स्थापन करे ।

इसी तरह 'मनोजवं महातेजं' से लेकर 'वायुमावाहयामि स्थापयामि' तक से वायु, 'आवाहयामि देवेशं धनदं०'-

ॐ व्वयꣳ सोम व्व्रते तव मनस्तनुषु बिब्भ्रतः। प्प्रजावन्तः सचेमहि ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमेहागच्छेह तिष्ठ सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि ।।७।।

सर्वाधिपं महादेवं भूतानां पतिमव्ययम्।
आवाहये तमीशानं लोकानामभयप्रदम्।।

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्प्पतिं धियं जिन्न्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानेहागच्छेह तिष्ठ ईशानाय नमः, ईशानमावाहयामि स्थापयामि ।।८।।

पद्मयोनिं चतुर्मूर्तिं वेदगर्भं पितामहम्।
आवाहयामि ब्रह्माणं यज्ञसंसिद्धिहेतवे।।

ॐ अस्म्मे रुद्द्रा मेहना पर्व्वतासो व्वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः। यः शꣳसते स्तुवते धायि वज्ज्र ऽइन्द्रज्ज्येष्ठा ऽअस्म्माँ२॥ ऽअवन्तु देवाः ॥

पूर्वेशानयोर्मध्ये-ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छेह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।।९।।

'सोममावाहयामि स्थापयामि' से सोम, 'सर्वाधिपं महादेवं०'- ईशानमावाहयामि स्थापयामि' से ईशान, 'पद्मयोनिं चतुर्मूर्तिं०'- 'ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि' से पूर्व और ईशान के ठीक मध्य में

अनन्तं सर्वनागानामधिपं विश्वरूपिणम्।
जगतां शान्तिकर्तारं मण्डले स्थापयाम्यहम्।।

ॐ स्योना प्पृथिवि नो भवान्नृक्षरा निवेशनी।
यच्छा नः शर्म्म सप्प्रथाः ॥

निर्ऋति-पश्चिमयोर्मध्ये-ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्तेहागच्छेह तिष्ठ अनन्ताय नमः, अनन्तमावाहयामि स्थापयामि ।।१०।।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।।

ॐ मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमं तनोत्त्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमं दधातु। व्विश्श्वेदेवास ऽइह मादयन्तामोꣳ३ प्रतिष्ठ ॥

सूर्याद्यनन्तान्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु। 'सूर्याद्यनन्तान्तदेवताभ्यो नमः' इति मन्त्रेण आसनादि-षोडशोपचारैः प्रत्येकमेकत्र वा सम्पूज्य प्रार्थयेत्।

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशि भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु।।११।।

ब्रह्मा और 'अनन्तं सर्वनागानामधिपं' से लेकर 'अनन्तमावाहयामि स्थापयामि' तक पढ़कर निर्ऋति एवं पश्चिम दिशा के ठीक बीच में अनन्त का आवाहन एवं स्थापन करें।

तत्पश्चात् 'अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु०' से आरम्भ कर 'सूर्याद्यनन्तान्त-देवताभ्यो नमः' तक श्लोक एवं मन्त्रवाक्य पढ़कर आसनादि-षोडशोपचार द्वारा सूर्यादि प्रत्येक नाम अथवा एक तन्त्र से ही

ॐ ग्रहा ऽऊर्ज्जाहुतयो व्व्यन्तो व्विप्प्राय मतिम् । तेषां व्विशिप्प्रियाणां व्वोऽहमिषमूर्ज्जꣳ समग्ग्रभमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्त्वा जुष्टङ्गृह्णाम्म्येष ते योनिरिन्द्राय त्त्वा जुष्टतमम् ॥

अनया पूजया सूर्याद्यनन्तान्तदेवताः प्रीयन्ताम् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ ग्रहपूजनं समाप्तम् ।

●

असङ्ख्यात-रुद्रकलश-स्थापनं पूजनं च

तदनन्तरं ग्रहस्येशानदिग्भागे कलशस्थापनविधिना रुद्रकलशं संस्थाप्य, कलशे वरुणमसंख्यातरुद्रांश्चाऽऽवाह्य पूजयेत् । तद्यथा-

ॐ असङ्ख्याता सहस्राणि ये रुद्द्रा ऽअधि भूम्म्याम् । तेषाꣳसहस्रयोजनेऽवधन्न्वानितन्न्मसि ।

असङ्ख्यातरुद्रेभ्यो नमः, असङ्ख्यातरुद्रानावाहयामि स्थापयामि । 'ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य०' इति मन्त्रेण

सूर्यादिअनन्तान्त देवताओं का पूजन कर प्रार्थना करें ।

तदनन्तर 'ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी०' श्लोक तथा 'ग्रहा ऊर्जाहुतयो०' मन्त्र पढ़कर सूर्यादि ग्रहों की प्रार्थना करें और 'अनया पूजया०' पढ़कर जल छोड़ दे ।

इस प्रकार ग्रहपूजन समाप्त ।

●

असंख्यातरुद्रकलश स्थापन एवं पूजन– तदनन्तर ग्रहमण्डल के ईशान कोण में पूर्वकथित कलश स्थापन-विधि से रुद्रकलश स्थापित कर, उसमें वरुण और असंख्यात रुद्र का, 'ॐ असंख्याता सहस्राणि०'

प्रतिष्ठाप्य, 'असङ्ख्यातरुद्रेभ्यो नमः' इति लब्धोपचारेण सम्पूज्येत् ।

इत्यसंख्यातरुद्रकलशस्थापनं पूजनं च समाप्तम् ।

●

कुशकण्डिकाकरणम्

अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनम् । अग्नेरुत्तरतः प्रणीतासनद्वयम् । ब्रह्मासने [१]ब्रह्मोपवेशनम् । 'यावत्कर्म समाप्यते तावत् त्वं ब्रह्मा भव' इति यजमानः । 'भवामि' इति ब्रह्मा वदेत् ।

ततो ब्रह्मणाऽनुज्ञातः प्रणीताप्रणयनम् । तद्यथा—प्रणीतापात्रं पुरतः कृत्वा, वारिणा परिपूर्य, कुशैराच्छाद्य, प्रथमासने निधाय, ब्रह्मणो मुखमवलोक्य द्वितीयासने निदध्यात् ।

से लेकर, 'असंख्यातरुद्रेभ्यो नमः' तक पढ़कर पूजन-सामग्री द्वारा पूजन करें।

कुशकण्डिका-तत्पश्चात् कुशकण्डिका करे, जो इस प्रकार है- अग्नि के दक्षिण भाग में ब्रह्मा के लिए एक छोटी चौकी आसन-रूप में रखे। अग्नि के उत्तर तरफ प्रणीता के लिए दो कुश रखे। अग्नि की प्रदक्षिणा कराकर ब्रह्मा की रखी हुई चौकी पर यजमान 'यावत्कर्म समाप्यते०' यह वाक्य कहकर बैठावे । 'भवामि' यह वाक्य कहकर पूर्व स्थापित आसन पर ब्रह्मा को स्थापित करे ।

---

१. पञ्चाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः ।
ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः ॥
दक्षिणावर्तो ब्रह्मा च वामावर्तस्तु विष्टरः ।
विष्टरं सर्वयज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम् ॥

ईशानादि-पूर्वाग्रैः कुशैः परिस्तरणम् । तद्यथा–ततो [1]बर्हिषश्चतुर्थभागमादाय । आग्नेयादीशानान्तम् उदगग्रैर्वा । ब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तं प्रागग्रैः, नैर्ऋत्याद्वायव्यान्तम्, उदगग्रैर्वा । अग्नितः प्रणीतापर्यन्तं प्रागग्रैः, इतरथावृत्तिः ।

पात्रासादनम्

ततः पात्रासादनं कुर्यात् । तद्यथा–त्रीणि पवित्रे द्वे । प्रोक्षणीपात्रम् । आज्यस्थाली । चरुस्थाली । सम्मार्जन-

तदनन्तर ब्रह्मा की आज्ञा से प्रणीतापात्र को जल से भरे । उसका क्रम इस प्रकार है - प्रणीतापात्र को अपने सामने रख, उसमें जल भर कर कुशाओं से ढंक दे तथा प्रथम आसन पर रख कर ब्रह्मा के मुख को देखकर द्वितीय आसन पर उस प्रणीता को रख दे।

पश्चात् अग्निकोण से ईशानादि पर्यन्त परिस्तरण करे, वह यों है–बर्हि-कुश (इक्यासी, चौसठ या मुट्ठी भर कुश-समूह को बर्हि कहते हैं) के चतुर्थ भाग को अपने बायें हाथ में लेकर अग्रभाग वाली कुशाओं से दाहिने हाथ से उत्तर की ओर, अग्नि कोण से ईशान कोण तक, पूर्व की ओर अग्रभाग वाली कुशाओं से ब्रह्मा के आसन से अग्निकुण्ड तक, उसी प्रकार उत्तर की ओर, अग्रभाग वाली कुशाओं से नैर्ऋत्य कोण से लेकर वायव्य कोण तक, एवं पूर्व की ओर अग्रभाग वाली कुशाओं से अग्निकुण्ड से प्रणीता पात्र तक कुशा बिछावे । पुनः हाथ में जल लेकर जल उलटा घुमावे।

पात्रासादन–तदनन्तर पात्रासादन करे । वह इस प्रकार है- एक जगह तीन कुशा एवं दूसरी जगह दो कुशा, प्रोक्षणीपात्र, आज्यस्थाली (घी का पात्र), चरुस्थाली, सम्मार्जन कुशा पाँच,

१. एकाशीतिकुशो बर्हिः । चतुःषष्टिकुशो बर्हिः । मुष्टिमात्रं कुशो बर्हिः ।

कुशाः पञ्च। उपयमनकुशाः सप्त। समिधस्तिस्रः। स्रुवः। आज्यम्। तण्डुलाः। पूर्णपात्रम्। वृषनिष्क्रय-दक्षिणा। उपकल्पनीयानि द्रव्याणि निधाय।

ततो द्वयोरुपरि त्रीणि निधाय। द्वौ मूलेन प्रदक्षिणीकृत्य, सर्वान् युगपदनामिकाऽङ्गुष्ठाभ्यां धृत्वा। त्रिभिश्छिद्य। द्वौ ग्राह्यौ, त्रिस्त्याज्यः, प्रोक्षणीपात्रे प्रणीतोदकमासिच्य, त्रिः पूर्णं, पवित्राभ्यामुत्पवनम्। प्रोक्षण्याः सव्यहस्तकरणम्। दक्षिणेनोद्दिङ्गनम्। प्रणीतोदकेन प्रोक्षणीप्रोक्षणम्। प्रोक्षण्युदकेन आज्यस्थाल्याः प्रोक्षणम्। चरुस्थाल्याः प्रोक्षणम्। सम्मार्जनकुशानां प्रोक्षणम्। उपयमनकुशानां प्रोक्षणम्। समिधां प्रोक्षणम्। स्रुवस्य प्रोक्षणम्। आज्यस्य प्रोक्षणम्। तण्डुलानां प्रोक्षणम्। पूर्णपात्रस्य

उपयमन कुशा सात, तीन समिधा, स्रुवा, घी, चावल, पूर्णपात्र, वृषमूल्य दक्षिणा एवं और भी स्थापन करने योग्य पदार्थों को रखे।

पवित्र-छेदन क्रम यह है कि - स्थापित दो कुशाओं पर तीन कुशाएँ रखे और दो कुश के मूल भाग में प्रदक्षिणा कर सभी को दो बार अनामिका-अँगूठे से पकड़ कर तीन कुशाओं को तोड़ दे अर्थात् उनमें दो को ग्रहण कर और तीन को त्याग दे। हाथ में उन कुशाओं को लेकर प्रणीता के जल को तीन बार प्रोक्षणीपात्र में छोड़े। पुनः अनामिका और अँगूठे से पवित्री पकड़ कर तीन बार प्रोक्षणी के जल को प्रादेशमात्र उछाले। फिर प्रोक्षणीपात्र को बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से उस प्रोक्षणी जल को ऊँचा उछाले। प्रणीता पात्र के जल से प्रोक्षणी का प्रोक्षण करे। फिर प्रोक्षणी के जल से आज्यस्थाली को प्रोक्षण (सिंचन) करे। इसी

प्रोक्षणम्। उपकल्पनीयानां पदार्थानां प्रोक्षणम्। असञ्चरे प्रोक्षणीर्निधाय।

आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः। चरुस्थाल्यां प्रणीतोदकासेकपूर्वकं तण्डुलप्रक्षेपः। ब्रह्मणे दक्षिणत आज्याधिश्रयणम्। चरोरधिश्रयणं स्वयमाज्यस्योत्तरतः। ज्वलदुल्मुकेनोभयोः पर्यग्निकरणम्। इतरथावृत्तिः। उदकोपस्पर्शः। अर्धश्रिते चरौ अधोमुखस्य स्रुवस्य प्रतपनम्। सम्मार्जनकुशैः स्रुवस्योर्ध्वमुखस्य सम्मार्जनम्। अग्रैरन्तरतोमूलैर्बाह्यतः स्रुवं सम्मृज्य। प्रणीतोदकेनाभ्युक्षणम्। सम्मार्जनकुशा-नामग्नौ प्रक्षेपः। पुनः प्रतपनं, दक्षिणदेशे

तरह चरुस्थाली, सम्मार्जन कुशा, उपयमन कुशा, समिधा, स्रुवा, आज्य, तण्डुल, पूर्णपात्र तथा वहाँ रखे हुए सभी पदार्थों का प्रोक्षणी-जल से प्रोक्षण करे। पश्चात् अग्नि और प्रणीतापात्र के मध्य में उस प्रोक्षणी पात्र को रख दे।

पुनः आज्यपात्र में घी भरे, अग्नि के पश्चिम पवित्र सहित चरुपात्र में प्रणीता जल से आसेचन पूर्वक चावलों को छोड़े। ब्रह्मा के दक्षिण तरफ उस घृतपात्र को रखे। घृतपात्र के उत्तर से चरुपात्र अग्नि पर चढ़ावे। जलती हुई लकड़ी लेकर उस घी के कटोरे के चारों तरफ सीधा घुमावे, पुनः उसी तरह उसको उलटा घुमावे। फिर जल का स्पर्श करे। तथा चरु के आधे पक जाने पर स्रुवा को हाथ में लेकर उसके छेद को नीचे तरफ करके अग्नि में तपा कर सम्मार्जन कुशा के अग्रभाग से स्रुवा के ऊर्ध्वमुख का सम्मार्जन एवं अन्तर तथा मूल स्रुवा के बाहरी भाग का सम्मार्जन (शुद्ध) कर प्रणीता के जल से स्रुवा का अभ्युक्षण करें और सम्मार्जन

निधानम् । आज्योद्वासनम् । चरुं पूर्वेणानीयाऽग्नेरुत्तरतः स्थापयेत् । चरोरुद्वासनम् । अग्नेरुत्तरत एवाज्यस्य प्रदक्षिणीकृत्य आज्यस्योत्तरतश्चरुं स्थापयेत् । आज्योत्पवनम् । आज्यावेक्षणम् । अपद्रव्यनिरसनम् । पुनः प्रोक्षण्युत्पवनम् । वामहस्ते उपयमनकुशानादाय । उत्तिष्ठन् समिधोऽभ्यादाय, घृताक्ताः समिधस्तिस्त्रः अग्नौ क्षिपेत् । प्रोक्षण्युदकेन सप-वित्रहस्तेन ईशानादि अग्नेः प्रदक्षिणं पर्युक्षणम् । इतरथावृत्तिः ।

पवित्रयोः प्रणीतासुनिधानम् । दक्षिणं जान्वाच्य । ब्रह्मणा

कुशाओं को अग्नि में छोड़ दे । फिर स्रुवा को अग्नि में तपा कर उसको अपनी दाहिनी ओर रखें। घृतपात्र को अग्नि पर से उतार कर चरु को पूर्व दिशा से ले आकर अग्नि के उत्तर तरफ स्थापित कर दे । पुनः चरु को अग्नि पर से उतार कर अग्नि के उत्तर तरफ से ही घृतपात्र की प्रदक्षिणा कर घी के उत्तर तरफ चरु को रख दे । पुनः कुशा से घृत को कुछ उछाले । इसके बाद घी को अच्छी तरह देख ले, और उसमें पड़े हुए तृण आदि अपद्रव्य को निकाल दे । पुनः प्रोक्षणी-जल छिड़क दे । उपयमन संज्ञक सात कुशाओं को बायें हाथ में ले खड़े होकर दाहिने हाथ में घृत-मिश्रित तीन समिधाओं को लेकर प्रजापति को मन में ध्यान कर अग्नि में छोड़ें। पुनः पवित्र धारण किये हुए हाथ से प्रोक्षणी जल से ईशान कोण से ईशान कोण तक अग्नि का प्रदक्षिण क्रम से पर्युक्षण करे। पुनः अप्रदक्षिण क्रम से ईशान कोण पर्यन्त अपने दाहिने हाथ को घुमा दे - इसी को इतरथावृत्ति कहते हैं ।

तत्पश्चात् उन दोनों कुशाओं को प्रणीतापात्र में रख, अपने

कुशैरन्वारब्धः[१] । [२]समिद्धतमेऽग्नौ स्रुवेणाऽऽज्यहोमः[३] ।

अग्नेरुत्तरभागे—ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम। अग्नेर्दक्षिणभागे—ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय न मम । समिद्धतमे—ॐ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये न मम। ॐ सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय न मम।

ततः सूर्यादिग्रहाणामधिदेवता-प्रत्यधिदेवता-गणपत्यादिपञ्चलोकपाल-वास्तोष्पति-क्षेत्रपालदेवतानामिन्द्रादि-दश-दिक्पालदेवतानां च प्रत्येकं [४]समिच्चरु-तिला[५]-ऽऽज्य-द्रव्यैरष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिमष्टौ वाऽऽहुतीर्जुहुयात् ।

दाहिने घुटने को मोड़कर, ब्रह्मा से कुशाओं द्वारा सम्बन्ध कर, प्रदीप्त अग्नि में स्रुवा से घी की आहुति करे ।

---

१. अन्वारम्भे कृते होमे ब्रह्मणा दक्षिणे करे ।
बहुकाष्ठैः समिन्धीयादर्चिष्मन्तं क्रियाक्षमम् ॥१॥
भूरादिनवसु स्विष्टकृति स्वच्छे चतुष्टये ।
अन्वारब्धो भवेत्तेषु सोऽन्वारम्भः कुशेन हि ॥२॥
२. अतिप्रदीप्ताग्नौ, इत्यर्थः ।
३. अग्रमध्याच्च यन्मध्यं मूलमध्याच्च मध्यतः ।
स्रुवं धारयते विद्वान् ज्ञातव्यं च सदा बुधैः ॥
स्रुवहोमे सदा त्यागः प्रोक्षणीपात्रमध्यतः । पाणिहोमे त्यागो न ।
४. अर्कः पलाशः खदिरो ह्यपामार्गश्च पिप्पलः ।
औदुम्बर-शमीः दूर्वा कुशाश्च समिधो नव ॥
५. तिलाऽर्धं तण्डुलाः प्रोक्तास्तण्डुलार्द्धं यवास्तथा ।
यवार्द्धं शर्करा प्रोक्ता आज्यभागचतुष्टयम् ॥
अथवा
यवार्द्धं तण्डुलाः प्रोक्तास्तण्डुलार्द्धं तिलास्तथा ।
तिलार्द्धं शर्करा प्रोक्ता आज्यभागचतुष्टयम् ॥

सङ्कल्पः-**अस्मिन् दुर्गार्चनकर्मणि इमानि हवनीयद्रव्याणि या या यक्ष्यमाणदेवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तं न मम । यथा दैवतानि सन्तु ।**

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-दुर्गार्चन-पद्धतौ कुशकण्डिकाकरणं समाप्तम् ।

आवाहितदेवानां हवनम्

ततः 'ॐ गणानां त्वा०' इत्यारभ्य 'ॐ स्योना पृथिवि०' इत्यन्तं प्रतिमन्त्रं हवनीयद्रव्येण जुहुयात् ।

अग्नि के उत्तर भाग में - 'ॐ प्रजापतये स्वाहा' से 'इदं प्रजापतये न मम' तक । अग्नि के दक्षिण भाग में- 'ॐ इन्द्राय स्वाहा' से 'इन्द्राय न मम' तक, पुनः प्रज्वलित अग्नि में-'ॐ अग्नये स्वाहा' से 'इदं सोमाय न मम' तक पढ़कर आहुति प्रदान करे । अन्त में आहुति से शेष बचे हुए स्रुवा के घी को प्रोक्षणी पात्र में छोड़े ।

तत्पश्चात् सूर्यादि ग्रह, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, गणपत्यादि पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं इन्द्रादि दशदिक्पाल देवताओं को भी समिधा, तिल, चावल और घृत से प्रत्येक देवता का एक सौ आठ, अट्ठाईस या आठ बार हवन करे ।

संकल्प-फिर दाहिने हाथ में जल लेकर 'अस्मिन् दुर्गार्चन-कर्मणि०' से 'परित्यक्तं न मम' तक वाक्य पढ़कर भूमि पर छोड़ दे । फिर 'यथा दैवतानि सन्तु' यह कह दें ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' भाषाटीका सहित दुर्गार्चन-पद्धति में कुशकण्डिका समाप्त ।

तत्पश्चात् 'ॐ गणानां त्वा०' यहाँ से लेकर 'ॐ स्योना पृथिवी०'-पर्यन्त एक-एक मन्त्र से आवाहित देवताओं को आहुति देवे ।

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्प्रियाणां त्वा प्प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधीपतिꣳ हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्ब्भधमा त्त्वमजासि गर्ब्भधम् स्वाहा ॥१॥

ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्श्वकः सुभद्द्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् स्वाहा ॥२॥

ॐ आ कृष्णेन रजसा व्वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् स्वाहा ॥१॥

ॐ इमन्देवा ऽअसपत्नꣳ सुवद्ध्वम्महते क्षत्त्राय महते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुमुष्य पुत्त्रममुष्यै पुत्त्रमस्यै व्विश ऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजा स्वाहा ॥२॥

ॐ अग्निर्म्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या ऽअयम् । अपाꣳ रेताꣳसि जिन्वति स्वाहा ॥३॥

उद्बुध्यस्वाग्ने प्प्रतिजागृहि त्त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्त्सधस्थे ऽअद्ध्युत्तरस्मिन् विश्श्वेदेवा यजमानश्च सीदत स्वाहा ॥४॥

ॐ बृहस्पते ऽअति यदर्य्यो ऽअर्हाद्द्युमद्विभाति

क्क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छ्वस ऽऋतप्प्रजात तदस्म्मासु द्रविणं धेहि चित्त्रम् स्वाहा ॥५॥

ॐ अन्नात्परिस्त्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्त्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपानꣳ शुक्क्र-मन्धस ऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु स्वाहा ॥६॥

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवन्तु पीतये । शं य्योरभिस्त्रवन्तु नः स्वाहा ॥७॥

ॐ कया नश्चित्त्र ऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया व्वृता स्वाहा ॥८॥

ॐ केतुं कृण्ण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या अपेशसे । समुषद्भिरजायथाः स्वाहा ॥९॥

ॐ त्र्यम्बकं य्यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् । उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृतात् स्वाहा ॥१०॥

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्त्रे पार्श्वे नक्षत्त्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म ऽइषाण सर्व्वलोकम्म ऽइषाण स्वाहा ॥११॥

ॐ यदक्क्रन्दः प्रथमञ्जायमान ऽउद्यन्त्समुद्द्रादुत वापुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातन्ते ऽअर्व्वन् स्वाहा ॥१२॥

ॐ व्विष्णोर्रराटमसि व्विष्णोः श्नप्त्रे स्त्थो

व्विष्ण्णोर्ः स्यूरसि व्विष्ण्णोर्द्ध्रुवोऽसि । व्वैष्ण्णवमसि व्विष्णवे त्वा स्वाहा ॥१३॥

ॐ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्न्यः शूर ऽइषव्व्योऽतिव्व्याधी महारथो जायतान्दोग्ग्ध्री धेनुर्व्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्य्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य व्वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्ज्जन्न्यो व्वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्च्यन्तां य्योगक्षेमो नः कल्पताम् स्वाहा ॥१४॥

ॐ सजोषा ऽइन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिबतु व्वृत्रहा शूर व्विद्वान् । जहि शत्रूँ२॥ रप मृधो नुदस्वाथाभयङ्कृणुहि व्विश्श्वतो नः स्वाहा ॥१५॥

ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे स्वाहा ॥१६॥

ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्त्या ऽउन्नयामि । समापो ऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः स्वाहा ॥१७॥

ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय स्वाहा ॥१८॥

ॐ अग्निन्दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ२॥ ऽआसादयादिह स्वाहा ॥१९॥

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऽउर्ज्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे स्वाहा ॥२०॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः स्वाहा ॥२१॥

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाᳪसुरे स्वाहा ॥२२॥

ॐ इन्द्र ऽआसान्नेता बृहस्पतिर्द्दक्षिणा यज्ञः पुर ऽएतु सोमः । देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्ग्रम् स्वाहा ॥२३॥

ॐ अदित्यै रास्नासीन्द्राण्ण्या ऽउष्णीषः । पूषासि घर्म्माय दीष्व स्वाहा ॥२४॥

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽअस्त्वयममुष्य पिता-सावस्य पिता व्वयᳪस्याम पतयो रयीणाᳪ स्वाहा ॥२५॥

ॐ नमोऽस्तु सर्प्पेब्भ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेब्भ्यः सर्प्पेब्भ्यो नमः स्वाहा ॥२६॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो व्वेन ऽआवः । स बुद्ध्न्या ऽउपमा ऽअस्य व्विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः स्वाहा ॥२७॥

ॐ गणानान्त्वा गणपतिᳪ हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपतिᳪ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिᳪ हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्ब्भधमात्त्वमजासि गर्ब्भधम् स्वाहा ॥२८॥

ॐ अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् स्वाहा ॥२९॥

ॐ व्वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान्त्सोमपीतये स्वाहा ॥३०॥

ॐ घृतङ्घृतपावानः पिबत व्वसां व्वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्प्रदिश ऽआदिशो व्विदिश ऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥३१॥

ॐ या वाङ्कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् स्वाहा ॥३२॥

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशोऽअनमीवो भवानः । यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शंचतुष्पदे स्वाहा ॥३३॥

ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽ एतारमग्नेः ॥ एमेनमवृधन्नमृताऽमर्त्यव्वैश्वानरङ्क्षैत्रजित्याय देवाः स्वाहा ॥३४॥

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा ॥३५॥

ॐ त्वन्नो ऽअग्ने तव देव पायुभिर्म्मघोनो रक्ष तन्वश्च व्वन्द्य । त्राता तोकस्य तनये गवामस्य

निमेषꣳ रक्षमाणस्तव व्व्रते स्वाहा ॥३६॥

ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे स्वाहा ॥३७॥

ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य । अन्यमस्मदिच्छ सा त ऽइत्या नमो देवि निर्ऋते तुब्भ्यमस्तु स्वाहा ॥३८॥

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्ब्भिः । अहेडमानो व्वरुणेह बोद्ध्युरुशꣳस मा न ऽआयुः प्रमोषीः स्वाहा ॥३९॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । व्वायो ऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः स्वाहा ॥४०॥

ॐ व्वयꣳ सोम व्व्रते तव मनस्तनूषु बिब्भ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि स्वाहा ॥४१॥

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे व्वयम् । पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये स्वाहा ॥४२॥

ॐ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो व्वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यः शꣳसते स्तुवते धायि वज्र ऽइन्द्रज्ज्येष्ठा अस्माँ२॥ ऽअवन्तु देवाः स्वाहा ॥४३॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः स्वाहा ॥४४॥

इति मन्त्रैरावाहितदेवानां हवनं कुर्यात् ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ आवाहितदेवानां हवनं समाप्तम् ।

प्रधानहवनम्

(दुर्गासप्तशती पाठ हवनम्)

ततः 'सावर्णिः सूर्यतनयो०' इत्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं प्रतिमन्त्रं हवनीयद्रव्येण जुहुयात् ।

सर्वतोभद्रमण्डलदेवतानां हवनम्

ततः प्रधानहोमानन्तरं ब्रह्मादि-सर्वतोभद्रमण्डलदेवताश्च एकैकयाऽऽज्याहुत्या जुहुयात् । तद्यथा-

१. ब्रह्मणे नमः स्वाहा ।
२. सोमाय नमः स्वाहा ।
३. ईशानाय नमः स्वाहा ।
४. इन्द्राय नमः स्वाहा ।
५. अग्नये नमः स्वाहा ।
६. यमाय नमः स्वाहा ।
७. निर्ऋतये नमः स्वाहा ।
८. वरुणाय नमः स्वाहा ।
९. वायवे नमः स्वाहा ।
१०. अष्टवसुभ्यो नमः स्वाहा ।

प्रधान (दुर्गासप्तशती पाठ) हवन – तत्पश्चात् 'सावर्णिः सूर्यतनयो०' यहाँ से आरम्भ कर 'सावर्णिर्भविता मनुः' तक प्रत्येक मन्त्रों द्वारा हवनीय द्रव्य से एक-एक आहुति प्रदान करें।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्या सहित दुर्गार्चन-पद्धति में प्रधान हवन समाप्त।

सर्वतोभद्रमण्डल स्थित देवताओं का हवन – तत्पश्चात् प्रधान हवन के बाद ब्रह्मादि सर्वतोभद्र मण्डल देवताओं के लिए 'ब्रह्मणे नमः

११. एकादशरुद्रेभ्यो नमः स्वाहा ।
१२. द्वादशादित्येभ्यो नमः स्वाहा ।
१३. अश्विभ्यां नमः स्वाहा ।
१४. सपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः स्वाहा ।
१५. सप्तयक्षेभ्यो नमः स्वाहा ।
१६. अष्टकुलनागेभ्यो नमः स्वाहा ।
१७. गन्धर्वाऽप्सरोभ्यो नमः स्वाहा ।
१८. स्कन्दाय नमः स्वाहा ।
१९. नन्दीश्वराय नमः स्वाहा ।
२०. शूलाय नमः स्वाहा ।
२१. महाकालाय नमः स्वाहा ।
२२. दक्षादि-सप्तप्रजापतिभ्यो नमः स्वाहा ।
२३. दुर्गायै नमः स्वाहा ।
२४. विष्णवे नमः स्वाहा ।
२५. स्वधासहितपितृभ्यो नमः स्वाहा ।
२६. मृत्युरोगाभ्यां नमः स्वाहा ।
२७. गणपतये नमः स्वाहा ।
२८. अद्भ्यो नमः स्वाहा ।
२९. मरुद्भ्यो नमः स्वाहा ।
३०. पृथिव्यै नमः स्वाहा ।
३१. गङ्गादिनदीभ्यो नमः स्वाहा ।
३२. सप्तसागरेभ्यो नमः स्वाहा ।
३३. मेरवे नमः स्वाहा ।
३४. गदायै नमः स्वाहा ।
३५. त्रिशूलाय नमः स्वाहा ।
३६. वज्राय नमः स्वाहा ।
३७. शक्तये नमः स्वाहा ।
३८. दण्डाय नमः स्वाहा ।
३९. खड्गाय नमः स्वाहा ।
४०. पाशाय नमः स्वाहा ।
४१. अङ्कुशाय नमः स्वाहा ।
४२. गौतमाय नमः स्वाहा ।
४३. भरद्वाजाय नमः स्वाहा ।
४४. विश्वामित्राय नमः स्वाहा ।
४५. कश्यपाय नमः स्वाहा ।
४६. जमदग्नये नमः स्वाहा ।
४७. वशिष्ठाय नमः स्वाहा ।
४८. अत्रये नमः स्वाहा ।
४९. अरुन्धत्यै नमः स्वाहा ।
५०. ऐन्द्रयै नमः स्वाहा ।
५१. कौमार्यै नमः स्वाहा ।
५२. ब्राह्मयै नमः स्वाहा ।
५३. वाराह्यै नमः स्वाहा ।
५४. चामुण्डायै नमः स्वाहा ।
५५. वैष्णव्यै नमः स्वाहा ।
५६. माहेश्वर्यै नमः स्वाहा ।
५७. वैनायक्यै नमः स्वाहा ।

इति सर्वतोभद्रमण्डलदेवताहवनं समाप्तम् ।

स्वाहा' से 'वैनायक्यै नमः स्वाहा' तक पढ़कर घी की एक-एक आहुति देवे ।

स्विष्टकृत्-हवनम्

अग्निपूजनम्

तद्यथा–ॐ अग्ने नय सुपथा राये ऽअस्मान् विश्वानि देव व्वयुनानि व्विद्वान् । युयोध्यस्म्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम ऽउक्तिं व्विधेम ॥

'ॐ स्वाहा-स्वधायुताग्नये वैश्वानराय नमः' इत्यनेनाऽग्निं सम्पूजयेत् ।

इत्यग्निपूजनम् ।

ततो हुतशेषहविर्द्रव्यं गृहीत्वा, ब्रह्मणान्वारब्धः स्विष्टकृद्होमं कुर्यात् । ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते न मम । इति हुताशेषाऽऽज्यस्य प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेपः ।

भूरादिनवाहुतिप्रदानम्

ततो भूराद्या नवाहुतयः कुर्युः । तद्यथा–ॐ भूः

स्विष्टकृत् हवन (अग्निपूजन)– तदनन्तर प्राप्त उपचार द्रव्यों से अग्नि का पूजन करे। वह इस प्रकार है-'ॐ अग्ने नय सुपथा०' यह मन्त्र तथा 'ॐ स्वाहा-स्वधायुताग्नये वैश्वानराय नमः' इसको पढ़कर अग्नि की पूजा करे। तथा 'ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा' पढ़कर आहुति देने से शेष बचे हुए साकल का हवन करे। पश्चात् 'इदमग्नये स्विष्टकृते न मम' कहकर स्रुवा में बचे हुए घृत को प्रोक्षणीपात्र में छोड़ दे।

इस प्रकार स्विष्टकृत-हवन समाप्त।

स्वाहा । इदमग्नये न मम । ॐ भुवः स्वाहा । इदं वायवे न मम । ॐ स्वः स्वाहा । इदं सूर्याय न मम ।

ॐ त्वन्नोऽअग्ग्ने व्वरुणस्य व्विद्वान्देवस्य हेडो ऽअवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो व्वह्नितमः शोशुचानो व्विश्श्वा द्वेषाᳬसि प्प्रमुमुग्ध्यस्म्मत् स्वाहा ॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ।

ॐ स त्वन्नो ऽअग्ग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो ऽअस्या उषसो व्व्युष्टौ । अवयक्ष्व नो व्वरुणᳬ ररांणो व्वीहि मृडीकᳬ सुहवो न ऽएधि स्वाहा ॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ।

ॐ अयाश्श्चाग्ग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्श्च सत्य-मित्त्वमया ऽअसि । अयानो यज्ञं व्वहास्ययानो धेहि भेषजᳬ स्वाहा ॥

इदमग्ने अयसे न मम ।

ॐ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्न्नो ऽअद्य सवितोत व्विष्णुर्व्विश्श्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्क्काः स्वाहा ॥

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ।

भूरादिनवाहुतिप्रदान – इसके बाद 'ॐ भूः स्वाहा' आदि नव आहुति देवे। वह इस प्रकार है-'ॐ भूः स्वाहा' से लेकर 'इदं

ॐ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्म्मदवाधमं व्विमध्यमꣳ श्श्रथाय । अथा व्वयमादित्य व्व्रते तवानागसो ऽअदितये स्याम स्वाहा ।

इदं वरुणादित्यायाऽदितये न मम । ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम ।

इति भूरादिनवाहुतिप्रदानम् ।

एकतन्त्रेण दिक्पालादीनां बलिदानम्

ततो दिक्पालेभ्य एकतन्त्रेणैकमेव बलिं दद्यात् । तद्यथा-

ॐ प्राच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा दक्षिणायै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा प्प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोर्द्ध्वायै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा ॥

'इन्द्रादि-दशदिक्पालेभ्यो नमः', 'देयबलये नमः' इत्यनेन च गन्धा-ऽक्षत-पुष्पैः बलिं सम्पूज्य, पुनः हस्ते जलं गृहीत्वा, इन्द्रादि-दशदिक्पालेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः

प्रजापतये न मम' तक पढ़कर प्रत्येक मन्त्रों द्वारा क्रमशः घी की आहुति प्रदान करे। शेष बचे हुए घी को प्रोक्षणी पात्र में छोड़ें।

एकतन्त्र से इन्द्रादि दशदिक्पालों का बलिदान – तदनन्तर एकतन्त्र से 'ॐ प्राच्यै दिशे स्वाहा०' से 'इन्द्रादि-दशदिक्पालेभ्यो नमः' पर्यन्त मन्त्र-वाक्य उच्चारण कर नमस्कार पूर्वक इन्द्रादि दशदिक्पालों की

सायुधेभ्यः स-शक्तिकेभ्यः एतान् सदीप-दधि-माष-भक्त-बलीन् समर्पयामि ।

प्रार्थना– भो भो इन्द्रादि-दशदिक्पालाः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः तुष्टि-कर्तारः वरदा भवत ।

ततो हस्तेजलं गृहीत्वा, अनेन बलिदानेन इन्द्रादि-दश-दिक्पालाः प्रीयन्ताम् । एवं प्रकारेण सर्वेभ्यो ग्रहेभ्यो एक-तन्त्रेणैकमेव बलिं दद्यात् । तद्यथा–

ॐ ग्रहा ऽऊर्ज्जाहुतयो व्यन्तो विप्प्राय मतिम् । तेषां विशिप्प्रियाणां वोऽहमिषमूर्ज्जꣳ समग्ग्रभमुपयामगृहीतोऽसीन्द्रायत्वा जुष्टं गृह्णा-म्येष ते योनिरिन्द्रायत्त्वा जुष्टतमम् ॥

'सूर्यादिनवग्रहेभ्यो नमः' इति सम्पूज्य, हस्ते जलं

पूजा करें। पश्चात् हाथ में जल लेकर 'इन्द्रादि-दशदिक्पालेभ्यः साङ्गेभ्यः स-परिवारेभ्यः०' से लेकर 'स-दीप-दधि-माष-भक्त-बलीन् समर्पयामि' तक पढ़कर इन्द्रादि दशदिक्पालों के लिए बलि समर्पण कर जल छोड़ दे।

पुनः 'भो भो इन्द्रादि-दशदिक्पालाः०' से 'वरदा भवत' तक पढ़ कर हाथ जोड़कर इन्द्रादि दशदिक्पालों की प्रार्थना करे। फिर हाथ में जल लेकर, 'अनेन बलिदानेन इन्द्रादि-दशदिक्पालाः प्रीयन्ताम्' वाक्य पढ़कर जल गिरा दे।

इसी प्रकार सभी ग्रहों के लिए एक तन्त्र से एक ही बलि देवे।

गृहीत्वा, सूर्यादिनवग्रहेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः अधिदेवता-प्रत्यधिदेवता-गणपत्यादि-पञ्चलोकपाल-वास्तोष्पतिसहितेभ्यः एतं स-दीप-दधि-माष-भक्तबलिं समर्पयामि ।

प्रार्थना—भो भो सूर्यादिग्रहाः ! साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः अधिदेवता-प्रत्यधिदेवता-गणपत्यादि-पञ्चलोकपाल-वास्तोष्पतिसहिताः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः वरदा भवत ।

हस्ते जलं गृहीत्वा, अनेन बलिदानेन साङ्गाः सूर्यादि-नवग्रहाः प्रीयन्ताम् ।

इत्येकतन्त्रेण दिक्पालादीनां बलिदानम् ।

कूष्माण्डबलिदानम्

आचम्य, प्राणानायम्य । देशकालाद्युच्चार्य० मम-

जैसे—'ॐ ग्रहा ऊर्ज्जाहुतयो०' से 'सूर्यादिनवग्रहेभ्यो नमः' तक मन्त्र-वाक्य पढ़कर सूर्यादि नवग्रह देवताओं की पूजा कर, हाथ में जल लेकर, 'सूर्यादिनवग्रहेभ्यः साङ्गेभ्यः०' से 'स-दीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि' पर्यन्त वाक्य कह बलि देकर जल छोड़ दे।

प्रार्थना-पुनः 'भो भो सूर्यादिग्रहाः साङ्गाः०' से लेकर 'वरदा भवत' तक वाक्य पढ़कर सूर्यादि नवग्रहों की प्रार्थना करें। तथा हाथ में जल लेकर 'अनेन बलिदानेन०' कहकर भूमि पर जल छोड़ दे।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित दुर्गार्चनपद्धति में एकतन्त्र से इन्द्रादि-दशदिक्पालादि का बलिदान समाप्त।

सकुटुम्बस्य सर्वाऽरिष्ट-प्रशान्ति-सर्वाभीष्ट-कामसिद्धि-कल्पोक्तफलावाप्तिद्वारा श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-त्रिगुणात्मिकास्वरूपिणी-श्रीदुर्गादेवीप्रीत्यर्थं कूष्माण्डबलिदानं करिष्ये। तदङ्गत्वेन पञ्चोपचारैः[1] बलिपूजनं च करिष्ये। तत्पश्चात्-

'नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥

इत्यनेन दुर्गादेवीं पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, तत्पुरतः स्वयमुदङ्मुखो बलिं प्राङ्मुखं च पीठे वस्त्रगुण्ठितं कूष्माण्डं निधाय, 'कूष्माण्डबलये नमः' इत्यनेन गन्ध-पुष्पादि-पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, अभिमन्त्रयेत्।

पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादवस्थितः।
प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम्॥१॥

कूष्माण्डबलिदान—यजमान आचमन और प्राणायाम कर, दाहिने हाथ में अक्षत, पुष्प एवं द्रव्य लेकर 'देशकालाद्युच्चार्य० कूष्माण्डबलिदानं करिष्ये' एवं 'तदङ्गत्वेन०' से 'बलिपूजनं च करिष्ये' तक पढ़कर संकल्प करे।

तदनन्तर 'नमो देव्यै महादेव्यै०' इस मन्त्र से दुर्गा देवी का पंचोपचार द्वारा पूजन कर, मूर्ति के आगे यजमान उत्तरमुख हो कपड़ा लपेटकर, उस कूष्माण्डबलि को पूर्वमुख करके प्रधान वेदी

---

१. पञ्चोपचाराः—

गन्धं पुष्पं च धूपं च दीपं नैवेद्यमेव च।
प्रदद्यात् परमेशानि! पूजा पञ्चोपचारिका:॥

चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्-विनाशनम्।
चामुण्डाबलिरूपाय बले! तुभ्यं नमोऽस्तु ते ॥२॥
यज्ञार्थं बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा।
अतस्त्वां घातयाम्यद्य यस्माद्यज्ञे मतोबधः ॥३॥

ततः शस्त्रं गन्धादिना सम्पूज्य, अभिमन्त्रयेत्—ऐं ह्रीं श्रीं। 'रसना त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः।' इति। ह्रां ह्रीं खड्ग, आं, हुं, फट्, इति पठित्वा, हस्ते शस्त्रं गृहीत्वा, वीरासनमुद्रया 'ॐ कालि कालि वज्रेश्वरि लोहदण्डायै नमः' इति पठनेन कूष्माण्डं छेदयेत्। छेदनावसरे न विलोकयेत्। ततश्छिन्ने बलौ कुङ्कुम-मनुलेपयेत्। 'कौशिकि रुधिरेणाप्यायताम्' इति देव्यै अर्धं निवेद्य, अवशिष्टार्धस्य तेनैव खड्गेन पुनः पञ्चभागान् कृत्वा पूतनायै बलिभागं निवेदयामि, चरक्यै बलिभागं

पर रखे। तथा 'कूष्माण्डबलये नमः' से गन्ध, पुष्प आदि पंचोपचार से पूजन कर, उसे 'पशुस्त्वं बलिरूपेण०' से लेकर 'यस्माद्यज्ञे मतोबधः' तक पढ़कर अभिमन्त्रित करे।

उसके बाद गन्ध-पुष्पादि से शस्त्र की पूजाकर 'ऐं ह्रीं श्रीं०' से 'सुरलोकप्रसाधकः' मन्त्र पढ़कर उस पर जल छिड़के, और 'ह्रां ह्रीं खड्ग, आं हुं फट्' मन्त्र पढ़कर हाथ में तीक्ष्ण शस्त्र ले वीरासन मुद्रा से बैठकर 'ॐ कालि कालि०' पढ़ते हुए बलि का छेदन करे। छेदन के समय उसको देखना निषेध है। पुनः छिन्न की (कटी) हुई बलि पर रोली लगावे। 'कौशिकि रुधिरेणाप्यायताम्' कहकर बलि का आधा हिस्सा देवी को निवेदन करे, एवं आधे

निवेदयामि, विदार्यै बलिभागं निवेदयामि। पापराक्षस्यै बलिभागं निवेदयामि। क्षेत्रपालं बलिभागं निवेदयामि।

इति कूष्माण्डबलिदानं समाप्तम्।

क्षेत्रपालबलिदानम्

एकस्मिन् वंशादिपात्रे कुशानास्तीर्य तदुपरि मनुष्याहारचतुर्गुणं द्विगुणं वा माष-दध्योदनं जलपात्रं च निधाय, चतुर्मुखं दीपं प्रज्वाल्य, हरिद्रा-कुङ्कुमादि-पतायुतं कृत्वा,

ॐ नहि स्प्पशमविदन्नन्यमस्म्माद् वैश्श्वानरात्पुर ऽएतारमग्ग्नेः। एमैनमवृधन्नमृता ऽअमर्त्त्यं व्वैश्श्वानरं क्षैत्त्रजित्त्याय देवाः॥

'क्षेत्रपालाय नमः' इति पञ्चोपचारैः षोडशोपचारैर्वा सम्पूज्य, प्रार्थयेत् -

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूत-प्रेतगणैः सह।
पूजाबलिं गृहाणेमं सौम्यो भवतु सर्वदा॥१॥

में पाँच भाग कर 'पूतनायै बलिभागं निवेदयामि०' से 'क्षेत्रपालं बलिभागं निवेदयामि' पर्यन्त पढ़कर निवेदन करें।

इस प्रकार कूष्माण्डबलिदान समाप्त।

क्षेत्रपालबलिदान—बाँस की बनी डलिया आदि, पत्तल पर कुशा बिछाकर, उस पर एक व्यक्ति के भोजन से चौगुना, दोगुना या यथाशक्ति प्रमाण उड़द, दही मिश्रित चावल और जल पात्र रखकर, उसमें चतुर्मुख दीप जलाकर, हल्दी, रोली, सिन्दूर और लाल पुष्प युक्त बलि रख, 'ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्०' मन्त्र तथा

पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे ।
आयुरारोग्यं मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा ।।२।।

ततो बलिदानम् । हस्ते जलं गृहीत्वा, क्षेत्रपालाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय मारीगण-भैरव-राक्षस-कूष्माण्ड-वेताल-भूत-प्रेत-पिशाच-डाकिनी-शाकिनी-पिशाचिनी-गणसहिताय एतं स-दीप-दधि-माष-भक्तबलिं समर्पयामि ।

प्रार्थना— भो क्षेत्रपाल ! क्षेत्रं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता: क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदो भव ।

पुनर्हस्ते जलं गृहीत्वा, अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम् । यजमानस्य मस्तकोपरि सकृद्भ्रामयित्वा, शूद्रेण बलिं गृहीत्वा, चतुष्पथे निक्षिपेत् ।

ततो यजमानस्तस्य पृष्ठतो द्वारपर्यन्तं गत्वा, 'ॐ

'क्षेत्रपालाय नमः' वाक्य पढ़कर पंचोपचार या षोडशोपचार से पूजन कर 'नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं०' से 'निर्विघ्नं कुरु सर्वदा' पर्यन्त श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे ।

तदनन्तर हाथ में जल लेकर 'क्षेत्रपालाय साङ्गाय०' से 'बलिं समर्पयामि' तक पढ़कर क्षेत्रपाल के लिए बलि समर्पण कर, 'भो क्षेत्रपाल ! क्षेत्रं रक्ष०' से 'वरदो भव' तक पढ़कर प्रार्थना करे ।

इसके बाद हाथ में जल लेकर 'अनेन बलिदानेन०' वाक्य कहकर शूद्र आदि निकृष्ट जाति द्वारा उस वंश पात्र को यजमान के मस्तक पर घुमाकर चौराहे पर रखवा दे ।

हिङ्काराय स्वाहा०' इति पठित्वा जलं क्षिपेत्। तन्मन्त्रम्—

ॐ हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहाऽवक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धायस्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहासीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा सꣳहानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहाऽयनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥

इति क्षेत्रपालबलिदानम् ।

पूर्णाहुतिः

ततो यजमानः पाणिपादं प्रक्षाल्याऽऽचमनं कुर्यात् । पश्चात् नारिकेलफलं रक्तवस्त्रवेष्टितं द्वादशषट्चतुःस्रुवेण गृहीतमाज्यं स्रुच्यां कृत्वा तस्योपरि नारिकेलफलं संस्थाप्य, 'ॐ पूर्णाहुत्यै नमः' इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य, 'ॐ

तत्पश्चात् यजमान ले जाने वाले के पीछे-पीछे द्वार तक जाकर 'ॐ हिंकाराय स्वाहा०' से 'प्राणाय स्वाहा' तक मन्त्र पढ़कर जल गिरा दे। पश्चात् यजमान अपने दोनों हाथ एवं पैर प्रक्षालन करे।

इस प्रकार क्षेत्रपाल बलिदान समाप्त।

पूर्णाहुति—तत्पश्चात् नारियल को लाल वस्त्र में लपेटकर बारह, छह या चार बार स्रुवा से घी निकाल कर, स्रुची में रख, उसके

समुद्रदूर्मिर्मधुमां०' इत्यारभ्य 'अग्नयेऽद्भ्यश्च न मम' इत्यन्तं पठित्वा, पूर्णाहूतिं जुहुयात्, तत्र मन्त्राः—

ॐ समुद्राद्दूर्म्मिर्म्मधुमाँ२॥ ऽउदारदुपाᳬंशुना सममृतत्त्वमानट्। घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः॥१॥ वयन्नाम प्रब्रवामा घृतस्यास्मिन्यज्ञे धारयामा नमोभिः। उप ब्रह्माशृणवच्छस्यमानञ्चतुः शृङ्गोऽवमीद् गौर ऽएतत्॥२॥ चत्त्वारि शृङ्गा त्रयो ऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो ऽअस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ२॥ ऽआविवेश॥३॥ त्रिधा हितं पणिभिर्गुह्यमानंगवि देवासो घृतमन्वविन्दन्। इन्द्र ऽएकᳬं सूर्य्य ऽएकञ्जजान वेनादेकᳬं स्वधया निष्टतक्षुः॥४॥ एता ऽअर्षन्ति हृद्यात्समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे। घृतस्य धारा ऽअभिचाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मद्ध्य ऽआसाम्॥५॥ सम्म्यक् स्रवन्ति सरितो न धेना ऽअन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः। एते ऽअर्षन्त्यूर्म्मयो घृतस्य मृगा ऽइव क्षिपणोरीषमाणाः॥६॥ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः। घृतस्य धारा ऽअरुषो

ऊपर नारियल के गोला को स्थापित कर 'ॐ पूर्णाहुत्यै नमः' कहकर षोडशोपचार द्वारा पूजन कर 'ॐ समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ०' से

न व्वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्म्मिभिः पिन्न्वमानः ॥७॥
अभिप्प्रवन्त समनेव योषाः कल्ल्याण्ण्यः स्म्मयमानासो
ऽअग्निम् । घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो
हर्य्यति जातवेदाः ॥८॥ कन्न्या ऽइव व्वहतुमेतवा ऽउ
ऽअञ्ज्यञ्जाना ऽअभिचाकशीमि । यत्र सोमः सूयते
यत्र यज्ञो घृतस्य धारा ऽअभि तत्पवन्ते ॥९॥ अब्भ्यर्षत
सुष्टुतिङ्गव्व्यमाजिमस्म्मासु भद्द्रा द्रविणानि धत्त । इमं
य्यज्ञन्नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥१०॥
धामन्ते व्विश्श्वं भुवनमधि शिश्रतमन्तः समुद्द्रे हृद्द्यन्तरा-
युषि । अपामनीके समिथे य ऽआभृतस्तमश्याम मधु-
मन्तन्त ऽऊर्म्मिम् ॥११॥ पुनस्त्वाऽऽदित्या रुद्द्रा व्वसवः
समिन्धतां पुनर्ब्ब्रह्माणो व्वसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वन्तन्न्वं
व्वर्द्धयस्व सत्त्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥१२॥
सप्त ते ऽअग्ग्ने समिधः सप्प्त जिह्वाः सप्प्त ऽऋषयः सप्प्त
धाम प्प्रियाणि । सप्प्त होत्राः सप्प्तधा त्त्वा यजन्ति
सप्प्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥१३॥ मूर्द्धानं दिवो
ऽअरतिं पृथिव्व्या व्वैश्श्वानरमृत ऽआ जातमग्निम् । कविᳫं
सम्म्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥१४॥
पूर्ण्णा दर्व्वि परापत सुपूर्ण्णा पुनरापत । व्वस्नेव
व्विक्क्रीणावहा ऽइषमूर्ज्जᳫं शतक्क्रतो स्वाहा ॥१५॥

अथवा- नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।

'इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये अद्भ्यश्च न मम' इति प्रोक्षणीपात्रे स्रुवाऽवशिष्टं घृतं त्यजेत् ।

इति पूर्णाहुतिः समाप्ता ।

वसोर्धाराहोमः

ततः 'ॐ सप्त ते अऽग्ने०' इत्यारभ्य 'सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा' इत्यन्तं वसोर्धारां जुहुयात् । तत्र मन्त्राः—

ॐ सप्त तेंऽअग्ग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त ऽऋषयः सप्त धामप्प्रियाणि । सप्त होत्राः सप्तधा त्त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥१॥ शुक्रज्ज्योतिश्श्च चित्त्रज्ज्योतिश्च सत्त्यज्ज्योतिश्च ज्ज्योतिष्म्माँश्च । शुक्रश्श्चऽऋतपाश्चात्यंहाः ॥२॥ ईदृङ् चान्न्यादृङ् च सदृङ् चप्प्रतिसदृङ् च । मितश्श्च सम्मितश्च्च सभराः ॥३॥ ऋतश्श्च सत्यश्च्च ध्रुवश्च्च धरुणश्श्च । धर्त्ता च विधर्त्ता च विधारयः ॥४॥

'शतक्रतो स्वाहा' पर्यन्त पढ़कर या 'नमो देव्यै०' से पूर्णाहुति हवन करे। तदनन्तर स्रुवे से बचे हुए घृत का 'इदमग्नये वैश्वानराय०' से 'अद्भ्यश्च न मम' पर्यन्त पढ़कर प्रणीता पात्र में परित्याग करे।

वसोर्धाराहोम-तत्पश्चात् 'ॐ सप्त ते अग्ने०' से 'कामधुक्षः

ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च । अन्तिमित्रश्च दूरे ऽअमित्रश्च गणः ॥५॥ ईदृक्षास ऽएतादृक्षास ऽऊषुणः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षास ऽएतन । मितासश्च सम्मितासो नो ऽअद्य सभरसो मरुतो यज्ञे ऽअस्मिन् ॥६॥ स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च । क्रीडी च शाकी चोज्जेषी ॥७॥ इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन्यथेन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् । एवमिमं यजमानं दैवीश्च विशो मानुषीश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ॥८॥ इमꣳ स्तनमूर्जस्वन्तन्धयापां प्रपीनमग्ने सरिरस्य मध्ये । उत्सञ्जुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳ सदनमाविशस्व ॥९॥ घृतम्मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम । अनुष्ष्वधमावह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् । वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा ॥१०॥

इदमग्नये वैश्वानराय न मम ।

स्वाहा' तक पढ़कर स्रुचि द्वारा अविच्छिन्न घृतधारा अग्नि में दे । पश्चात् 'इदमग्नये वैश्वानराय न मम' पढ़कर शेष घृत को प्रणीता

अग्नि-प्रार्थना

श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम् ।
तेजं आयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन ! ।।१।।
भो भो अग्ने ! महाशक्ते ! सर्वकर्मप्रसाधन ! ।
कर्मान्तरेऽपि सम्प्राप्ते सान्निध्यं कुरु सर्वदा ।।२।।

इति वसोर्धाराहोमः ।

त्र्यायुषकरणम्

ततोऽग्निं प्रदक्षिणीकृत्य, पश्चिमदेशे प्राङ्मुख उपविश्य, स्रुवेण भस्मानीय अनामिकया—

'ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः' इति ललाटे । 'कश्यपस्य त्र्यायुषम्' इति ग्रीवायाम् । 'यद्देवेषु त्र्यायुषम्' इति दक्षिणबाहुमूले । 'तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषम्' इति हृदि ।

ततः प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षिप्तस्याऽऽज्यस्य संस्रवप्राशनं

पात्र में छोड़े । इसके बाद 'श्रद्धां मेधां०' से 'कुरु सर्वदा' तक पढ़कर अग्नि की प्रार्थना करे ।

त्र्यायुषकरण—इसके बाद अग्नि की प्रदक्षिणा कर, अग्नि के पश्चिम भाग में अर्थात् अग्नि के पीछे पूर्व मुख बैठकर स्रुवा द्वारा कुण्ड में से भस्म निकालकर अनामिका अँगुलि से यजमान के 'ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः०' से ललाट, 'कश्यपस्य त्र्यायुषम्' से ग्रीवा (गले), 'यद्देवेषु त्र्यायुषम्' से दाहिने बाहु और 'तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्' से हृदय में भस्म लगावे ।

तत्पश्चात् प्रोक्षणी पात्र में स्थित घृत को यजमान सूँघे । आचमन

यजमानं कुर्यात् । पश्चादाचमनं, पवित्राभ्यां मार्जनम्, अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिश्च कर्त्तव्या ।

इति त्र्यायुषकरणम् ।

पूर्णपात्रदानम्

अद्य कृतस्य दुर्गार्चनहोमकर्मणोऽङ्गतया विहितमिदं पूर्णपात्रं स-दक्षिणं ब्रह्मणे[1] तुभ्यमहं सम्प्रददे । 'ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु ।' अग्नेः पश्चात् प्रणीताविमोकः कुर्यात् ।

'ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तुभेषजम् ।' इति मन्त्रेण सकुटुम्बं यजमानम् उपयमनकुशैर्मार्जयेत् । उपयमनकुशानामग्नौ प्रक्षेपः । ब्रह्म-ग्रन्थिविमोकः ।

इति पूर्णपात्रदानम् ।

करे। प्रणीता पात्र में रखी हुई पवित्री से प्रणीता जल को अपने मस्तक पर छिड़के। तथा उन दोनों कुशाओं को अग्नि में छोड़ दे।

इस प्रकार त्र्यायुषकरण समाप्त।

पूर्णपात्रदान—इसके बाद यजमान 'अद्य कृतस्य दुर्गार्चन-होम-कर्मणोऽङ्गतया०' यह संकल्प-वाक्य पढ़कर ब्रह्मा के लिए पूर्णपात्र का संकल्प करे। ब्रह्मा 'द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु, यह वाक्य पढ़े। अग्नि के पीछे जलयुक्त पात्र को उलट दे।

तदनन्तर प्रणीतापात्र से गिरे हुए जल को 'ॐ आपः शिवाः

---

१. ब्रह्मवैवर्ते- अकृते पूर्णपात्रे तु यज्ञच्छिद्रं समुद्भवेत् ।
तस्मिन् पूर्णे कृते विप्र ! यज्ञ-सम्पूर्णतां भवेत् ॥

श्रेयोदानम्

ततः आचार्यः श्रेयोदानं कुर्यात्। तद्यथा-अद्येत्यादि-कृतस्य दुर्गार्चनाख्यस्य कर्मणो यजमानाय श्रेयोदानं करिष्ये। भवन्नियोगेन मया अस्मिन् दुर्गार्चनाख्ये कर्मणि यत्कृतम् आचार्यत्वं तदुत्पन्नं श्रेयः तत् अमुना साक्षतेन सजलेन पूंगीफलेन तुभ्यमहं सम्प्रददे। प्रतिगृह्यताम्। 'देवस्यत्वे'ति प्रतिगृह्णामि। तेन श्रेयसा त्वं श्रेयोवान् भव। 'भवामी'ति तेन वाच्यम्।

इति श्रेयोदानम्।

दक्षिणासङ्कल्पः

अद्य कृतस्य दुर्गार्चनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण-फलप्राप्त्यर्थं च आचार्यादिभ्यो महर्त्विग्भ्यः सूक्तपाठकेभ्यो मन्त्रजापकेभ्यो हवनकर्तृभ्योऽन्येभ्यश्च दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे।

इति दक्षिणासङ्कल्पः।

शिवतमा:०' से 'कृण्वन्तु भेषजम्' इस मन्त्र द्वारा उपयमन कुशाओं से परिवार सहित यजमान के मस्तक पर मार्जन करे और उपयमन कुशाओं को अग्नि में छोड़ दे। पश्चात् ब्रह्मा कुशनिर्मित ब्रह्मग्रन्थि को खोल दे।

श्रेयोदान–तदनन्तर आचार्य दुर्गार्चन कर्म का श्रेयोदान (आशीर्वाद प्रदान) करे। वह इस प्रकार है-आचार्य हाथ में जल, अक्षत और सुपारी लेकर 'अद्येत्यादि कृतस्य०' से 'तेन श्रेयसात्वं श्रेयोवान् भव' तक पढ़कर यजमान को दे। 'देवस्य त्वा०' मन्त्र से यजमान ग्रहण करे।

ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पः

ततो ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पं कुर्यात्। कृतस्य दुर्गार्चनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च यथासङ्ख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथोत्पन्नेनाऽहं भोजयिष्ये। भोजनान्ते तेभ्यस्ताम्बूलदक्षिणां च दास्ये।

इति ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पः।

पीठदानसङ्कल्पः

ततो ग्रह (वा प्रधान) पीठदेवतानां गन्धादि-पञ्चोपचारै-रुत्तरपूजनं कुर्यात्। गणपत्याद्यावाहित-देवताभ्यो नमः। आचार्याय प्रधानपीठादि दद्यात्।

अद्य कृतस्य दुर्गार्चनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण-फलप्राप्त्यर्थं च इदं प्रधानपीठं ग्रहपीठं मातृकापीठं सोपस्करं दक्षिणासहितम् आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

इति पीठदानसङ्कल्पः।

दक्षिणासंकल्प—तत्पश्चात् यजमान 'अद्य कृतस्य०' से 'दातुमह-मुत्सृजे' तक पढ़कर आचार्य आदि ऋत्विक्, सूक्तपाठक, मन्त्रजापक, हवनकर्त्ता एवं यज्ञ में अन्य सम्मिलित ब्राह्मणों के लिए दक्षिणा का संकल्प करे।

ब्राह्मणभोजन संकल्प—इसके बाद यजमान दुर्गार्चन कर्म की फलप्राप्ति के लिए 'कृतस्य दुर्गार्चनकर्मणः०' से 'यथोत्पन्नेनाऽहं भोजयिष्ये' तथा 'भोजनान्ते०' तक संकल्प-वाक्य से ब्राह्मण-भोजन संकल्प एवं भोजनान्त में ताम्बूल और दक्षिणा का संकल्प करे।

पीठदानसंकल्प—तदनन्तर यजमान गणपत्यादि आवाहित देवताओं

अभिषेकः

ततो रुद्रकलश-देवतान्तरकलशोदकमेकस्मिन् पात्रे कृत्वा दुर्वापञ्चपल्लवैरुदङ्मुख आचार्यस्तिष्ठन् चत्वारो ऋत्विजश्च सकुटुम्बं स्वोत्तरतः सपत्नीकं यजमानं प्राङ्मुखमुपविष्टमभिषिञ्चेयुः ।

तत्र मन्त्राः–देवस्यं त्त्वा सवितुः प्प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहु-ब्भ्यां पूष्णणो हस्ताब्भ्याम् । सरस्वत्यै व्वाचो यन्तु-र्य्यन्त्रियें दधामि बृहस्प्पतेष्ट्वा साम्म्राज्ज्येनाभिषिञ्चा-म्यसौ ॥१॥ देवस्यं त्त्वा सवितुः प्प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुब्भ्यां पूष्णणो हस्ताब्भ्याम् । सरस्वत्यै व्वाचो यन्तुर्य्यन्त्रेणा-ऽग्नेः साम्म्राज्ज्येनाभिषिञ्चामि ॥२॥ देवस्यं त्त्वा सवितुः प्प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुब्भ्यां पूष्णणो हस्ताब्भ्याम् । अश्श्विनो-र्भैषज्ज्येन तेजसे ब्ब्रह्मव्वर्च्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्ज्येन व्वीर्य्याय यान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण

की गन्धादि पंचोपचार से उत्तर पूजन कर 'अद्य कृतस्य०' से 'तुभ्यमहं सम्प्रददे' तक संकल्प पढ़कर प्रधानपीठ, ग्रहपीठ और मातृकापीठ आदि वस्त्र, दक्षिणा सहित आचार्य को दे।

अभिषेक–तदनन्तर रुद्रकलश तथा अन्य कलशों से जल को एक पात्र में रखकर दूर्वा एवं पंचपल्लवों से आचार्य तथा अन्य चार ऋत्विक भी उत्तर मुँह हो अपने से उत्तर पूर्वाभिमुख बैठे हुए सपरिवार एवं सपत्नीक यजमान का 'ॐ देवस्य त्वा सवितुः०'

बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि ॥३॥

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ॥१॥
प्रद्युम्नश्चाऽनिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ।
आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥२॥
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा ॥३॥
कीर्ति-र्लक्ष्मी-र्धृति-र्मेधापुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः ।
बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः कान्तिस्तुष्टिश्च मातरः ॥४॥
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुध-जीव-सिता-ऽर्कजाः ॥५॥
ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहु-केतुश्च तर्पिताः ।
देव-दानव-गन्धर्वा यक्ष-राक्षस-पन्नगाः ॥६॥
ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याश्चाऽप्सरसां गणाः ॥७॥
अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्याऽवयवाश्च ये ॥८॥
सरितः सागराः शैलस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकामा-ऽर्थसिद्धये ॥९॥
अमृताभिषेकोऽस्तु । शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चाऽस्तु ।

इत्याभिषेकः ।

से 'शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चाऽस्तु' तक पढ़कर अभिषेक करें ।

छायापात्रदानम्

यजमानः एकस्मिन् कांस्यपात्रे स-सुवर्णं स-दक्षिणाकं च आज्यं स्थाप्य, आत्मप्रकृतिं निरीक्ष्य ब्राह्मणाय दद्यात्। उक्तं च-

कांस्यपात्रे स्थिताज्यं च आत्मरूपं निरीक्ष्य तु।
स-सुवर्णं तु यो दद्यात् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

ॐ रूपेण वो रूपमभ्यागां तुथो वो विश्ववेदा विभजतु। ऋतस्य पथा प्रेत चन्द्रदक्षिणा विस्वः पश्य व्यन्तरिक्षं यतस्व सदस्यैः ॥

इति मन्त्रं पठित्वाऽऽज्ये मुखमवलोक्य सङ्कल्पं कुर्यात्।

सङ्कल्पः- 'अद्येत्याद्युच्चार्य ममैतच्छरीरावच्छिन्नसमस्त-पापक्षय-सर्वग्रहपीड़ाशान्ति-शरीरोत्थार्तिनाशाय प्रासाद-वाञ्छा-ऽऽयुरारोग्यादि-सर्वसौभाग्यप्राप्तये सर्वसौख्यप्राप्तये च इदं स्वमुखछायावीक्षिताज्यपूरित-कांस्यपात्रं स-सुवर्णं स-दक्षिणाकं श्रीविष्णुदैवतममुकगोत्राय अमुकशर्मणे सुपूजिताय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।' इति सङ्कल्पं कृत्वा प्रार्थयेत्।

छायापात्रदान-यजमान एक काँसे की कटोरी में घी रखकर, उसमें दक्षिणा सहित सुवर्ण छोड़कर अपनी मुख की छाया को देखकर ब्राह्मण को दे। कहा भी है-'कास्यपात्रे स्थिताज्यं च०'।

पश्चात् 'रूपेण वो०' मन्त्र पढ़कर कटोरी में स्थित घी में अपना मुख देखकर 'अद्येत्याद्युच्चार्य०' से 'तुभ्यमहं सम्प्रददे' तक संकल्प-वाक्य पढ़कर ब्राह्मण को दे दे।

प्रार्थना- याऽलक्ष्मीर्यच्च मे दौस्थ्यं सर्वाङ्गं समुपस्थितम् ।
तत्सर्वं नाशयाऽऽज्य ! त्वं श्रियमायुश्च वर्द्धय ।।१।।
आज्यं सुराणामाहारः सर्वमाज्ये प्रतिष्ठितम् ।
आज्यपात्रप्रदानेन शान्तिरस्तु सदा मम ।।२।।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ छायापात्रदानम् ।



भूयसीदक्षिणासङ्कल्पः

तत अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति भूयसीं दक्षिणां दद्यात् । 'कृतस्य दुर्गार्चनहवनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूनाऽतिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो नानाशर्मब्राह्मणेभ्यः समाश्रितबन्धुवर्गेभ्यो नट-नर्तक-गायकेभ्यो दीनानाथेभ्यश्च यथोत्साहं भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे ।

इति भूयसीदक्षिणासङ्कल्पः ।



तदनन्तर 'याऽलक्ष्मीर्यच्च मे दौस्थ्यं०' से लेकर 'शान्तिरस्तु सदा मम' पर्यन्त श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे ।

भूयसीदक्षिणा संकल्प—इसके बाद दुर्गार्चनकर्म न्यूनातिरिक्त (कमी-वेशी) दोष परिहारार्थ अनेक गोत्र वाले ब्राह्मणों, बन्धु-बान्धवों, नट-नर्तक-गायकों और दीनानाथों के लिए यथाशक्ति भूयसी दक्षिणा का संकल्प करें ।

आवाहितदेवतानां विसर्जनम्

ततो देवताऽग्निं सानुनयं विसृजेत्।

ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे। उप प्रयन्तु मरुतः सुदानव ऽइन्द्र प्राशूर्भवा सचा॥

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥
आवाहितदेवताः स्वस्थाने गच्छत।

ॐ यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा। एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तज्जुषस्व स्वाहा॥

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ! स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन!॥१॥
यज्ञनारायण स्वस्थाने गच्छ।
ॐ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च॥२॥
गच्छ देवि! निजं स्थानं मह्यं दत्वा वरान् बहून्।
गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि!॥३॥
दुर्गे देवि! जगन्मातः! स्वस्थानं गच्छ पूजिता।
संवत्सर-व्यतीते तु पुनरागमनाय वै॥४॥
इमां पूजां मया देवि! यथाशक्त्युपपादिताम्।
रक्षार्थं च समागच्छ व्रज स्वस्थानमुत्तमम्॥५॥

आवाहित देवताओं का विसर्जन—तत्पश्चात् देवताओं और अग्नि का

मया यत्कृतं यथाकालं यथाऽऽदेशं यथाज्ञानं यथाशक्ति दुर्गार्चनाख्यं कर्म तेन श्रीपापापहा महाविष्णुः प्रीयताम्।

सकुशजलं भूमौ क्षिपेत्, करौ सम्पुटीकृत्य। मया यत्कृतं दुर्गार्चनाख्यं कर्म तत् कालहीनं भक्तिहीनं श्रद्धाहीनं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् श्रीसूर्याद्यावाहित-देवता-प्रसादात् सर्वविधेः परिपूर्णमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। 'अस्तु परिपूर्णम्' इति ब्राह्मणाः वदेयुः।

इत्यावाहितदेवतानां विसर्जनम्।

क्षमा-प्रार्थना

जपच्छिद्रं तपश्छिद्रं यच्छिद्रं शान्तिकर्मणि।
सर्वं भवतु मेऽच्छिद्रं ब्राह्मणानां प्रसादतः॥१॥
प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥२॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो-यज्ञ-क्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥३॥

प्रार्थना पूर्वक 'ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते०' से 'श्रीपापापहा महाविष्णुः प्रीयताम्' पर्यन्त पढ़कर अक्षत छिड़कते हुए विसर्जन करे। कुश सहित जल भूमि पर गिरा दे और यजमान दोनों हाथ जोड़कर 'मया यत्कृतं दुर्गार्चनाख्यं कर्म' से 'भवन्तो ब्रवन्तु' तक पढ़कर प्रार्थना करे। 'अस्तु परिपूर्ण' यह ब्राह्मण कहें।

इस प्रकार आवाहित देवताओं का विसर्जन समाप्त।

क्षमा-प्रार्थना—तत्पश्चात् यज्ञकर्ता 'जपच्छिद्रं तपश्छिद्रं०' से लेकर 'सद्यो वन्दे तमच्युतम्' तक पढ़कर क्षमा-प्रार्थना करे।

तिलकाशीर्वादः

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात् पवमानं महीयते।
धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ।।१।।
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ।।२।।
आयुष्कामो यशस्कामो पुत्र-पौत्रस्तथैव च।
आरोग्यं धनकामश्च सर्वे कामा भवन्तु मे ।।३।।

इति देवरिया-मण्डलान्तर्गत-'मझौली राज्य' निवासि - (सम्प्रति वाराणसीस्थ)-पण्डित-श्रीकान्तमिश्रशर्मणां पौत्रेण सुप्रसिद्ध-कोविदकुल-प्रसूत-पण्डित-श्रीसन्तशरणमिश्रशर्मणां पुत्रेण व्याकरणाचार्य - साहित्यवारिधि -
आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिणा
'शिवदत्ती'-हिन्दी-व्याख्यया विभूष्य
विरचिता सम्पादिता च
दुर्गार्चनपद्धतिः समाप्ता।



तिलकाशीर्वाद—तदनन्तर ब्राह्मणगण 'श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्य-माविधात्०' से 'सर्वे कामा भवन्तु मे' तक पढ़कर यजमान को तिलक लगाकर आशीर्वाद देवें।



परिशिष्टम्

शतचण्डीप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ—

शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।
नृणोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ।। १ ।।
अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते ।। २ ।।
रोगाणां वैरिणां नाशौ धन-पुत्र-समृद्धयः ।
शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ।। ३ ।।
मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात् स-ध्वजतोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ।। ४ ।।
स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा वृणुयाद् दशवाडवान् ।
जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्यवादिनः ।। ५ ।।
व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठरतान् लज्जा-दयावतः ।
मधुपर्कविधानेन स्वर्ण-वस्त्रादि-दानतः ।। ६ ।।

मन्त्रमहोदधि-वर्णित-शतचण्डी प्रयोग—साधक के कल्याण के लिए शतचण्डी विधान का वर्णन करते हैं। राज्योपद्रव, दुर्भिक्ष, भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि और शत्रुकृत चक्रभय आदि समस्त विघ्न शतचण्डी विधान से नष्ट होते हैं ।।१-२।। इसी प्रकार रोग, शत्रु आदि भी नष्ट होते हैं। शिव अथवा दुर्गा-मन्दिर में, ध्वजा, तोरण आदि से सुसज्जित मण्डप एवं द्वार का निर्माण करे। तथा पश्चिम की ओर अथवा मध्य भाग में कुण्ड का निर्माण करे ।।३-४।।

साधक को चाहिए कि स्नान आदि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर जितेन्द्रिय, सदाचारी, कुलीन, सत्यवादी, व्युत्पन्न, देवी के नित्य पाठ में तत्पर एवं लज्जा, दयावान् ऐसे दश ब्राह्मणों का मधुपर्क विधान तथा स्वर्ण, वस्त्र आदि से सत्कृत कर वरण करें ।।५-६।।

जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम् ।
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ।। ७ ।।
भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ।
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ।। ८ ।।
नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चाऽयुतं पृथक्[1] ।
(अष्टमी-नवमी-चतुर्दशी-पौर्णमासीषु यथा शतावृत्तिसमाप्ति-र्भवति तथाऽऽरम्भः कर्तव्य इति साम्प्रदायिकाः ।)
यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ।। ९ ।।
द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ।
नाऽधिकाङ्गीं न हीनाङ्गीं कुष्ठिनीं च व्रणाङ्कितम् ।।१०।।
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्-तनुम् ।
दासीजातां रोगयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत् ।।११।।

उन वृणीत ब्राह्मणों को आसन एवं जप के लिए रुद्राक्ष की माला तथा भोजन प्रदान करे। वृणीत ब्राह्मणों को चाहिए कि वे हविष्यान्न ही भोजन करें। अपने अन्तःकरण में निरन्तर चण्डी (दुर्गा) मन्त्रार्थ का चिन्तन करते हुए भूमि पर शयन करें। इस प्रकार मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत दुर्गा सप्तशती का पाठ करें तथा दस हजार जापक नित्य नवार्ण मन्त्र का जप करें, या प्रत्येक ब्राह्मण प्रतिदिन दस हजार जप करें ।।७-८½।। (साथ ही अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी और पूर्णिमा तिथि में शतावृत्ति पाठ समाप्त हो ऐसी व्यवस्था करें।)

तत्पश्चात् यजमान दो वर्ष से लेकर दस वर्ष पर्यन्त नव कुमारिकाओं का पूजन करे। वे कुमारियाँ अधिक अंग, हीन अंग, कोढ़ी, फोड़ा-फुन्सी युक्त, अन्धी, कानी, खुजली वाली, कुरूप, अधिक रोएँ वाली, दासी से उत्पन्न, रोगी और दुष्ट स्वभाव वाली न हो, ऐसी कन्याओं का पूजन न करे ।।९-११।।

१. पृथक्-सम्पुटीकरणादिति शेषः। प्रत्येकं ब्राह्मणैरयुतजपः कार्यः।

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ।।१२।।
द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ।।१३।।
षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायनी ।
अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद् दुर्गा तु नवहायनी ।।१४।।
सुभद्रा दशवर्षोक्ता नाममन्त्रैः प्रपूजयेत् ।
तासामावाहने मन्त्रः प्रोच्यते शङ्करोदितः ।।१५।।
मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ।।१६।।
कुमारिकादि-कन्यानां पूजामन्त्रान् ब्रुवेऽधुना ।

कन्यापूजनमन्त्रा:

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ! ।
पूजां गृहाण कौमारि ! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ।।१७।।
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ।।१८।।

समस्त कार्य की सिद्धि के लिए ब्राह्मण कुमारिकाओं का, यश के लिए क्षत्रिय कुमारिकाओं का, धन-प्राप्ति के लिए वैश्य कुमारिकाओं का और पुत्र-प्राप्ति के निमित्त शूद्र कुमारिकाओं का पूजन करें ।।१२।।

दो वर्ष की कन्या 'कुमारी', तीन वर्ष की 'त्रिमूर्ति', चार वर्ष की 'कल्याणी', पाँच वर्ष की 'रोहिणी', छह वर्ष की 'कालिका', सात वर्ष की 'चण्डिका', आठ वर्ष की 'शाम्भवी', नव वर्ष की 'दुर्गा' तथा दस वर्ष की कन्या का नाम 'सुभद्रा' है। इन नवों कन्याओं का शङ्कर द्वारा कथित आवाहन आदि के मन्त्रों से 'मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं०' से लेकर 'कन्यामावाहयाम्यहम्' तक पढ़कर पूजन करे ।।१३-१६।।

इसके बाद कुमारिका पूजन आदि मन्त्रों का वर्णन करते हुए कहते हैं, जो इस प्रकार है–'जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये०' से लेकर 'जगन्मात-

कालात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ।
कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ।।१९।।
अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ।
अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ।।२०।।
कामाचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम् ।
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ।।२१।।
चण्डवीरां चण्डमायां चण्ड-मुण्ड-प्रभञ्जनीम् ।
पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ।।२२।।
सदाऽऽनन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ।
सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ।।२३।।
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भव-दुःख-विनाशिनीम् ।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्ति-नाशिनीम् ।।२४।।
सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुख-सौभाग्य-दायिनीम् ।
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ।।२५।।
एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तां तां कन्यां समर्चयेत् ।
गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्य-भोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ।।२६।।

र्नमोऽस्तु ते' तक पढ़कर कुमारी का पूजन करे ।।१७।। 'त्रिपुरां त्रिपुराधारां०' से 'त्रिमूर्तिं पूज्याम्यहम्' पर्यन्त पढ़कर त्रिमूर्ति कुमारी का गन्ध, अक्षत और पुष्पादि द्वारा अर्चना करे ।।१८।।

'कालात्मिकां कलातीतां०' से लेकर 'कल्याणीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़ कर कल्याणी का, 'अणिमादि-गुणाधारां०' से 'रोहिणीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर रोहिणी का तथा 'कामाचारां शुभां कान्तां०' से 'कालिकां पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर कालिका का पूजन करे ।।१९-२१।।

'चण्डवीरां चण्डमायां०' से 'चण्डिकां चण्डविक्रमाम्' पर्यन्त मन्त्र उच्चारण कर चण्डिका का, 'सदानन्दकरीं शान्तां' से आरम्भ कर 'शाम्भवीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर शाम्भवी का, 'दुर्गमे दुस्तरे कार्ये०'

वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ।
घटं संस्थाप्य विधिना तत्राऽवाह्याऽर्चयेच्छिवाम् ।।२७।।
तदग्रे कन्यकाश्चाऽपि पूजयेद् ब्राह्मणानपि ।
उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्तावरणादपि ।।२८।।

होमद्रव्याणि

एवं चतुर्दिनं कृत्वां पञ्चमे होममाचरेत् ।
पायसान्नै-स्त्रिमध्वक्तै-र्द्राक्षारम्भा-फलादिभिः ।।२९।।
मातुलिङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः ।
जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुर-वस्तुभिः ।।३०।।
सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिमन्त्रं हुतं चरेत् ।
अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ।।३१।।
कृत्वा-ऽऽवरण-देवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ।
कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग् देवमग्निं विसृज्य च ।।३२।।
अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः ।
निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ।।३३।।

से लेकर 'दुर्गां दुर्गार्ति-नाशिनीम्' तक कहकर दुर्गा का और 'सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां०' से 'सुभद्रां पूजयाम्यहम्' तक कहकर सुभद्रा आदि नव कुमारिकाओं को गन्ध, पुष्प, वस्त्र, आभरण आदि समर्पित करे ।।२२-२६।।

सर्वतोभद्र मण्डल में विधि-विधान से घटस्थापन कर दुर्गा का आवाहन एवं पूजन करे ।।२७।। उस मण्डल के आगे विविध उपचारों से ब्राह्मणों एवं कन्याओं का पूजन करे ।।२८।।

इस प्रकार चार दिन पर्यन्त पूजन कर पाँचवे दिन से पायस (खीर), त्रिमधु, दाख, केला, मातुलिङ्ग, इक्षुखण्ड (ऊँख के टुकड़े), नारियल, तिल, जातीफल एवं आम का फल आदि मधुर वस्तुओं से शतचण्डी प्रयोग में सप्तशती के दस पाठ का हवन करे, और दस हजार नवार्ण मन्त्र का हवन करे ।।२९-३१।। तथा उन-उन नाम मन्त्रों से आवरण

मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्या-ऽऽयुरारोग्य-विपुल-पुत्र-पौत्रा-द्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि -स्थिरलक्ष्मी- कीर्तिलाभ-शत्रुपराजय-सदभीष्टसिद्ध्यर्थं श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवता-प्रीत्यर्थं कृतस्य शतचण्डी-(नवचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी वा) पाठसाङ्गतासिद्ध्यर्थं तद्दशांशहवन-तद्दशांशतर्पण-तद्दशांश-मार्जन-तद्दशांशब्राह्मणभोजनं च करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्ति-पुण्याहवाचन-मातृका-पूजनं वसोर्द्धारापूजनमायुष्यमन्त्रजपमाचार्यादि-वरणानि च करिष्ये। तत्राऽऽदौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाऽम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये।

तदनन्तरं गणेशपूजनादारभ्य पूर्णाहुतिपर्यन्तं सर्वं कार्यं प्रस्तुत-दुर्गार्चनपद्धत्यनुसारेण कुर्यात्। प्रधानहवने तु सप्तशती-प्रतिश्लोके स्वाहान्तहोमः। चर्वाज्यद्रव्येण कुर्यादिति विशेषः। तर्पणे—'दुर्गां तर्पयामि। मार्जने—दुर्गां मार्जयामि'।

अत्र नवचण्ड्यां नवब्राह्मणाः। शतचण्ड्यां दश। सहस्र-चण्ड्यां शतम्। लक्षचण्ड्यां सहस्रम्। केचिदत्र ग्रहजपार्थ-मेकमृत्विजं वरयन्ति।

इति नवचण्डी-शतचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी-हवनप्रयोगः समाप्तः।



सप्तशती-मन्त्र-हवन-विधानम्

शून्यागारे शवस्याऽग्रे श्मशाने च चतुष्पथे।
देवीमन्त्रं जपेद् यस्तु समः सिद्ध्यति साधकः॥ १॥
सूर्योदयं समारभ्य पुनः सूर्योदयान्तरम्।
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्॥ २॥

शून्यगृह, शव के आगे, श्मशान और चौराहे पर जो साधक देवी-मन्त्र का जप करता है, उसे वर्ष भर में निश्चय ही सिद्धि प्राप्त होती है॥१॥

अर्धरात्रेऽपि मध्याह्ने पुरश्चरणमारभेत् ।
सूर्योदयात् समारभ्य यावत्सूर्योदयान्तरम् ।। ३ ।।
तावज्जप्त्वा निरातङ्को मन्त्रः कल्पद्रुमो भवेत् ।
प्रातःकालं समारभ्य जपेन्मन्त्रं दिनावधि ।। ४ ।।

देवी-रहस्ये मारीचकल्पतन्त्रे च

'गर्ज गर्जे'ति मन्त्रेण सुरां दद्यात् प्रयत्नतः ।
अथवा माक्षिकं दद्यात् विशेषेण सुरेश्वरि ! ।। १ ।।
'शूलेने'ति चतुर्मन्त्रैर्नाऽऽहुतिं कश्चिदाचरेत् ।
यदि मोहाच्चरेद् वाऽपि तस्य नाशो न संशयः ।। २ ।।
'महालक्ष्मी'त्यनेनैव चतुर्धा हवनं चरेत् ।
'एवं स्तुता सुरैर्दिव्यै'र्मन्त्रेणाऽनेन साधकः ।। ३ ।।
गन्ध-पुष्पाणि संदद्यात् पूजयेज्जगदम्बिकाम् ।
'ततः कोपं च' मन्त्रेण मसिं दद्यान् महेश्वरि ! ।। ४ ।।

जो सूर्योदय से लेकर पुनः सूर्योदय पर्यन्त अर्थात् अहर्निश जप करता है वह समस्त भयों से रहित एवं समस्त सिद्धियाँ प्राप्त करता है ।।२।। अर्धरात्रि एवं मध्याह्न में भी जप-पुरश्चरण आरम्भ करे। इसी प्रकार अखण्ड (रात-दिन) जप करने से तथा प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक जप करने से भी साधक समस्त भयों से मुक्त होता है, तथा वह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान सभी मनोरथों को पूर्ण करता है ।।३-४।।

हे सुरेश्वरि ! हवन के समय 'गर्ज गर्ज क्षणं मूढ !' (अ० ३ । श्लोक ३८) इस मन्त्र से सुरा (मद्य) या माक्षिक (मधु) का हवन करे ।।१।।

शक्रादि-स्तुतिस्थित 'शूलेन पाहि नो देवि०' (अ०४ । श्लोक २४) से 'तैरस्मान् रक्ष सर्वतः' (अ०४ । श्लोक २७) पर्यन्त चार मन्त्रों से शाकल की आहुति न दे। यदि कोई साधक मोहवश शाकल की आहुति देता है तो निश्चय ही वह नष्ट हो जाता है, इसमें संशय नहीं। चारों श्लोकों का पाठ कर 'ॐ महालक्ष्म्यै स्वाहा' इस मन्त्र से चार आहुति प्रदान करे। साधक 'एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः०' (अ०४ । श्लोक २९) इस

'मुखेन काली' मन्त्रान्ते रक्तं दद्यात् पशोरपि।
अथवा कपिकाष्ठं च विकल्पेनैव होमयेत्॥ ५ ॥
'भक्षयन्त्याश्च' मनुना दाडिमीकुसुमेन च।
'ततोऽहमि'ति मन्त्रेण शाकं दद्यात्तथोत्तमम्॥ ६ ॥
'तदा तदे'ति मन्त्रेण सिद्धार्थानपि होमयेत्।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसैः॥ ७ ॥
छागं तु प्रथमे दद्यात् द्वितीये माहिषं तथा।
तृतीये कारणेनैव सर्वकामार्थसिद्धये॥ ८ ॥
चतुर्थे तूर्यमांसेन लक्ष्मीकामार्थसिद्धये।
पञ्चमे शशमांसेन मोहनार्थं महेश्वरि !॥ ९ ॥
षष्ठे च सप्तमे देवि ! खड्गेनैव हुनेत्तथा।
अष्टमे तु महेशानि ! वन्यवाराहकेण च॥१०॥

मन्त्र से गन्ध, पुष्प की आहुति देकर देवी का पूजन करे। हे महेश्वरि ! 'ततः कोपं चकारोच्चैः०' (अ०७। श्लोक ५) इस मन्त्र से मसी (कपूरयुक्त कज्जल) का हवन करे॥२-४॥

'मुखेन काली जगृहे०' (अ०८। श्लोक ५७) मन्त्र से अज (बकरा) या महिष (भैंसा) के रक्त से अथवा इनका रक्त न मिलने पर कपिकाष्ठ से हवन करे॥५॥ 'भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्०' (अ०११। श्लोक ४४) इस मन्त्र से अनार या उसके पुष्प से हवन करे। इसी प्रकार 'ततोऽहमखिलं लोके०' (अ०११। श्लोक ४८) इस मन्त्र से शाक (सोआपालक, चौराई) द्वारा हवन करे॥६॥ 'इत्थं यदा यदा बाधा०' (अ०११। श्लोक ५४) मन्त्र से खीर का हवन करे, एवं एकादश अध्याय के समस्त श्लोकों से भी खीर-मिश्रित शाकल का हवन करे॥७॥

साधक को चाहिए कि प्रथम अध्याय के अन्त में छाग (बकरा) का मांस, द्वितीय अध्याय में महिष (भैंस) का मांस, तृतीय अध्याय में भी समस्त अभीष्ट (इच्छित) सिद्धि प्राप्ति के लिए पूर्वोक्त महिष के मांस का हवन करे॥८॥

नवमे मार्जारमांसेन दशमे गोधया तथा ।
रौद्रे कुक्कुटमांसेन सर्वकामार्थसिद्धये ।।११।।
आदित्ये तु महेशानि जम्बुकेन तथैव च ।
त्रयोदशेऽश्वमांसेन विधिना साधकोत्तमः ।।१२।।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ।
अभक्ताय न दातव्यं न देयं यस्य कस्यचित् ।।१३।।
प्रथमे मधुना कुर्याद् द्वितीये गुग्गुलेन च ।
तृतीये च प्रकर्तव्यं माहिषेण घृतेन च ।। १ ।।
शक्रादीनां स्तुतौ कुर्याद् गन्धा-ऽक्षत-समन्वितैः ।
कदली वेक्षुदण्डैश्च बाणषष्ठे च सप्तमे ।। २ ।।
रक्तबीजवधे कुर्याद् रक्तचन्दन-मिश्रितम् ।
कुर्याद् होमं प्रयत्नेन नानाद्रव्यैः समन्वितम् ।। ३ ।।

हे महेश्वरि ! लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए चतुर्थ अध्याय में तूर्य (सूखा) मांस तथा मोहन प्रयोग के लिए पंचम अध्याय में शश (खरगोश) के मांस का हवन करे ।।९।। हे देवि ! छठे और सातवें अध्याय में खड्ग (गैंडे) के मांस का हवन करे। हे महेश्वरि ! जंगली सूअर के मांस से आठवें अध्याय में हवन करे ।।१०।।

समस्त कामना सिद्धि के लिए मार्जार (बिल्ली) के मांस, दशवें अध्याय में गोधा (गोह) के मांस और ग्यारहवें अध्याय में कुक्कुट (मुर्गा) के मांस से हवन करे ।।११।।

हे महेश्वरि ! बारहवें अध्याय में जम्बुक (सियार) का मांस तथा तेरहवें अध्याय में अश्व (घोड़ा) के मांस से हवन करे। साधक इस मांस-हवन के परमतत्त्व को अत्यन्त गुप्त रखें अर्थात् नास्तिक एवं अनाधिकारी से कभी न प्रकट करे। यह मारीचकल्प तन्त्र का अनुभूत प्रयोग केवल परमशाक्तों के लिए ही है ।।१२-१३।।

जो साधक मांस आदि से घृणा करते हैं, उनके लिए-

प्रथम अध्याय में मधु से, द्वितीय अध्याय में गुग्गुल से, और तृतीय अध्याय में भैंस के घी से हवन करे ।।१।। शक्रादि स्तुति वाले

नवमे दशमे चैव नारायणिस्तुतौ तथा।
गन्ध-पुष्पैः प्रकर्तव्यं पायसेन समन्वितम्।। ४।।
शतपत्रैश्च कर्तव्यं गोरोचन-समन्वितम्।
द्वादशे त्रयोदशे च कर्तव्यं तु यथाविधिः।। ५।।
पञ्चखाद्येन कर्तव्यं रहस्यादि यथाक्रमम्।
एतत्क्रमेण कर्तव्यं द्रव्यं चैव मनोहरम्।। ६।।
आद्यन्ते च प्रकर्तव्यं पायसं शर्करान्वितम्।
नील-ब्रीहि-यवश्चैव होतस्यं च घृताप्लुतम्।
अन्यथा कुरुते यस्तु तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।। ७।।

इति देवीरहस्य-मारीचकल्पतन्त्रोक्तं सप्तशती-मन्त्र-हवन-विधानं समाप्तम्।

●

चौथे अध्याय में मिले हुए गन्ध, अक्षत से, पाँचवे, छठें एवं सातवें अध्याय में पके केले के टुकड़े या ईख के टुकड़े से हवन करे ।।२।। रक्तबीज वध रूप आठवें अध्याय में नाना सुगन्धितयुक्त लाल चन्दन के चूरे से हवन करे ।।३।। नवम, दशम तथा नारायणि-स्तुतिरूप एकादश अध्याय में पायस (खीर) युक्त गन्ध, पुष्प से हवन करे ।।४।।

द्वादश एवं त्रयोदश अध्याय में गोरोचन मिश्रित शतपत्र (गेंदे के पत्तों) से हवन करे। हवन के समय गरिष्ठ (अधिक) भोजन न करे। हवन के अनन्तर तीनों रहस्यों का यथाविधि पाठ करे और पूजन में सुन्दर एवं उत्तमोत्तम सामग्री भगवती को समर्पित करे ।।५-६।।

आदि और अन्त में नवार्ण मन्त्र जप से शर्करा मिश्रित खीर और घृत मिश्रित तिल, चावल एवं यव (शाकल) से हवन करे। इसके विपरीत जो साधक हवन करता है, उसके समस्त कार्य निष्फल होते हैं ।।७।।

इस प्रकार देवी-रहस्य तथा मारीचकल्पतन्त्रोक्त दुर्गासप्तशती के मन्त्रों द्वारा हवन-विधान समाप्त।

●

दुर्गासप्तशती-संक्षिप्त-पाठ-विधिः

पाठकर्ता नित्यस्नानादिक्रियां कृत्वा, प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य, 'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः, इति त्रिराचम्य ।

ॐ पवित्रेस्थो व्वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्रसव ऽउत्पु-नाम्म्यच्छिद्द्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥

इति मन्त्रेण पवित्रधारणं कृत्वा, प्राणायामत्रयं कुर्यात् ।

'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।' इत्यात्मानं पूजन-सामग्रीं च सम्प्रोक्ष्य, हस्ते-ऽक्षत-पुष्पाणि गृहीत्वा, 'आ नो भद्राः०'-'सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादि मङ्गलमन्त्रान् पठेत् ।

ततो हस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय, सङ्कल्पं कुर्यात् । तद्यथा— अद्येत्यादि-मास-पक्षादीनुच्चार्य मम आत्मनः श्रुति-स्मृति-पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम् अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्माऽहम् अमुक-गोत्रस्य सपत्नीकस्य यजमानस्य (स्वस्य च) आयुरारोग्यैश्वर्या-ऽभिवृद्ध्यर्थं पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ-

---

पाठ करने वाले व्यक्ति को चाहिए कि स्नान आदि नित्यक्रिया से निवृत्त होकर पूर्वमुख या उत्तरमुख हो आसन पर बैठकर 'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः' पढ़कर तीन बार आचमन कर 'ॐ पवित्रे स्थो०' से 'पुने तच्छकेयम्' मन्त्र द्वारा हाथ में पवित्री धारण कर तीन बार प्राणायाम करे।

पुनः 'ॐ अपवित्र पवित्रो वा०' मन्त्र पढ़कर अपने शरीर पर तथा पूजन सामग्री पर जल छिड़के और हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर 'आ नो भद्राः०' तथा 'सुमुखश्चैकदन्तश्च०' आदि मङ्गल मन्त्रों को पढ़े।

शत्रुपराजय-सदभीष्ट-सिद्ध्यर्थं च श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थं कवचा-ऽर्गला-कीलक-पठनैकादश-न्यास-पूर्वक-नवार्णमन्त्राऽष्टोत्तरशतजप-रात्रिसूक्तपठनपूर्वक-देवीसूक्त-पठन-नवार्णमन्त्राष्टोत्तर-शतजप-रहस्यत्रय-पठनान्त 'मार्कण्डेय उवाच' इत्यारम्भ 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं दुर्गासप्तशत्याः पाठं करिष्ये।

ततः कवचा-ऽर्गला-कीलकं पठित्वा न्यासादिपूर्वकं नवार्णमन्त्रं जपेत्।

पश्चाद् रात्रिसूक्तं पठित्वा, विनियोग-कर-हृदयादिन्यासं विधाय, 'विद्युद्दाम-समप्रभामि'ति ध्यानं कृत्वा, 'मार्कण्डेय उवाच' इत्यारम्भ 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं पाठं कुर्यात्।

अन्ते उत्तरन्यासपूर्वकं दुर्गादेव्याः 'विद्युद्दामे'ति ध्यात्वा, देवीसूक्तं पठेत्।

तत अष्टोत्तरशत-नवार्णमन्त्रस्य जपं कृत्वा, तदुत्तरन्यासान् विधाय, 'गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री'ति पठित्वा, देव्या वामहस्ते जपं निवेद्य रहस्यत्रयं पठेत्। पश्चादुत्तरपूजां विधाय, आरार्तिक-

---

तत्पश्चात् हाथ में जल, अक्षत, पुष्प और द्रव्य लेकर 'अद्येत्यादि०' से 'दुर्गासप्तशत्याः पाठं करिष्ये' तक पढ़कर पाठ का संकल्प करे।

तदनन्तर कवच, अर्गला, कीलक का पाठ कर, न्यासादि के साथ नवार्ण मन्त्र का जाप करे।

पश्चात् रात्रिसूक्त पढ़कर विनियोग, करांगन्यास एवं हृदयादिन्यास-पूर्वक 'विद्युद्दामसमप्रभां' से भगवती दुर्गा का ध्यान कर, 'मार्कण्डेय उवाच०' से आरम्भ कर 'सावर्णिर्भविता मनुः' पर्यन्त दुर्गासप्तशती का पाठ करे।

पाठोपरान्त उत्तरन्यास कर 'विद्युद्दाम-समप्रभां०' श्लोक से दुर्गा देवी का ध्यान कर देवी सूक्त का पाठ करे।

इसके बाद एक माला (१०८) नवार्णमन्त्र का जप करें, उत्तरन्यास

मन्त्रपुष्पाञ्जलिं क्षमा-प्रार्थनां च कृत्वा प्रणमेत् ।

इति दुर्गासप्तशती-संक्षिप्त-पाठविधिः समाप्तः ।

●

दुर्गासप्तशती-सम्पुट-पाठ-विधिः

देव्युवाच

सम्पुटं कतिधा स्वामिन्! वेत्तुमिच्छामि तत्त्वतः ।
कथयस्व सुरेशान! यद्यहं तव वल्लभा? ।। १ ।।

ईश्वर उवाच

सम्पुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये! ।
शृणूदयन्त्वमत्रादौ पश्चादस्तं वदामि ते ।। २ ।।
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रं पुनः पठेत् ।
पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं क्रमोऽयमुदये शुभः ।
उदयोत्कर्षलाभाय सम्पुटोऽयमुदाहृतः ।। ३ ।।

पूर्वक 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं' पढ़कर, देवी के बायें हाथ में जप निवेदन कर, रहस्यत्रय का पाठ करे। तत्पश्चात् उत्तरपूजा कर आरती, मन्त्रपुष्पांजलि एवं क्षमा-प्रार्थना पूर्वक देवी को प्रणाम कर पाठ समाप्त करे।

इस प्रकार दुर्गासप्तशती का संक्षिप्त पाठ-विधि समाप्त।

●

दुर्गा सप्तशती की सम्पुट पाठ-विधि—पार्वती ने कहा- हे स्वामी! यदि मैं आपकी परम प्रिय पात्री हूँ तो सम्पुट कितने प्रकार के होते हैं? इसे बताने की कृपा करें ।।१।।

महादेव जी ने कहा- उदय और अस्त के भेद से सम्पुट का वर्णन करता हूँ, उसे सावधान पूर्वक श्रवण करो ।।२।।

उदयसम्पुट—जिस मन्त्र का सम्पुट पाठ करना हो, उसे पहले पढ़ें, पश्चात् सप्तशती का श्लोक पढ़े। पुनः सम्पुटित मन्त्र का दो बार पाठ कर सप्तशती का श्लोक पढ़े। उदय और उत्कर्ष की प्राप्ति के लिए इस प्रकार सम्पुट पाठ करना चाहिए। इसका नाम उदय सम्पुट है।

अत्र सर्वत्र श्लोकमिति मन्त्रोपलक्षणम्।

अस्तं चिकित्साशास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत्।
तत्तेऽहं प्रवदाम्यत्र एकाग्रकृतमानसः ।। ४ ।।
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रविपर्ययम्।
पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं पुनर्मन्त्रविपर्ययम् ।। ५ ।।
मारणोच्चाटने बन्धे सम्पुटोऽयमुदाहृतः।
प्रकारोऽयमनादृत्य कुर्वन्त्यात्मप्रकल्पितम्।
रौरवादिषु पच्यन्ते यावदाभूत-संप्लवम् ।। ६ ।।

अस्य पुरश्चरणस्वरूपं मरीचिकल्पे

कृष्णाऽष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशी।
वृद्ध्यैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसम्पुटितं तु तत् ।। ७ ।।

सप्तशती के समस्त श्लोक मन्त्र परक हैं ।।३।।

अस्तसम्पुट-हे देवि ! चिकित्सा शास्त्र में सकोरे पर उलटा सकोरा रख सम्पुट-विधि से रस निर्माण किया जाता है, उसी अस्त सम्पुट का मैं वर्णन करता हूँ ।।४।।

पहले सम्पुट मन्त्र का पाठ फिर सप्तशती श्लोक का पाठ तत्पश्चात् सम्पुटित मन्त्र का विपरित पाठ पश्चात् सम्पुटित मन्त्र का सीधा पाठ, तदनन्तर सम्पुटित मन्त्र का पुनः उल्टा पाठ किया जाये तो उसे अस्त सम्पुटित कहते हैं ।।५।।

इस सम्पुट का पाठ मारण, उच्चाटन एवं कारागार में बन्धन से मुक्त कराने के लिए किया जाता है। इस अस्त सम्पुट का पाठ जो नहीं करते हुए अपने मनमाने सम्पुट का पाठ करते हैं वे यावत् कल्प रौरव नरक में गिराये जाते हैं ।।६।।

मरीचिकल्पोक्त सप्तशती पुरश्चरण-विधि–हे देवि ! अब मैं पुरश्चरण क्रम का निरूपण करता हूँ। खरवाँस आदि का परित्याग कर अन्य मास की

एवं देवि! मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसा ।। ८ ।।
रात्रिसूक्तं प्रतिऋचं तथा देव्याश्च सूक्तकम्।
हुत्वान्ते प्रजपेत् स्तोत्रमादौ पूजादिकं मुने! ।। ९ ।।

इति दुर्गासप्तशती-सम्पुट-पाठविधिः समाप्तः।

कृष्ण पक्ष की अष्टमी से आरम्भ कर कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तक इन सात दिनों में एक-एक पाठ वृद्धि-क्रम से करे और सम्पुटित का जप भी उसी प्रकार करे। तत्पश्चात् पायस (खीर) द्वारा सप्तशती के श्लोकों को रात्रिसूक्त तथा देवी सूक्त के मन्त्रों से हवन करने से ही पुरश्चरण होता है ।।७-९।।

विशेष—उदयसम्पुट : जैसे-किसी को 'शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे। सर्वस्यार्ति-हरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ।।' मन्त्र से सम्पुट करना है, तो सर्वप्रथम 'शरणागत-दीनार्त०' मन्त्र को एक बार पढ़े, पश्चात् 'मार्कण्डेय उवाच' कह कर दो बार 'शरणागत-दीनार्त०' मन्त्र का पाठ करे। पुनः 'सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः। निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ।।' श्लोक का उच्चारण करे तथा फिर दो बार 'शरणागत-दीनार्त०' इस सम्पुट मन्त्र का पाठ करे। पुनः आगे सप्तशती के श्लोक-

'महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ।।'

का पाठ करे। इस प्रकार आगे भी पाठक्रम चलता है। इसी को 'उदय-सम्पुट' कहते हैं। जैसे कि, वर्तमान समय में विद्वद्गण द्वारा होता है। अस्त सम्पुट—अस्त सम्पुट तो परमतान्त्रिक दीक्षित साधक को ही करने का अधिकार है अन्य को नहीं।

दुर्गा सप्तशती के सम्पुट-मन्त्रों द्वारा फलप्राप्ति के साधन

१. दुःख-दारिद्र्य निवारणार्थ :

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्य-दुःख-भयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ।।
(अ० ४, श्लोक १७)

२. विविध उपद्रवों के शमनार्थ :

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्यु बलानि यत्र ।
दावानलो यत्र तथाऽब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ।।
(अ०११, श्लोक ३२)

३. विपत्तिनाशक तथा शुभदायक :

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ।।
(अ० ५, श्लोक ८१)

४. विश्वव्यापी विपत्ति-नाशक :

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराऽचरस्य ।।
(अ०११, श्लोक ३)

५. आपत्ति-उद्धारक :

शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।
(अ० ११, श्लोक १२)

६. विश्व-सम्बन्धी अभ्युत्थान :

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ।।
(अ० ११, श्लोक ३३)

७. सामूहिक कल्याणार्थ :

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेष-देवगण-शक्तिसमूह-मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ।।
(अ० ४, श्लोक ३)

८. पापनाशक :

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ।।
(अ० ११, श्लोक २७)

९. भयनिवारक :

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ।।
(अ० ११, श्लोक २४)

१०. रोगनाशक :

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ।।
(अ० ११, श्लोक २९)

११. अपमृत्युविनाशार्थ :

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।
(शु.य.सं. अ.३, मन्त्र ६०)

१२. स्वरक्षणार्थ :

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाऽम्बिके ।
घण्टा स्वनेन नः पाहि चापज्यानि:स्वनेन च ।।

(अ० ४, श्लोक २४)

१३. महामारी नाशक :

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ।।

(अ० स्तो०, श्लोक १)

१४. सर्वाबाधा प्रशमनार्थ :

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद् वैरिविनाशनम् ।।

(अ० ११, श्लोक ३९)

१५. सर्वकल्याणार्थ :

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

(अ० ११, श्लोक १०)

१६. सौभाग्य और आरोग्यकारक :

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।

(अ० स्तो०, श्लोक १२)

१७. सर्वांगीण अभ्युत्थान :

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ।।

(अ० ४, श्लोक १५)

१८. सुलक्षणा पत्नी की उपलब्धि में :

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसार-सागरस्य कुलोद्भवाम् ॥
(अ० स्तो०, श्लोक २४)

१९. इच्छित पति प्राप्ति के लिए :

ॐ कात्यायनि महामाये ! महायोगिन्यधीश्वरि ! ।
नन्दगोपसुते देवि ! पतिं मे कुरु ते नमः ॥
(श्रीमद्भागवत)

२०. समस्त कार्यों की सिद्धि :

शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ! ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
(अ० ११, श्लोक १२)

२१. विश्व रक्षणार्थ :

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥
(अ० ४, श्लोक ५)

२२. विश्व-ताप से त्राण पाने के लिए :

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पात-पाक-जनितांश्च महोपसर्गान् ॥
(अ० ११, श्लोक ३४)

२३. विश्व के अमांगलिक फल तथा भयनाशक :

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।

सा चण्डिका-ऽखिल-जगत्-परिपालनाय
नाशाय चाशुभ-भयस्य मतिं करोतु ।।
(अ० ४, श्लोक ४)

२४. शक्ति प्राप्ति के लिए :

सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ।।
(अ० ११, श्लोक ११)

२५. धन-पुत्रादि की वृद्धिकारक तथा बाधानाशक :

सर्वाबाधा-विनिर्मुक्तो धन-धान्य-सुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ।।
(अ० १२, श्लोक १३)

२६. प्रसन्नता की उपलब्धि के लिए :

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि ।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ।।
(अ० ११, श्लोक ३५)

२७. मोक्षलाभ के लिए :

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।
(अ० स्तो०, श्लोक १४)

२८. सम्पूर्ण विद्याओं की प्राप्ति तथा समस्त स्त्रियों में मातृभावनात्मक :

विद्याः समस्तास्तव देवि! भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ।।
(अ० ११, श्लोक ६)

२९. पापनाश एवं भक्ति प्राप्ति के निमित्त :

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।
(अ० स्तो०, श्लोक ९)

३०. स्वर्ग तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए :

सर्वभूता यदा देवि स्वर्ग-मुक्ति-प्रदायिनी ।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ।।
(अ० ११, श्लोक ७)

३१. स्वप्न का शुभाऽशुभ फल :

दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थ-साधिके ।
मम सिद्धिमसिद्धिं वा स्वप्ने सर्वं प्रदर्शय ।।

३२. स्वराज्य प्राप्ति :

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ।
अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ।।
(अ० १३, श्लोक १७)

३३. इच्छित फल प्राप्ति :

एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।।
(अ० १३, श्लोक २८)

३४. बाल रोगनाशक :

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि! पापेभ्योऽनः सुतानिव ।।
(अ० ११, श्लोक २७)

३५. शत्रुनाशक :

मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते ।
ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः ।।
(अ० १, श्लोक १४)

३६. विद्यालाभार्थ :

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तः स्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ।।
(अ० ५, श्लोक ११६)

३७. सम्पत्तिवर्धक :

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः ।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ।।

(अ० २, श्लोक १)

३८. सुख की वृद्धि :

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथरम्य-पदपाठवतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ।।

(अ० ४, श्लोक १०)

३९. राज्यवशीकरण :

ममाऽस्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ।।

(अ० १, श्लोक ४५)

४०. सम्मोहन :

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।।

(अ० १, श्लोक ५५-५६)

४१. मारण प्रयोग :

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम् ।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ।।

(अ० ३, श्लोक ४०)

४२. धनवृद्धि :

कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम् ।।

(श्रीसूक्त, श्लोक ४)

४३. सकल कामना सिद्धि के लिए :

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ॥
(दुर्गा क., श्लोक ४८)

४४. अर्थोपार्जन तथा सर्वकार्य की सिद्धि निमित्त :

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥
(अ० ४, श्लोक ३८)

४५. ऋणपरिहारार्थ :

अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन् तृतीये लोके अनृणाः स्याम ।
ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान्पथो अनृणा आक्षियेम ॥
(अथ. का. ६, सू. ११७, म. ३)

४६. बन्धनमुक्ति :

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥
(अ० १, श्लोक ५७)

४७. सर्वजन वशीकरण :

महामाया हरेश्चैषा तया सम्मोह्यते जगत् ।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥
(अ० १, श्लोक ५५)

४८. सर्वजन सम्मोहन :

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥
(अ० १, श्लोक ५६)

४९. दुर्जन सम्मोहन :

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥
(अ० १, श्लोक ८५)

५०. सफलता वर्द्धक :

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती प्रसादात्
लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि! तेन ।।
(अ० ४, श्लोक १६)

५१. निर्बाध रूप से कार्य सम्पन्नता :

त्वयैतत् धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ।।
(अ० १, श्लोक ७५)

५२. दिग-बन्धन :

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ।।
(अ० ४, श्लोक २५)

५३. शत्रुओं द्वारा कृत प्रयोगों का निष्फलीकरण :

ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः ।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ।।
(अ० ९, श्लोक २९)

५४. प्रभावशाली वाक्‌शक्ति :

मेधासि देवि विदिताऽखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्ग-भव-सागर-नौरसङ्गा ।
श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलि-कृतप्रतिष्ठा ।।
(अ० ४, श्लोक ११)

५५. प्रशंसाकारक :

सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि! ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ।।
(अ० ११, श्लोक ११)

५६. मानसिक विषमता :

पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ।।
(अ० ११, श्लोक ४३)

५७. शत्रुमुख स्तम्भन एवं पुत्रोत्पत्ति के लिए :

स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात् ।
मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ।।
(अ० १२, श्लोक २९)

५८. पुत्रप्राप्ति के लिए :

देवकीसुत गोविन्द ! वासुदेव जगप्तये ।
देहि मे तनयं कृष्ण ! त्वामहं शरणं गतः ।।
(हरिवंश पुराण)

५९. देवमुख स्तम्भन :

उपसर्गानशेषांस्तु महामारी-समुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ।।
(अ० १२, श्लोक ८)

६०. दुःस्वप्ननाशक :

उपसर्गाः समं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ।।
(अ० १२, श्लोक १७)

६१. देवी की सन्तुष्टि :

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् ।
तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ।।
(अ० १३, श्लोक १०)

६२. विविध फलकारी :

परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ।
(अ० १३, श्लोक १३)

इस प्रकार दुर्गासप्तशती के सम्पुट-मंत्र विधानं समाप्त ।

कात्यायनी तन्त्रोक्त अनुभूत सम्पुट-विधान

१. अतिशीघ्र सिद्धि के लिए

दुर्गा सप्तशती के प्रत्येक मन्त्र के आदि और अन्त में प्रणव (ॐकार) का तीन बार लोम-विलोम युक्त यदि सौ बार सप्तशती का पाठ किया जाय, तो अतिशीघ्र समस्त कामनाएँ सिद्ध होती हैं।

२. समस्त कामना सिद्धि के निमित्त

'जातवेदसे सुनुवाम सोम०' इस मन्त्र के सम्पुट से समस्त कार्य सिद्ध होते हैं।

३. अपमृत्यु निवारण

अपमृत्यु के निवारण के लिए 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि-वर्धनम्' (शु० य० सं०, अ०३, म०६०) मन्त्र से पाठ सम्पुट करे।

४. अपमृत्युनाश

'शूलेन पाहि नो देवि' (अ०४, श्लोक २४) इस मन्त्र के सम्पुटित पाठ से अपमृत्यु नष्ट होता है अथवा केवल इस मन्त्र के एक लाख, दस हजार, एक हजार या सौ बार जप करने से भी उपर्युक्त फल प्राप्त होता है।

५. समस्त कार्य की सिद्धि के लिए

'शरणागत-दीनार्त०' (अ०११, श्लोक १२) मन्त्र के सम्पुट पाठ से तथा 'करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी०' (अ०५, श्लोक ८१) इस आधे मन्त्र के सम्पुट पाठ से समस्त कार्य सिद्ध होते हैं।

६. स्वाभीष्ट वर की प्राप्ति

'एवं देव्या वरं लब्ध्वा०' (अ०१३, श्लोक २८) इस मन्त्र के सम्पुट पाठ से अपने इच्छित मनोरथ पूर्ण होते हैं।

७. सर्वापत्ति निवारण के लिए

'दुर्गे स्मृता हरसि०' (अ०४, श्लोक १७) इस मन्त्र के सम्पुट पाठ एवं इससे केवल एक लाख, दस हजार, एक हजार एवं सौ बार जप करने से भी मनुष्य की सभी आपत्तियाँ नष्ट होती हैं।

८. लक्ष्मी, पुत्र आदि की वृद्धि एवं समस्त बाधा नाश के लिए

'सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो०' (अ०१२, श्लोक१३) इस मन्त्र के सम्पुट पाठ तथा इसके एक लाख जप करने से भी उपर्युक्त फल प्राप्त होता है।

९. महामारी शान्ति के लिए

'इत्यं यदा यदा बाधा०' (अ० ११ श्लोक ५४) इस श्लोक के सम्पुट पाठ एवं एक लाख जप करने से महामारी (चेचक, हैजा आदि) शान्त होती है।

१०. नष्ट राज्य की प्राप्ति के लिए

'ततो वव्रे नृपो राज्यं०' (अ० १३, श्लोक १७) इस मन्त्र के सम्पुट पाठ एवं एक लाख जप करने से नष्ट राज्य की उपलब्धि होती है।

११. बालग्रहशान्ति के लिए

'हिनस्ति दैत्यतेजांसि०' (अ० ११, श्लोक २७) इस मन्त्र के सम्पुटित पाठ तथा दीपक सहित बलि (नारियल आदि) देने से बालकों के ग्रहों की शान्ति होती है।

१२. शीघ्र कार्यसिद्धि निमित्त

दुर्गा सप्तशती का प्रथम पाठ अनुलोम (अर्थात पहले तेरहवाँ, बारहवाँ, ग्यारहवाँ-इसी प्रकार सब के अन्त में प्रथम अध्याय तक) पाठ करने से, तदनन्तर द्वितीय आवृत्ति विलोम (सीधा) पाठ करने से पुनः तीन बार उलटा पाठ करने से अति शीघ्र कार्य सिद्धि होती है।

१३. सर्वापत्ति निवारण

'दुर्गे स्मृता०' (अ० ४, श्लोक १७) इस आधे मन्त्र का, पुनः 'यदन्ति यच्च दूरके०' इस वैदिक मन्त्र का, तत्पश्चात् 'दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या०' इस आधे मन्त्र का एक लाख, दस हजार, एक हजार या सौ बार जप करने से सभी विपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं।

१४. लक्ष्मी प्राप्ति के लिए

'कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारां०' (श्रीसूक्त, श्लोक ४) इस मन्त्र के सम्पुटित पाठ करने से लक्ष्मी प्राप्त होती है।

१५. ऋणपरिहार (चुकाने) के लिए

'अनृणा अस्मिन्०' (अथ०, का० ६, सू० ११७, म० ३) इस मन्त्र द्वारा दुर्गा सप्तशती का सम्पुट पाठ करने से मनुष्य अतिशीघ्र ऋण-मुक्त हो जाता है।

१६. मारण प्रयोग

'एवमुक्त्वा समुत्पत्त्य०' (अ० ३, श्लोक ४०) इस मन्त्र द्वारा सम्पुटित पाठ करने से मारण प्रयोग अति शीघ्र सिद्ध होता है।

१७. मोहन (वशीकरण) के निमित्त

'ज्ञानिनामपि चेतांसि०' (अ० १, श्लोक ५५) इस मन्त्र के एक लाख, एक हजार या सौ बार जप करने से ही अति शीघ्र वशीकरण होता है। यह अनुभूत प्रयोग है।

१८. सकल रोग निवारणार्थ

'रोगानशेषानपहंसि तुष्टा०' (अ० ११, श्लोक २९) इस मन्त्र द्वारा दुर्गासप्तशती का सम्पुटित पाठ करने से समस्त रोग नष्ट होते हैं।

१९. विद्या प्राप्ति एवं वाग्-विकार के लिए

'इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरा०' (अ० ५, श्लोक ११६) इस मन्त्र के द्वारा सम्पुट पाठ करने से तथा केवल जप मात्र से भी विद्या-प्राप्ति एवं वाग्-विकार नष्ट होता है।

२०. समस्त कामना की पूर्ति एवं आपत्तिनाशक प्रयोग

'भगवत्या कृतं सर्वं०' (अ० ४, श्लोक ३४) इस मन्त्र का एक सौ बारह बार जप मात्र से ही मनुष्य की समस्त कामनाएँ सिद्ध तथा समस्त आपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं।

२१. सभी प्रकार की आपत्ति से निवृत्ति तथा समस्त कार्य-सिद्धि के लिए

'देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद०' (अ० ११, श्लोक ३) इस मन्त्र द्वारा सम्पुटित पाठ एवं कार्यानुसार एक लाख, दस हजार अथवा सौ बार इसका जप करने से सभी आपत्तियाँ नष्ट होतीं तथा सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। प्रत्येक मन्त्र के बाद दीपक के आगे केवल नमस्कार मात्र से भी अतिशीघ्र सिद्धि होती है, एवं कामबीज से सम्पुटित कर तीन आवृत्ति क्रम से इकतालीस दिन तक दुर्गा सप्तशती का पाठ करने से समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। इसी मन्त्र का इक्कीस दिन तक बारह पाठ करने से वशीकरण होता है।

उक्त मन्त्र का माया बीज के साथ सात दिन तक तेरह बार पाठ करने पर उच्चाटन सिद्धि होती है। उसी प्रकार चार दिन तक ग्यारह

पाठ करने से समस्त उपद्रव नष्ट होते हैं। उक्त मन्त्र का उनचास दिन तक श्रीबीज से सम्पुटित कर पन्द्रह बार पाठ करने से निश्चय ही लक्ष्मी प्राप्ति होती है तथा वाग्बीज से सम्पुटित कर उक्त मन्त्र का सौ बार पाठ करने से विद्या प्राप्ति होती है।

इस प्रकार कात्यायनी तन्त्रोक्त अनुभूत सम्पुट-विधान समाप्त।

कामनापरक दुर्गासप्तशती का अनुष्ठान-विधान

१. दुर्गासप्तशती के तीनों चरित्रों का पाठ करना चाहिए।

२. अशक्ति के प्रथम एवं मध्यम चरित्र तक पाठ करे।

३. अत्यन्त अशक्ति अवस्था में-'नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥' इस श्लोक का ही केवल पाठ करे।

४. पीढ़ा या चौकी पर नया वस्त्र बिछाकर पाठ करना चाहिए।

५. जो सप्तशती की पुस्तक हाथ में रखकर पाठ करता है, उसे आधा फल प्राप्त होता है।

६. सप्तशती का पाठ अतिशीघ्रता से तथा मन में नहीं करना चाहिए।

७. स्वयं लिखित अथवा शूद्र द्वारा लिखित सप्तशती पुस्तक से पाठ नहीं करना चाहिए।

८. उपसर्ग, शान्ति एवं ग्रहजन्य पीड़ा तथा अति भयंकर उत्पात और महामारी शान्ति, शत्रुनाश के लिए क्रमशः तीन, पाँच, सात, नव, ग्यारह और बारह पाठ करे।

९. संकट, शारीरिक कष्ट, औषधि के काम न करने पर, जाति, कुल एवं आयुनाश में, शत्रु, रोगवृद्धि में, धन नष्ट होने पर, जय और राज्यवृद्धि में सौ पाठ करे।

१०. जो साधक पूर्णिमा, चतुर्दशी, नवमी और अष्टमी को भगवती दुर्गा का त्रिकाल पूजन तथा पाठ करता है वह देवी-लोक में निवास करता तथा महान् ऐश्वर्यशाली होता है।

११. जो मनुष्य रविवार को सप्तशती का पाठ करता है, उसे नव आवृत्ति का फल प्राप्त होता है। उसी प्रकार सोमवार को पाठ करने से एक हजार पाठ करने का फल, मंगलवार को पाठ करने से सौ

पाठ करने का पुण्य फल, बुधवार को पाठ करने से एक लाख पाठ का फल तथा गुरु और शुक्रवार को पाठ करने से दो लाख चण्डीपाठ का फल एवं शनिवार को पाठ करने से एक करोड़ पाठ करने का फल प्राप्त होता है।

१२. शुक्ल पक्ष की षष्ठी से आरम्भ कर शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी तक जो साधक नव पाठ करता है, उसे समस्त कार्य की सिद्धि प्राप्त होती है। किन्हीं-किन्हीं तन्त्रों में कृष्ण पक्ष की अष्टमी से लेकर कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तक वृद्धि-क्रम से पाठ करने पर उक्त-फल मिलता है, ऐसा प्रतिपादन किया गया है।

१३. मोक्ष-प्राप्ति के लिए पायस (खीर) से, मारण में उड़द, मोहन में मधुमिश्रित पायस, उच्चाटन में त्रिमधु, स्तम्भन में मातुलिंग फल और वशीकरण में सरसों से हवन करे।

१४. जो साधक नाभिमात्र जल में खड़े होकर नवार्ण मन्त्र का एक हजार जप करता है उसे कविता करने की शक्ति प्राप्त होती है एवं वह भव-बन्धन से छूट जाता है।

इस प्रकार कामनापरक दुर्गा-सप्तशती का अनुष्ठान-विधान समाप्त।

दुर्गा-तन्त्रम्

दुर्गा-ध्यानम्

विद्युद्दाम-समप्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्र-गदा-ऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।१।।
खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ।।२।।
अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।

शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ।।३।।
घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ।।४।।

यन्त्रोद्धार:

लिखेदष्टदलं पद्मं चन्दना-ऽगुरु-कुङ्कुमैः ।
पद्ममध्ये लिखेच्चक्रं षट्कोणं चण्डिकामयम् ।।१।।
षट्कोणचक्र-मध्यस्थमाद्यबीजत्रयं लिखेत् ।
पूर्वादिकोण-षट्के तु बीजान्यन्यानि विन्यसेत् ।।२।।

शापोद्धारमन्त्र : ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिके देवि शापानुग्रहं कुरु-कुरु स्वाहा ।

उत्कीलनमन्त्र : ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशति चण्डिके उत्कीलनं कुरु-कुरु स्वाहा ।

मृतसंजीवनी-मन्त्र : ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृतसंजीवनि विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा ।

नवार्णमन्त्र : ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।

दुर्गागायत्री-मन्त्र : ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि । तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।

माला-प्रार्थना :

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्ति-स्वरूपिणि ! ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।।१।।
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ।।२।।

इति दुर्गातन्त्रं समाप्तम् ।

दकारादि-दुर्गासहस्रनामावली

सङ्कल्पः – साधकः (यजमानो वा) आचम्य प्राणानायम्य, दक्षिणहस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय, अद्येत्याद्युच्चार्य, शुभपुण्यतिथौ अमुकनाम्नो मम सपरिवारस्य सकलपापक्षय-निवृत्तिपूर्वक-दीर्घायुः-पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि-स्थिर-लक्ष्म्यैहिका-ऽऽमुष्मिक-समस्तकामना-सिद्धि-द्वारा धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष-चतुर्विधफलावाप्तये श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं तद्दिव्य-सहस्र-नामावलीभिः पुष्पादि-समर्पणं करिष्ये ।

विनियोगः –ॐ अस्य श्रीदुर्गासहस्रनाममालामन्त्रस्य नारद-ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीदुर्गा देवता, दुं बीजं, ह्रीं शक्ति, दुं कीलकं, श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं रोग-दारिद्र्य-दौर्भाग्य-शोक-दुःख-विनाशार्थे सर्वाशापूरणार्थे च तद्दिव्यसहस्रनामावलीभिः पुष्पादि-द्रव्य-समर्पणे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः –

नारद-ऋषये नमः शिरसि । गायत्री-छन्दसे नमः मुखे ।
श्रीदुर्गादेवतायै नमः हृदये । दुं बीजाय नमः गुह्ये ।
ह्रीं शक्तये नमः पादयोः । ॐ कीलकाय नमः नाभौ ।

षडङ्गन्यासः –

ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, हृदयाय नमः ।
ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै तर्जनीभ्यां स्वाहा शिरसे स्वाहा ।
ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै मध्यमाभ्यां वषट् शिखायै वषट् ।
ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अनामिकाभ्यां हुं कवचाय हुं ।
ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कनिष्ठाभ्यां वौषट् नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्

सिंहस्था शशिशेखरा मरकत-प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
शङ्खं-चक्र-धनुः-शरांश्च दधती: नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला ।।

दकारादि-दुर्गासहस्रनामावली

१. ॐ दुं दुर्गायै नमः
२. ॐ दुर्गतिहरायै नमः
३. ॐ दुर्गाचलनिवासिन्यै नमः
४. ॐ दुर्गमार्गानुसञ्चारायै नमः
५. ॐ दुर्गमार्गनिवासिन्यै नमः
६. ॐ दुर्गमार्गप्रविष्टायै नमः
७. ॐ दुर्गमार्गप्रवेशिन्यै नमः
८. ॐ दुर्गमार्गकृतावासायै नमः
९. ॐ दुर्गमार्गजयप्रियायै नमः
१०. ॐ दुर्गमार्गगृहीतार्चायै नमः
११. ॐ दुर्गमार्गस्थितात्मिकायै नमः
१२. ॐ दुर्गमार्गस्तुतिपरायै नमः
१३. ॐ दुर्गमार्गस्मृतिपरायै नमः
१४. ॐ दुर्गमार्गसदास्थाल्यै नमः
१५. ॐ दुर्गमार्गरतिप्रियायै नमः
१६. ॐ दुर्गमार्गस्थलस्थानायै नमः
१७. ॐ दुर्गमार्गविलासिन्यै नमः
१८. ॐ दुर्गमार्गत्यक्तवस्त्रायै नमः
१९. ॐ दुर्गमार्गप्रवर्तिन्यै नमः
२०. ॐ दुर्गासुरनिहन्त्र्यै नमः
२१. ॐ दुर्गासुरनिषूदिन्यै नमः
२२. ॐ दुर्गासुरहरायै नमः
२३. ॐ दूत्यै नमः
२४. ॐ दुर्गासुरविनाशिन्यै नमः
२५. ॐ दुर्गासुरवधोन्मत्तायै नमः
२६. ॐ दुर्गासुरवधोत्सुकायै नमः
२७. ॐ दुर्गासुरवधोत्साहायै नमः
२८. ॐ दुर्गासुरवधोद्यतायै नमः
२९. ॐ दुर्गासुरवधप्रेप्सवे नमः
३०. ॐ दुर्गासुरमखान्तकृते नमः
३१. ॐ दुर्गासुरध्वंसतोषायै नमः
३२. ॐ दुर्गदानवदारिण्यै नमः
३३. ॐ दुर्गविद्रावणकर्यै नमः
३४. ॐ दुर्गविद्राविण्यै नमः
३५. ॐ दुर्गविक्षोभणकर्यै नमः
३६. ॐ दुर्गशीर्षनिकृन्तिन्यै नमः
३७. ॐ दुर्गविध्वंसनकर्यै नमः
३८. ॐ दुर्गदैत्यनिकृन्तिन्यै नमः
३९. ॐ दुर्गदैत्यप्राणहरायै नमः
४०. ॐ दुर्गदैत्यान्तकारिण्यै नमः
४१. ॐ दुर्गदैत्यहरत्रात्रे नमः
४२. ॐ दुर्गदैत्यासृगुन्मदायै नमः

४३. ॐ दुर्गदैत्याशनकर्यै नमः
४४. ॐ दुर्गचर्माम्बरावृतायै नमः
४५. ॐ दुर्गयुद्धोत्सवकर्यै नमः
४६. ॐ दुर्गयुद्धविशारदायै नमः
४७. ॐ दुर्गयुद्धासवरतायै नमः
४८. ॐ दुर्गयुद्धविमर्दिन्यै नमः
४९. ॐ दुर्गयुद्धहास्यरतायै नमः
५०. ॐ दुर्गयुद्धाट्टहासिन्यै नमः
५१. ॐ दुर्गयुद्धमहामत्तायै नमः
५२. ॐ दुर्गयुद्धानुसारिण्यै नमः
५३. ॐ दुर्गयुद्धोत्सवोत्साहायै नमः
५४. ॐ दुर्गदेशनिषेविण्यै नमः
५५. ॐ दुर्गदेशवासरतायै नमः
५६. ॐ दुर्गदेशविलासिन्यै नमः
५७. ॐ दुर्गदेशार्चनरतायै नमः
५८. ॐ दुर्गदेशजनप्रियायै नमः
५९. ॐ दुर्गमस्थानसंस्थानायै नमः
६०. ॐ दुर्गमध्यानुसाधनायै नमः
६१. ॐ दुर्गमायै नमः
६२. ॐ दुर्गमध्यानायै नमः
६३. ॐ दुर्गमात्मस्वरूपिण्यै नमः
६४. ॐ दुर्गमागमसन्धानायै नमः
६५. ॐ दुर्गमागमसंस्तुतायै नमः
६६. ॐ दुर्गमागमदुर्ज्ञेयायै नमः
६७. ॐ दुर्गमश्रुतिसम्मतायै नमः
६८. ॐ दुर्गमश्रुतिमान्यायै नमः
६९. ॐ दुर्गमश्रुतिपूजितायै नमः
७०. ॐ दुर्गमश्रुतिसुप्रीतायै नमः
७१. ॐ दुर्गमश्रुतिहर्षदायै नमः
७२. ॐ दुर्गमश्रुतिसंस्थानायै नमः
७३. ॐ दुर्गमश्रुतिमानितायै नमः
७४. ॐ दुर्गमाचारसन्तुष्टायै नमः
७५. ॐ दुर्गमाचारतोषितायै नमः
७६. ॐ दुर्गमाचारनिर्वृत्तायै नमः
७७. ॐ दुर्गमाचारपूजितायै नमः
७८. ॐ दुर्गमाचारवशितायै नमः
७९. ॐ दुर्गमस्थानदायिन्यै नमः
८०. ॐ दुर्गमप्रेमनिरतायै नमः
८१. ॐ दुर्गमद्रविणप्रदायै नमः
८२. ॐ दुर्गमाम्बुजमध्यस्थायै नमः
८३. ॐ दुर्गमाम्बुजवासिन्यै नमः
८४. ॐ दुर्गनाडीमार्गगत्यै नमः
८५. ॐ दुर्गनाडीप्रचारिण्यै नमः
८६. ॐ दुर्गनाडीपद्मरतायै नमः
८७. ॐ दुर्गनाड्यम्बुजस्थितायै नमः
८८. ॐ दुर्गनाडीगतायातायै नमः
८९. ॐ दुर्गनाडीकृतास्पदायै नमः
९०. ॐ दुर्गनाडीरतरतायै नमः
९१. ॐ दुर्गनाडीशसंस्तुतायै नमः
९२. ॐ दुर्गनाडीश्वररतायै नमः
९३. ॐ दुर्गनाडीशचुम्बितायै नमः
९४. ॐ दुर्गनाडीशक्रोडस्थायै नमः
९५. ॐ दुर्गनाड्युत्थितोत्सुकायै नमः
९६. ॐ दुर्गनाड्यारोहणायै नमः
९७. ॐ दुर्गनाडीनिषेवितायै नमः
९८. ॐ दरिस्थानायै नमः
९९. ॐ दरिस्थानवासिन्यै नमः
१००. ॐ दनुजान्तकृते नमः

१०१. ॐ दरीकृततपस्यायै नमः
१०२. ॐ दरीकृतहरार्चनायै नमः
१०३. ॐ दरीजापितदिष्टायै नमः
१०४. ॐ दरीकृतरतिक्रियायै नमः
१०५. ॐ दरीकृतहरार्हायै नमः
१०६. ॐ दरीक्रीडितपुत्रिकायै नमः
१०७. ॐ दरीसन्दर्शनरतायै नमः
१०८. ॐ दरीरोदितवृश्चिकायै नमः
१०९. ॐ दरीगुप्तिकौतुकाढ्यायै नमः
११०. ॐ दरीभ्रमणतत्परायै नमः
१११. ॐ दनुजान्तकर्यै नमः
११२. ॐ दीनायै नमः
११३. ॐ दनुसन्तानदारिण्यै नमः
११४. ॐ दनुजध्वंसिन्यै नमः
११५. ॐ दूतायै नमः
११६. ॐ दनुजेन्द्रविनाशिन्यै नमः
११७. ॐ दानवध्वंसिन्यै नमः
११८. ॐ देव्यै नमः
११९. ॐ दानवानां भयङ्कर्यै नमः
१२०. ॐ दानव्यै नमः
१२१. ॐ दानवाराध्यायै नमः
१२२. ॐ दानवेन्द्रवरप्रदायै नमः
१२३. ॐ दानवेन्द्रनिहन्त्र्यै नमः
१२४. ॐ दानवद्वेषिणीसत्यै नमः
१२५. ॐ दानवारिप्रेमरतायै नमः
१२६. ॐ दानवारिप्रपूजितायै नमः
१२७. ॐ दानवारिकृतार्चायै नमः
१२८. ॐ दानवारिभूतिदायै नमः
१२९. ॐ दानवारिमहानन्दायै नमः
१३०. ॐ दानवारिरतिप्रियायै नमः
१३१. ॐ दानवारिदानरतायै नमः
१३२. ॐ दानवारिकृतास्पदायै नमः
१३३. ॐ दानवारिस्तुतिरतायै नमः
१३४. ॐ दानवारिस्मृतिप्रियायै नमः
१३५. ॐ दानवार्याहाररतायै नमः
१३६. ॐ दानवारिप्रबोधिन्यै नमः
१३७. ॐ दानवारिधृतप्रेमायै नमः
१३८. ॐ दुःखशोकविमोचिन्यै नमः
१३९. ॐ दुःखहन्त्र्यै नमः
१४०. ॐ दुःखदात्र्यै नमः
१४१. ॐ दुःखनिर्मूलकारिण्यै नमः
१४२. ॐ दुःखनिर्मूलनकर्यै नमः
१४३. ॐ दुःखदार्यरिनाशिन्यै नमः
१४४. ॐ दुःखहरायै नमः
१४५. ॐ दुःखनाशायै नमः
१४६. ॐ दुःखग्रामायै नमः
१४७. ॐ दुरासदायै नमः
१४८. ॐ दुःखहीनायै नमः
१४९. ॐ दुःखधीरायै नमः
१५०. ॐ द्रविणाचारदायिन्यै नमः
१५१. ॐ द्रविणोत्सर्गसन्तुष्टायै नमः
१५२. ॐ द्रविणत्यागतोषिकायै नमः
१५३. ॐ द्रविणस्पर्शसन्तुष्टायै नमः
१५४. ॐ द्रविणस्पर्शमानदायै नमः
१५५. ॐ द्रविणस्पर्शहर्षाढ्यायै नमः
१५६. ॐ द्रविणस्पर्शतुष्टिदायै नमः
१५७. ॐ द्रविणस्पर्शनकर्यै नमः
१५८. ॐ द्रविणस्पर्शनातुरायै नमः

१५९. ॐ द्रविणस्पर्शनोत्साहायै नमः
१६०. ॐ द्रविणस्पर्शसाधितायै नमः
१६१. ॐ द्रविणस्पर्शनमतायै नमः
१६२. ॐ द्रविणस्पर्शपुत्रिकायै नमः
१६३. ॐ द्रविणस्पर्शरक्षिण्यै नमः
१६४. ॐ द्रविणस्तोमदायिन्यै नमः
१६५. ॐ द्रविणाकर्षणकर्यै नमः
१६६. ॐ द्रविणौघविसर्जिन्यै नमः
१६७. ॐ द्रविणाचलदानाढ्यायै नमः
१६८. ॐ द्रविणाचलवासिन्यै नमः
१६९. ॐ दीनमात्रे नमः
१७०. ॐ दीनबन्धवे नमः
१७१. ॐ दीनविघ्नविनाशिन्यै नमः
१७२. ॐ दीनसेव्यायै नमः
१७३. ॐ दीनसिद्धायै नमः
१७४. ॐ दीनसाध्यायै नमः
१७५. ॐ दिगम्बर्यै नमः
१७६. ॐ दीनगेहकृतानन्दायै नमः
१७७. ॐ दीनगेहविलासिन्यै नमः
१७८. ॐ दीनभावप्रेमरतायै नमः
१७९. ॐ दीनभावविनोदिन्यै नमः
१८०. ॐ दीनमानवचेतःस्थायै नमः
१८१. ॐ दीनमानवहर्षदायै नमः
१८२. ॐ दीनदैन्यविघातेच्छायै नमः
१८३. ॐ दीनद्रविणदायिन्यै नमः
१८४. ॐ दीनसाधनसन्तुष्टायै नमः
१८५. ॐ दीनदर्शनदायिन्यै नमः
१८६. ॐ दीनपुत्रादिदात्र्यै नमः
१८७. ॐ दीनसम्पद्विधायिन्यै नमः
१८८. ॐ दत्तात्रेयध्यानरतायै नमः
१८९. ॐ दत्तात्रेयप्रपूजितायै नमः
१९०. ॐ दत्तात्रेयर्षिसंसिद्धायै नमः
१९१. ॐ दत्तात्रेयविभावितायै नमः
१९२. ॐ दत्तात्रेयकृतार्हायै नमः
१९३. ॐ दत्तात्रेयप्रसाधितायै नमः
१९४. ॐ दत्तात्रेयहर्षदात्र्यै नमः
१९५. ॐ दत्तात्रेयसुखप्रदायै नमः
१९६. ॐ दत्तात्रेयस्तुतायै नमः
१९७. ॐ दत्तात्रेयसदानुतायै नमः
१९८. ॐ दत्तात्रेयप्रेमरतायै नमः
१९९. ॐ दत्तात्रेयानुमानितायै नमः
२००. ॐ दत्तात्रेयसमुद्गीतायै नमः
२०१. ॐ दत्तात्रेयकुटुम्बिन्यै नमः
२०२. ॐ दत्तात्रेयप्राणतुल्यायै नमः
२०३. ॐ दत्तात्रेयशरीरिण्यै नमः
२०४. ॐ दत्तात्रेयकृतानन्दायै नमः
२०५. ॐ दत्तात्रेयांशसम्भवायै नमः
२०६. ॐ दत्तात्रेयविभूतिस्थायै नमः
२०७. ॐ दत्तात्रेयानुसारिण्यै नमः
२०८. ॐ दत्तात्रेयगीतिरतायै नमः
२०९. ॐ दत्तात्रेयधनप्रदायै नमः
२१०. ॐ दत्तात्रेयदुःखहरायै नमः
२११. ॐ दत्तात्रेयवरप्रदायै नमः
२१२. ॐ दत्तात्रेयज्ञानदात्र्यै नमः
२१३. ॐ दत्तात्रेयभयापहायै नमः
२१४. ॐ देवकन्यायै नमः
२१५. ॐ देवमान्यायै नमः
२१६. ॐ देवदुःखविनाशिन्यै नमः

२१७. ॐ देवसिद्धायै नमः
२१८. ॐ देवपूज्यायै नमः
२१९. ॐ देवेज्यायै नमः
२२०. ॐ देववन्दितायै नमः
२२१. ॐ देवमान्यायै नमः
२२२. ॐ देवधन्यायै नमः
२२३. ॐ देवविघ्नविनाशिन्यै नमः
२२४. ॐ देवरम्यायै नमः
२२५. ॐ देवरतायै नमः
२२६. ॐ देवकौतुकतत्परायै नमः
२२७. ॐ देवक्रीडायै नमः
२२८. ॐ देवव्रीडायै नमः
२२९. ॐ देववैरिविनाशिन्यै नमः
२३०. ॐ देवकामायै नमः
२३१. ॐ देवरामायै नमः
२३२. ॐ देवद्विष्टविनाशिन्यै नमः
२३३. ॐ देवदेवप्रियायै नमः
२३४. ॐ देव्यै नमः
२३५. ॐ देवदानववन्दितायै नमः
२३६. ॐ देवदेवरतानन्दायै नमः
२३७. ॐ देवदेववरोत्सुकायै नमः
२३८. ॐ देवदेवप्रेमरतायै नमः
२३९. ॐ देवदेवप्रियम्बदायै नमः
२४०. ॐ देवदेवप्राणतुल्यायै नमः
२४१. ॐ देवदेवनितम्बिन्यै नमः
२४२. ॐ देवदेवहृतमनसे नमः
२४३. ॐ देवदेवसुखावहायै नमः
२४४. ॐ देवदेवक्रीडरतायै नमः
२४५. ॐ देवदेवसुखप्रदायै नमः
२४६. ॐ देवदेवमहानन्दायै नमः
२४७. ॐ देवदेवप्रचुम्बितायै नमः
२४८. ॐ देवदेवोपभुक्तायै नमः
२४९. ॐ देवदेवानुसेवितायै नमः
२५०. ॐ देवदेवगतप्राणायै नमः
२५१. ॐ देवदेवगतात्मिकायै नमः
२५२. ॐ देवदेवहर्षदात्र्यै नमः
२५३. ॐ देवदेवसुखप्रदायै नमः
२५४. ॐ देवदेवमहानन्दायै नमः
२५५. ॐ देवदेवविलासिन्यै नमः
२५६. ॐ देवदेवधर्मपत्न्यै नमः
२५७. ॐ देवदेवमनोगतायै नमः
२५८. ॐ देवदेववध्वे नमः
२५९. ॐ देवदेवार्चनप्रियायै नमः
२६०. ॐ देवदेवाङ्कनिलयायै नमः
२६१. ॐ देवदेवाङ्गशायिन्यै नमः
२६२. ॐ देवदेवाङ्गसुखिन्यै नमः
२६३. ॐ देवदेवाङ्गवासिन्यै नमः
२६४. ॐ देवदेवाङ्कभूषायै नमः
२६५. ॐ देवदेवाङ्गभूषणायै नमः
२६६. ॐ देवदेवप्रियकर्यै नमः
२६७. ॐ देवदेवाप्रियान्तकृते नमः
२६८. ॐ देवदेवप्रियप्राणायै नमः
२६९. ॐ देवदेवप्रियात्मिकायै नमः
२७०. ॐ देवदेवार्चकप्राणायै नमः
२७१. ॐ देवदेवार्चकप्रियायै नमः
२७२. ॐ देवदेवार्चकोत्साहायै नमः
२७३. ॐ देवदेवार्चकप्रियायै नमः
२७४. ॐ देवदेवार्चकाविघ्नायै नमः

२७५. ॐ देवदेवप्रस्वे नमः
२७६. ॐ देवदेवस्य जनन्यै नमः
२७७. ॐ देवदेवविधायिन्यै नमः
२७८. ॐ देवदेवस्य रमण्यै नमः
२७९. ॐ देवदेवहृदाश्रयायै नमः
२८०. ॐ देवदेवेष्टदेव्यै नमः
२८१. ॐ देवतापसपातिन्यै नमः
२८२. ॐ देवताभावसन्तुष्टायै नमः
२८३. ॐ देवताभावतोषितायै नमः
२८४. ॐ देवताभाववरदायै नमः
२८५. ॐ देवताभावसिद्धिदायै नमः
२८६. ॐ देवताभावसंसिद्धायै नमः
२८७. ॐ देवताभावसंभवायै नमः
२८८. ॐ देवताभावसुखिन्यै नमः
२८९. ॐ देवताभाववन्दितायै नमः
२९०. ॐ देवताभावसुप्रीतायै नमः
२९१. ॐ देवताभावहर्षदायै नमः
२९२. ॐ देवताविघ्नहन्त्र्यै नमः
२९३. ॐ देवताद्विष्टनाशिन्यै नमः
२९४. ॐ देवतापूजितपदायै नमः
२९५. ॐ देवताप्रेमतोषितायै नमः
२९६. ॐ देवतागारनिलयायै नमः
२९७. ॐ देवतासौख्यदायिन्यै नमः
२९८. ॐ देवतानिलभावायै नमः
२९९. ॐ देवताहृतमानसायै नमः
३००. ॐ देवताकृतपादार्चायै नमः
३०१. ॐ देवताहृतभक्तिकायै नमः
३०२. ॐ देवतागर्वमध्यस्थायै नमः
३०३. ॐ देवतायै नमः
३०४. ॐ देवतायै नमः
३०५. ॐ दनवे नमः
३०६. ॐ दुं दुर्गायै नमो नाम्न्यै नमः
३०७. ॐ दुं फट् मन्त्रस्वरूपिण्यै नमः
३०८. ॐ दूं नमो मन्त्रस्वरूपायै नमः
३०९. ॐ दूं नमोमूर्त्तिकात्मिकायै नमः
३१०. ॐ दूरदर्शिप्रियायै नमः
३११. ॐ दुष्टाय नमः
३१२. ॐ दुष्टभूतनिषेवितायै नमः
३१३. ॐ दूरदर्शिप्रेमरतायै नमः
३१४. ॐ दूरदर्शिप्रियंवदायै नमः
३१५. ॐ दूरदर्शिसिद्धिदात्र्यै नमः
३१६. ॐ दूरदर्शिप्रतोषितायै नमः
३१७. ॐ दूरदर्शिकण्ठसंस्थायै नमः
३१८. ॐ दूरदर्शिप्रहर्षितायै नमः
३१९. ॐ दूरदर्शिगृहीतार्चायै नमः
३२०. ॐ दूरदर्शिप्रतर्पितायै नमः
३२१. ॐ दूरदर्शिप्राणतुल्यायै नमः
३२२. ॐ दूरदर्शिसुखप्रदायै नमः
३२३. ॐ दूरदर्शिभ्रान्तिहरायै नमः
३२४. ॐ दूरदर्शिहृदास्पदायै नमः
३२५. ॐ दूरदर्श्यरिविद्भावायै नमः
३२६. ॐ दीर्घदर्शिप्रमोदिन्यै नमः
३२७. ॐ दीर्घदर्शिप्राणतुल्यायै नमः
३२८. ॐ दीर्घदर्शिवरप्रदायै नमः
३२९. ॐ दीर्घदर्शिहर्षदात्र्यै नमः
३३०. ॐ दीर्घदर्शिप्रहर्षितायै नमः
३३१. ॐ दीर्घदर्शिमहानन्दायै नमः
३३२. ॐ दीर्घदर्शिगृहालयायै नमः

३३३. ॐ दीर्घदर्शिगृहीतार्चायै नमः
३३४. ॐ दीर्घदर्शिहतार्हणायै नमः
३३५. ॐ दयायै नमः
३३६. ॐ दानवत्यै नमः
३३७. ॐ दात्र्यै नमः
३३८. ॐ दयालवे नमः
३३९. ॐ दीनवत्सलायै नमः
३४०. ॐ दयार्द्रायै नमः
३४१. ॐ दयाशीलायै नमः
३४२. ॐ दयाढ्यायै नमः
३४३. ॐ दयात्मिकायै नमः
३४४. ॐ दयायै नमः
३४५. ॐ दानवत्यै नमः
३४६. ॐ दात्र्यै नमः
३४७. ॐ दयालवे नमः
३४८. ॐ दीनवत्सलायै नमः
३४९. ॐ दयार्द्रायै नमः
३५०. ॐ दयाशीलायै नमः
३५१. ॐ दयाढ्यायै नमः
३५२. ॐ दयात्मिकायै नमः
३५३. ॐ दयाम्बुधये नमः
३५४. ॐ दयासारायै नमः
३५५. ॐ दयासागरपारगायै नमः
३५६. ॐ दयासिन्धवे नमः
३५७. ॐ दयाभारायै नमः
३५८. ॐ दयावत्करुणाकर्यै नमः
३५९. ॐ दयावद्वत्सलायै नमः
३६०. ॐ देव्यै नमः
३६१. ॐ दयायै नमः
३६२. ॐ दानरतायै नमः
३६३. ॐ दयावद्भक्तिसुखिन्यै नमः
३६४. ॐ दयावत्परितोषितायै नमः
३६५. ॐ दयावत्स्नेहनिरतायै नमः
३६६. ॐ दयावत्प्रतिपादिकायै नमः
३६७. ॐ दयावत्प्राणकर्त्र्यै नमः
३६८. ॐ दयावन्मुक्तिदायिन्यै नमः
३६९. ॐ दयावद्भावसन्तुष्टायै नमः
३७०. ॐ दयावत्परितोषितायै नमः
३७१. ॐ दयावत्तारणपरायै नमः
३७२. ॐ दयावत्सिद्धिदायिन्यै नमः
३७३. ॐ दयावत्पुत्रवद्भावायै नमः
३७४. ॐ दयावत्पुत्ररूपिण्यै नमः
३७५. ॐ दयावद्देहनिलयायै नमः
३७६. ॐ दयाबन्धवे नमः
३७७. ॐ दयाश्रयायै नमः
३७८. ॐ दयालुवात्सल्यकर्यै नमः
३७९. ॐ दयालुसिद्धिदायिन्यै नमः
३८०. ॐ दयालुशरणासक्तायै नमः
३८१. ॐ दयालुर्देहमन्दिरायै नमः
३८२. ॐ दयालुभक्तिभावस्थायै नमः
३८३. ॐ दयालुप्राणरूपिण्यै नमः
३८४. ॐ दयालुसुखदायै नमः
३८५. ॐ दम्भायै नमः
३८६. ॐ दयालुप्रेमवर्षिण्यै नमः
३८७. ॐ दयालुवशगायै नमः
३८८. ॐ दीर्घायै नमः
३८९. ॐ दीर्घाङ्ग्यै नमः
३९०. ॐ दीर्घलोचनायै नमः

३९१. ॐ दीर्घनेत्रायै नमः
३९२. ॐ दीर्घचक्षुषे नमः
३९३. ॐ दीर्घबाहुलतात्मिकायै नमः
३९४. ॐ दीर्घकेश्यै नमः
३९५. ॐ दीर्घमुख्यै नमः
३९६. ॐ दीर्घघोणायै नमः
३९७. ॐ दारुणायै नमः
३९८. ॐ दारुणासुरहन्त्र्यै नमः
३९९. ॐ दारुणासुरदारिण्यै नमः
४००. ॐ दारुणाहवकर्त्र्यै नमः
४०१. ॐ दारुणाहवहर्षितायै नमः
४०२. ॐ दारुणाहवहोमाढ्यायै नमः
४०३. ॐ दारुणाचलनाशिन्यै नमः
४०४. ॐ दारुणाचारनिरतायै नमः
४०५. ॐ दारुणोत्सवहर्षितायै नमः
४०६. ॐ दारुणोद्यतरूपायै नमः
४०७. ॐ दारुणारिनिवारिण्यै नमः
४०८. ॐ दारुणेक्षणसंयुक्तायै नमः
४०९. ॐ दोश्चतुष्कविराजितायै नमः
४१०. ॐ दशदोष्कायै नमः
४११. ॐ दशभुजायै नमः
४१२. ॐ दशबाहुविराजितायै नमः
४१३. ॐ दशास्त्रधारिण्यै नमः
४१४. ॐ देव्यै नमः
४१५. ॐ दशदिक्ख्यातविक्रमायै नमः
४१६. ॐ दशरथार्चितपदायै नमः
४१७. ॐ दाशरथिप्रियायै नमः
४१८. ॐ दाशरथिप्रेमतुष्टायै नमः
४१९. ॐ दाशरथिरतिप्रियायै नमः
४२०. ॐ दाशरथिप्रियकर्यै नमः
४२१. ॐ दाशरथिप्रियम्बदायै नमः
४२२. ॐ दाशरथीष्टसंदात्र्यै नमः
४२३. ॐ दाशरथीष्टदेवतायै नमः
४२४. ॐ दाशरथिद्वेषनाशायै नमः
४२५. ॐ दाशरथ्यानुकूल्यदायै नमः
४२६. ॐ दाशरथिप्रियतमायै नमः
४२७. ॐ दाशरथिप्रपूजितायै नमः
४२८. ॐ दशाननारिसम्पूज्यायै नमः
४२९. ॐ दशाननारिदेवतायै नमः
४३०. ॐ दशाननारिप्रमदायै नमः
४३१. ॐ दशाननारिजन्मभूम्यै नमः
४३२. ॐ दशाननारिरतिदायै नमः
४३३. ॐ दशाननारिसेवितायै नमः
४३४. ॐ दशाननारिसुखदायै नमः
४३५. ॐ दशाननारिवैरिहृते नमः
४३६. ॐ दशाननारीष्टदेव्यै नमः
४३७. ॐ दशग्रीवारिवन्दितायै नमः
४३८. ॐ दशग्रीवारिजनन्यै नमः
४३९. ॐ दशग्रीवारिभाविन्यै नमः
४४०. ॐ दशग्रीवारिसहितायै नमः
४४१. ॐ दशग्रीवसभाजितायै नमः
४४२. ॐ दशग्रीवारिरमण्यै नमः
४४३. ॐ दशग्रीववध्वे नमः
४४४. ॐ दशग्रीवनाशकर्त्र्यै नमः
४४५. ॐ दशग्रीववरप्रदायै नमः
४४६. ॐ दशग्रीवपुरस्थायै नमः
४४७. ॐ दशग्रीववधोत्सुकायै नमः
४४८. ॐ दशग्रीवप्रीतिदात्र्यै नमः

४४९. ॐ दशग्रीवविनाशिन्यै नमः
४५०. ॐ दशग्रीवावहकर्यै नमः
४५१. ॐ दशग्रीवानपायिन्यै नमः
४५२. ॐ दशग्रीवप्रियावन्द्यायै नमः
४५३. ॐ दशग्रीवहृतायै नमः
४५४. ॐ दशग्रीवाहितकर्यै नमः
४५५. ॐ दशग्रीवेश्वरप्रियायै नमः
४५६. ॐ दशग्रीवेश्वरप्राणायै नमः
४५७. ॐ दशग्रीवेश्वरप्रदायै नमः
४५८. ॐ दशग्रीवेश्वररतायै नमः
४५९. ॐ दशवर्षीयकन्यकायै नमः
४६०. ॐ दशवर्षीयबालायै नमः
४६१. ॐ दशवर्षीयवासिन्यै नमः
४६२. ॐ दशपापहरायै नमः
४६३. ॐ दम्यायै नमः
४६४. ॐ दशहस्तविभूषितायै नमः
४६५. ॐ दशशस्त्रलसद्दोष्कायै नमः
४६६. ॐ दशदिक्पालवन्दितायै नमः
४६७. ॐ दशावताररूपायै नमः
४६८. ॐ दशावताररूपिण्यै नमः
४६९. ॐ दशविद्याभिन्नदेव्यै नमः
४७०. ॐ दशप्राणस्वरूपिण्यै नमः
४७१. ॐ दशविद्यास्वरूपाय नमः
४७२. ॐ दशविद्यामय्यै नमः
४७३. ॐ दृक्स्वरूपायै नमः
४७४. ॐ दृक्प्रदात्र्यै नमः
४७५. ॐ दृग्रूपायै नमः
४७६. ॐ दृक्प्रकाशिन्यै नमः
४७७. ॐ दिगन्तरायै नमः
४७८. ॐ दिगन्तस्थायै नमः
४७९. ॐ दिगम्बरविलासिन्यै नमः
४८०. ॐ दिगम्बरसमाजस्थायै नमः
४८१. ॐ दिगम्बरप्रपूजितायै नमः
४८२. ॐ दिगम्बरसहचर्यै नमः
४८३. ॐ दिगम्बरकृतास्पदायै नमः
४८४. ॐ दिगम्बरहृताचित्तायै नमः
४८५. ॐ दिगम्बरकथाप्रियायै नमः
४८६. ॐ दिगम्बरगुणरतायै नमः
४८७. ॐ दिगम्बरस्वरूपिण्यै नमः
४८८. ॐ दिगम्बरशिरोधार्यायै नमः
४८९. ॐ दिगम्बरहृताश्रयायै नमः
४९०. ॐ दिगम्बरप्रेमरतायै नमः
४९१. ॐ दिगम्बररतातुरायै नमः
४९२. ॐ दिगम्बरीस्वरूपायै नमः
४९३. ॐ दिगम्बरीगणार्चितायै नमः
४९४. ॐ दिगम्बरीगणप्राणायै नमः
४९५. ॐ दिगम्बरीगणप्रियायै नमः
४९६. ॐ दिगम्बरीगणाराध्यायै नमः
४९७. ॐ दिगम्बरगणेश्वर्यै नमः
४९८. ॐ दिगम्बरगणस्पर्शमदिरा-
पानविह्वलायै नमः
४९९. ॐ दिगम्बरीकोटिवृतायै नमः
५००. ॐ दिगम्बरीगणवृतायै नमः
५०१. ॐ दुरन्तायै नमः
५०२. ॐ दुष्कृतिहरायै नमः
५०३. ॐ दुर्ध्येयायै नमः
५०४. ॐ दुरतिक्रमायै नमः
५०५. ॐ दुरन्तदानवद्वेष्ट्र्यै नमः

५०६. ॐ दुरन्तदनुजान्तकृते नमः
५०७. ॐ दुरन्तपापहन्त्र्यै नमः
५०८. ॐ दस्रनिस्तारकारिण्यै नमः
५०९. ॐ दस्रमानससंस्थानायै नमः
५१०. ॐ दस्रज्ञानविवर्धिन्यै नमः
५११. ॐ दस्रसंभोगजन्यै नमः
५१२. ॐ दस्रसंभोगदायिन्यै नमः
५१३. ॐ दस्रसंभोगभवनायै नमः
५१४. ॐ दस्रविद्याविधायिन्यै नमः
५१५. ॐ दस्रोद्वेगहरायै नमः
५१६. ॐ दस्रजनन्यै नमः
५१७. ॐ दस्रसुन्दर्यै नमः
५१८. ॐ दस्रभक्तिविद्याज्ञानायै नमः
५१९. ॐ दस्रद्विष्टविनाशिन्यै नमः
५२०. ॐ दस्रापकारदमन्यै नमः
५२१. ॐ दस्रसिद्धिविधायिन्यै नमः
५२२. ॐ दस्रताराराधितायै नमः
५२३. ॐ दस्रमातृप्रपूजितायै नमः
५२४. ॐ दस्रदैन्यहरायै नमः
५२५. ॐ दस्रताततनिषेवितायै नमः
५२६. ॐ दस्रपितृशतज्योतिषे नमः
५२७. ॐ दस्रकौशलदायिन्यै नमः
५२८. ॐ दशशीर्षारिसहितायै नमः
५२९. ॐ दशशीर्षारिकामिन्यै नमः
५३०. ॐ दशशीर्षपुर्यै नमः
५३१. ॐ देव्यै नमः
५३२. ॐ दशशीर्षसभाजितायै नमः
५३३. ॐ दशशीर्षारिसुप्रीतायै नमः
५३४. ॐ दशशीर्षवधूप्रियायै नमः
५३५. ॐ दशशीर्षशिरश्छेत्र्यै नमः
५३६. ॐ दशशीर्षनितम्बिन्यै नमः
५३७. ॐ दशशीर्षहरप्राणायै नमः
५३८. ॐ दशशीर्षहरात्मिकायै नमः
५३९. ॐ दशशीर्षहराराध्यायै नमः
५४०. ॐ दशशीर्षारिवन्दितायै नमः
५४१. ॐ दशशीर्षारिसुखदायै नमः
५४२. ॐ दशशीर्षकपालिन्यै नमः
५४३. ॐ दशशीर्षज्ञानदात्र्यै नमः
५४४. ॐ दशशीर्षारिदेहिन्यै नमः
५४५. ॐ दशशीर्षवधोपात्तश्रीराम-
चन्द्ररूपतायै नमः
५४६. ॐ दशशीर्षराष्ट्रदेव्यै नमः
५४७. ॐ दशशीर्षारिसारिण्यै नमः
५४८. ॐ दशशीर्षभ्रातृतुष्टायै नमः
५४९. ॐ दशशीर्षवधूप्रियायै नमः
५५०. ॐ दशशीर्षवधूप्राणायै नमः
५५१. ॐ दशशीर्षवधूरतायै नमः
५५२. ॐ दैत्यगुरुरतासाध्व्यै नमः
५५३. ॐ दैत्यगुरुप्रपूजितायै नमः
५५४. ॐ दैत्यगुरूपदेष्ट्र्यै नमः
५५५. ॐ दैत्यगुरुनिषेवितायै नमः
५५६. ॐ दैत्यगुरुमतप्राणायै नमः
५५७. ॐ दैत्यगुरुतापनाशिन्यै नमः
५५८. ॐ दुरन्तदुःखशमन्यै नमः
५५९. ॐ दुरन्तदमनीतम्यै नमः
५६०. ॐ दुरन्तशोकशमन्यै नमः
५६१. ॐ दुरन्तरोगनाशिन्यै नमः
५६२. ॐ दुरन्तवैरिदमन्यै नमः

५६३. ॐ दुरन्तदैत्यनाशिन्यै नमः
५६४. ॐ दुरन्तकलुषघ्न्यै नमः
५६५. ॐ दुष्कृतिस्तोमनाशिन्यै नमः
५६६. ॐ दुराशयायै नमः
५६७. ॐ दुराधारायै नमः
५६८. ॐ दुर्जयायै नमः
५६९. ॐ दुष्टकामिन्यै नमः
५७०. ॐ दर्शनीयायै नमः
५७१. ॐ दृश्यायै नमः
५७२. ॐ अदृश्यायै नमः
५७३. ॐ दृष्टिगोचरायै नमः
५७४. ॐ दूतीयागप्रियायै नमः
५७५. ॐ दूत्यै नमः
५७६. ॐ दूतीयागकरप्रियायै नमः
५७७. ॐ दूतीयागकरानन्दायै नमः
५७८. ॐ दूतीयागसुखप्रदायै नमः
५७९. ॐ दूतीयागकरायातायै नमः
५८०. ॐ दूतीयागप्रमोदिन्यै नमः
५८१. ॐ दुर्वासःपूजितायै नमः
५८२. ॐ दुर्वासोमुनिभावितायै नमः
५८३. ॐ दुर्वासोऽर्चितपादायै नमः
५८४. ॐ दुर्वासोमौनभावितायै नमः
५८५. ॐ दुर्वासोमुनिवन्द्यायै नमः
५८६. ॐ दुर्वासोमुनिदेवतायै नमः
५८७. ॐ दुर्वासोमुनिमात्रे नमः
५८८. ॐ दुर्वासोमुनिसिद्धिदायै नमः
५८९. ॐ दुर्वासोमुनिभावस्थायै नमः
५९०. ॐ दुर्वासोमुनिसेवितायै नमः
५९१. ॐ दुर्वासोमुनिचित्तस्थायै नमः
५९२. ॐ दुर्वासोमुनिमण्डितायै नमः
५९३. ॐ दुर्वासोमुनिसञ्चारायै नमः
५९४. ॐ दुर्वासोहृदयङ्गमायै नमः
५९५. ॐ दुर्वासोहृदयाराध्यै नमः
५९६. ॐ दुर्वासोहृत्सरोजगायै नमः
५९७. ॐ दुर्वासस्तापसाराध्यायै नमः
५९८. ॐ दुर्वासस्तापसाश्रयायै नमः
५९९. ॐ दुर्वासस्तापसरतायै नमः
६००. ॐ दुर्वासस्तापसेश्वर्यै नमः
६०१. ॐ दुर्वासोमुनिकन्यायै नमः
६०२. ॐ दुर्वासोऽद्भुतसिद्धिदायै नमः
६०३. ॐ दररात्र्यै नमः
६०४. ॐ दरहरायै नमः
६०५. ॐ दरयुक्तायै नमः
६०६. ॐ दरापहायै नमः
६०७. ॐ दरघ्न्यै नमः
६०८. ॐ दरहन्त्र्यै नमः
६०९. ॐ दरयुक्तायै नमः
६१०. ॐ दराश्रयायै नमः
६११. ॐ दरस्मेरायै नमः
६१२. ॐ दरापाङ्ग्यै नमः
६१३. ॐ दयादात्र्यै नमः
६१४. ॐ दयाश्रयायै नमः
६१५. ॐ दस्रपूज्यायै नमः
६१६. ॐ दस्रमात्रे नमः
६१७. ॐ दस्रदेव्यै नमः
६१८. ॐ दुरोन्मदायै नमः
६१९. ॐ दस्रसिद्धायै नमः
६२०. ॐ दस्रसंस्थायै नमः

६२१. ॐ दस्रतापविमोचिन्यै नमः
६२२. ॐ दस्रक्षोभहरानित्यायै नमः
६२३. ॐ दस्रलोकगतात्मिकायै नमः
६२४. ॐ दैत्यगुर्वङ्गनावन्द्यायै नमः
६२५. ॐ दैत्यगुर्वङ्गनाप्रियायै नमः
६२६. ॐ दैत्यगुर्वङ्गनासिद्धायै नमः
६२७. ॐ दैत्यगुर्वङ्गनोत्सुकायै नमः
६२८. ॐ दैत्यगुरुप्रियतमायै नमः
६२९. ॐ देवगुरुनिषेवितायै नमः
६३०. ॐ देवगुरुप्रसूरूपायै नमः
६३१. ॐ देवगुरुकृतार्हणायै नमः
६३२. ॐ देवगुरुप्रेमयुतायै नमः
६३३. ॐ देवगुर्वनुमानितायै नमः
६३४. ॐ देवगुरुप्रभावज्ञायै नमः
६३५. ॐ देवगुरुसुखप्रदायै नमः
६३६. ॐ देवगुरुज्ञानदात्र्यै नमः
६३७. ॐ देवगुरुप्रमोदिन्यै नमः
६३८. ॐ दैत्यस्त्रीगणसम्पूज्यायै नमः
६३९. ॐ दैत्यस्त्रीगणपूजितायै नमः
६४०. ॐ दैत्यस्त्रीगणरूपायै नमः
६४१. ॐ दैत्यस्त्रीचित्तहारिण्यै नमः
६४२. ॐ देवस्त्रीगणपूज्यायै नमः
६४३. ॐ देवस्त्रीगणवन्दितायै नमः
६४४. ॐ देवस्त्रीगणचित्तस्थायै नमः
६४५. ॐ देवस्त्रीगणभूषितायै नमः
६४६. ॐ देवस्त्रीगणसंसिद्धायै नमः
६४७. ॐ देवस्त्रीगणतोषितायै नमः
६४८. ॐ देवस्त्रीगणहस्तस्थचारु-
चामरवीजितायै नमः
६४९. ॐ देवस्त्रीगणहस्तस्थचारुगन्ध-
विलेपितायै नमः
६५०. ॐ देवाङ्गनाधृतादर्शदृष्ट्यर्थ-
मुखचन्द्रमायै नमः
६५१. ॐ देवाङ्गनोत्सृष्टनागवल्ली-
दलकृतोस्तुकायै नमः
६५२. ॐ देवस्त्रीगणहस्तस्थदीप-
मालाविलोकनायै नमः
६५३. ॐ देवस्त्रीगणहस्तस्थधूप-
घ्राणविनोदिन्यै नमः
६५४. ॐ देवनारीकरगतवासकासव-
पायिन्यै नमः
६५५. ॐ देवनारीकङ्कतिकाकृतकेश-
निर्मार्यनायै नमः
६५६. ॐ देवनारीसेव्यगात्रायै नमः
६५७. ॐ देवनारीकृतोत्सुकायै नमः
६५८. ॐ देवनारीविरचितपुष्पमाला-
विराजितायै नमः
६५९. ॐ देवनारीविचित्राङ्ग्यै नमः
६६०. ॐ देवस्त्रीदत्तभोजनायै नमः
६६१. ॐ देवस्त्रीगणगीतायै नमः
६६२. ॐ देवस्त्रीगीतसोत्सुकायै नमः
६६३. ॐ देवस्त्रीनृत्यसुखिन्यै नमः
६६४. ॐ देवस्त्रीनृत्यदर्शिन्यै नमः
६६५. ॐ देवस्त्रीयोजितलसद्रत्नपाद-
पदाम्बुजायै नमः
६६६. ॐ देवस्त्रीगणविस्तीर्णचारु-
तल्पनिषेदुष्यै नमः

६६७. ॐ देवनारी-चारुकराकलिता-
ङ्घ्र्यादिदेहिकायै नमः
६६८. ॐ देवनारीकरव्यग्रतालवृन्द-
मरुत्सुकायै नमः
६६९. ॐ देवनारीवेणुवीणानाद-
सोत्कण्ठमानसायै नमः
६७०. ॐ देवकोटिस्तुतिनुतायै नमः
६७१. ॐ देवकोटिकृतार्हणायै नमः
६७२. ॐ देवकोटिगीतगुणायै नमः
६७३. ॐ देवकोटिकृतस्तुत्यै नमः
६७४. ॐ दन्तदष्ट्योद्वेगफलायै नमः
६७५. ॐ देवकोलाहलाकुलायै नमः
६७६. ॐ द्वेषरागपरित्यक्तायै नमः
६७७. ॐ द्वेषरागविवर्जितायै नमः
६७८. ॐ दामपूज्यायै नमः
६७९. ॐ दामभूषायै नमः
६८०. ॐ दामोदरविलाशिन्यै नमः
६८१. ॐ दामोदरप्रेमरतायै नमः
६८२. ॐ दामोदरभगिन्यै नमः
६८३. ॐ दामोदरप्रस्वे नमः
६८४. ॐ दामोदरपत्न्यै नमः
६८५. ॐ दामोदरपतिव्रतायै नमः
६८६. ॐ दामोदराऽभिन्नदेहायै नमः
६८७. ॐ दामोदररतिप्रियायै नमः
६८८. ॐ दामोदराऽभिन्नतनवे नमः
६८९. ॐ दामोदरकृतास्पदायै नमः
६९०. ॐ दामोदरकृतप्राणायै नमः
६९१. ॐ दामोदरगतात्मिकायै नमः
६९२. ॐ दामोदरकौतुकाढ्यायै नमः
६९३. ॐ दामोदरकलाकलायै नमः
६९४. ॐ दामोदरालिङ्गिताङ्ग्यै नमः
६९५. ॐ दामोदरकुतूहलायै नमः
६९६. ॐ दामोदरकृताह्लादायै नमः
६९७. ॐ दामोदरसुचुंबितायै नमः
६९८. ॐ दामोदरसुताकृष्टायै नमः
६९९. ॐ दामोदरसुखप्रदायै नमः
७००. ॐ दामोदरसहाढ्यायै नमः
७०१. ॐ दामोदरसहायिन्यै नमः
७०२. ॐ दामोदरगुणज्ञायै नमः
७०३. ॐ दामोदरवरप्रदायै नमः
७०४. ॐ दामोदरानुकूलायै नमः
७०५. ॐ दामोदरनितम्बिन्यै नमः
७०६. ॐ दामोदरजलक्रीडा-
कुशलायै नमः
७०७. ॐ दर्शनप्रियायै नमः
७०८. ॐ दामोदरजलक्रीडात्यक्तस्व-
जनसौत्हृदयायै नमः
७०९. ॐ दामोदरलसद्रासकेलि-
कौतुकिन्यै नमः
७१०. ॐ दामोदरभ्रातृकायै नमः
७११. ॐ दामोदरपरायणायै नमः
७१२. ॐ दामोदरधरायै नमः
७१३. ॐ दामोदरवैरिविनाशिन्यै नमः
७१४. ॐ दामोदरोपजायायै नमः
७१५. ॐ दामोदरनिमन्त्रितायै नमः
७१६. ॐ दामोदरपराभूतायै नमः
७१७. ॐ दामोदरपराजितायै नमः
७१८. ॐ दामोदरसमाक्रान्तायै नमः

७१९. ॐ दामोदरहताशुभायै नमः
७२०. ॐ दामोदरोत्सवरतायै नमः
७२१. ॐ दामोदरोत्सवावहायै नमः
७२२. ॐ दामोदरस्तन्यदात्र्यै नमः
७२३. ॐ दामोदरगवेषितायै नमः
७२४. ॐ दमयन्तीसिद्धिदात्र्यै नमः
७२५. ॐ दमयन्तीप्रसाधितायै नमः
७२६. ॐ दमयन्तीष्टदेव्यै नमः
७२७. ॐ दमयन्तीस्वरूपिण्यै नमः
७२८. ॐ दमयन्तीकृतार्चायै नमः
७२९. ॐ दमनर्षिविभावितायै नमः
७३०. ॐ दमनर्षिप्राणतुल्यायै नमः
७३१. ॐ दमनर्षिस्वरूपिण्यै नमः
७३२. ॐ दमनर्षिस्वरूपायै नमः
७३३. ॐ दम्भपूरितविग्रहायै नमः
७३४. ॐ दम्भहन्त्र्यै नमः
७३५. ॐ दम्भदात्र्यै नमः
७३६. ॐ दम्भलोकविमोहिन्यै नमः
७३७. ॐ दम्भशीलायै नमः
७३८. ॐ दम्भहरायै नमः
७३९. ॐ दम्भवत्परिमर्दिन्यै नमः
७४०. ॐ दम्भरूपायै नमः
७४१. ॐ दम्भकर्यै नमः
७४२. ॐ दम्भसन्तानदारिण्यै नमः
७४३. ॐ दत्तमोक्षायै नमः
७४४. ॐ दत्तधनायै नमः
७४५. ॐ दत्तारोग्यायै नमः
७४६. ॐ दाम्भिकायै नमः
७४७. ॐ दत्तपुत्रायै नमः
७४८. ॐ दत्तदारायै नमः
७४९. ॐ दत्तहारायै नमः
७५०. ॐ दारिकायै नमः
७५१. ॐ दत्तभोगायै नमः
७५२. ॐ दत्तकोशायै नमः
७५३. ॐ दत्तहस्त्यादिवाहनायै नमः
७५४. ॐ दत्तमत्यै नमः
७५५. ॐ दत्तभार्यायै नमः
७५६. ॐ दत्तशास्त्रावबोधिकायै नमः
७५७. ॐ दत्तपानायै नमः
७५८. ॐ दत्तदानायै नमः
७५९. ॐ दत्तदारिद्र्यनाशिन्यै नमः
७६०. ॐ दत्तसौधावनीवासायै नमः
७६१. ॐ दत्तस्वर्गायै नमः
७६२. ॐ दासदायै नमः
७६३. ॐ दास्यतुष्टायै नमः
७६४. ॐ दास्यहरायै नमः
७६५. ॐ दासदासीशतप्रदायै नमः
७६६. ॐ दाररूपायै नमः
७६७. ॐ दारवासायै नमः
७६८. ॐ दारवासिहृदास्पदायै नमः
७६९. ॐ दारवासिजनाराध्यायै नमः
७७०. ॐ दारवासिजनप्रियायै नमः
७७१. ॐ दारवासिविनिर्मितायै नमः
७७२. ॐ दारवासिसमर्चितायै नमः
७७३. ॐ दारवास्याहृतप्राणायै नमः
७७४. ॐ दारवास्यरिनाशिन्यै नमः
७७५. ॐ दारवासिविघ्नहरायै नमः
७७६. ॐ दारवासिविमुक्तिदायै नमः

७७७. ॐ दाराग्निरूपिण्यै नमः
७७८. ॐ दारायै नमः
७७९. ॐ दारकार्यरिनाशिन्यै नमः
७८०. ॐ दम्पत्यै नमः
७८१. ॐ दम्पतीष्टायै नमः
७८२. ॐ दम्पतीप्राणरूपिकायै नमः
७८३. ॐ दम्पतीस्नेहनिरतायै नमः
७८४. ॐ दाम्पत्यसाधनप्रियायै नमः
७८५. ॐ दाम्पत्यसुखसेनायै नमः
७८६. ॐ दाम्पत्यसुखदायिन्यै नमः
७८७. ॐ दाम्पत्याचारनिरतायै नमः
७८८. ॐ दाम्पत्यामोदमोदितायै नमः
७८९. ॐ दाम्पत्यामोदसुखिन्यै नमः
७९०. ॐ दाम्पत्याह्लादकारिण्यै नमः
७९१. ॐ दम्पतीष्टपादपद्मायै नमः
७९२. ॐ दाम्पत्यप्रेमरूपिण्यै नमः
७९३. ॐ दाम्पंत्यभोगभवनायै नमः
७९४. ॐ दाडिमीफलभोजिन्यै नमः
७९५. ॐ दाडिमीफलसंतुष्टायै नमः
७९६. ॐ दाडिमीफलमानसायै नमः
७९७. ॐ दाडिमीवृक्षसंस्थानायै नमः
७९८. ॐ दाडिमीवृक्षवासिन्यै नमः
७९९. ॐ दाडिमीवृक्षरूपायै नमः
८००. ॐ दाडिमीवनवासिन्यै नमः
८०१. ॐ दाडिमीफलसाम्योरु-
पयोधरसमन्वितायै नमः
८०२. ॐ दक्षिणायै नमः
८०३. ॐ दक्षिणारूपायै नमः
८०४. ॐ दक्षिणारूपधारिण्यै नमः
८०५. ॐ दक्षकन्यायै नमः
८०६. ॐ दक्षपुत्र्यै नमः
८०७. ॐ दक्षमात्रे नमः
८०८. ॐ दक्षस्वे नमः
८०९. ॐ दक्षगोत्रायै नमः
८१०. ॐ दक्षसुतायै नमः
८११. ॐ दक्षयज्ञविनाशिन्यै नमः
८१२. ॐ दक्षयज्ञनाशकर्त्र्यै नमः
८१३. ॐ दक्षयज्ञान्तकारिण्यै नमः
८१४. ॐ दक्षप्रसूत्यै नमः
८१५. ॐ दक्षेज्यायै नमः
८१६. ॐ दक्षवंशैकपावन्यै नमः
८१७. ॐ दक्षात्मजायै नमः
८१८. ॐ दक्षसूनवे नमः
८१९. ॐ दक्षजायै नमः
८२०. ॐ दक्षजातिकायै नमः
८२१. ॐ दक्षजन्मने नमः
८२२. ॐ दक्षजनुषे नमः
८२३. ॐ दक्षदेहसमुद्भवायै नमः
८२४. ॐ दक्षजनुषे नमः
८२५. ॐ दक्षयागध्वंसिन्यै नमः
८२६. ॐ दक्षकन्यकायै नमः
८२७. ॐ दक्षिणाचारनिरतायै नमः
८२८. ॐ दक्षिणाचारतुष्टिदायै नमः
८२९. ॐ दक्षिणाचारसंसिद्धायै नमः
८३०. ॐ दक्षिणाचारभावितायै नमः
८३१. ॐ दक्षिणाचारसुखिन्यै नमः
८३२. ॐ दक्षिणाचारसाधितायै नमः
८३३. ॐ दक्षिणाचारमोक्षाप्त्यै नमः

८३४. ॐ दक्षिणाचारवन्दितायै नमः
८३५. ॐ दक्षिणाचारशरणायै नमः
८३६. ॐ दक्षिणाचारहर्षितायै नमः
८३७. ॐ द्वारपालप्रियायै नमः
८३८. ॐ द्वारवासिन्यै नमः
८३९. ॐ द्वारसंस्थितायै नमः
८४०. ॐ द्वाररूपायै नमः
८४१. ॐ द्वारसंस्थायै नमः
८४२. ॐ द्वारदेशनिवासिन्यै नमः
८४३. ॐ द्वारकर्यै नमः
८४४. ॐ द्वारधात्र्यै नमः
८४५. ॐ दोषमात्रविवर्जितायै नमः
८४६. ॐ दोषकरायै नमः
८४७. ॐ दोषहरायै नमः
८४८. ॐ दोषराशिविनाशिन्यै नमः
८४९. ॐ दोषाकरविभूषाढ्यायै नमः
८५०. ॐ दोषाकरकपालिन्यै नमः
८५१. ॐ दोषाकरसहस्राभायै नमः
८५२. ॐ दोषाकरसमाननायै नमः
८५३. ॐ दोषाकरमुख्यै नमः
८५४. ॐ दिव्यायै नमः
८५५. ॐ दोषाकरकराग्रजायै नमः
८५६. ॐ दोषाकरसमज्योतिषे नमः
८५७. ॐ दोषाकरसुशीतलायै नमः
८५८. ॐ दोषाकरश्रेण्यै नमः
८५९. ॐ दोषसदृशापाङ्गवीक्षणायै नमः
८६०. ॐ दोषाकरेष्टदेव्यै नमः
८६१. ॐ दोषाकरनिषेवितायै नमः
८६२. ॐ दोषाकरप्राणरूपायै नमः
८६३. ॐ दोषाकरमरीचिकायै नमः
८६४. ॐ दोषाकरोल्लसद्भालायै नमः
८६५. ॐ दोषाकरसुहर्षिण्यै नमः
८६६. ॐ दोषाकरशिरोभूषायै नमः
८६७. ॐ दोषाकरवधूप्रियायै नमः
८६८. ॐ दोषाकरवधूप्राणायै नमः
८६९. ॐ दोषाकरवधूमतायै नमः
८७०. ॐ दोषाकरवधूप्रीतायै नमः
८७१. ॐ दोषाकरवध्वै नमः
८७२. ॐ दोषापूज्यायै नमः
८७३. ॐ दोषापूजितायै नमः
८७४. ॐ दोषहारिण्यै नमः
८७५. ॐ दोषाजापमहानन्दायै नमः
८७६. ॐ दोषाजापपरायणायै नमः
८७७. ॐ दोषापुरश्चाररतायै नमः
८७८. ॐ दोषापूजकपुत्रिण्यै नमः
८७९. ॐ दोषापूजकवात्सल्यकारिणी-जगदम्बिकायै नमः
८८०. ॐ दोषापूजकवैरिघ्न्यै नमः
८८१. ॐ दोषापूजकविघ्नहृते नमः
८८२. ॐ दोषापूजकसन्तुष्टायै नमः
८८३. ॐ दोषापूजकमुक्तिदायै नमः
८८४. ॐ दमप्रसूनसम्पूज्यायै नमः
८८५. ॐ दमपुष्पप्रियायै नमः
८८६. ॐ दुर्योधनप्रपूज्यायै नमः
८८७. ॐ दुःशासनसमर्चितायै नमः
८८८. ॐ दण्डपाणिप्रियायै नमः

८८९. ॐ दण्डपाणिमात्रे नमः
८९०. ॐ दयानिधये नमः
८९१. ॐ दण्डपाणिसमाराध्यायै नमः
८९२. ॐ दण्डपाणिप्रपूजितायै नमः
८९३. ॐ दण्डपाणिगृहासक्तायै नमः
८९४. ॐ दण्डपाणिप्रियंवदायै नमः
८९५. ॐ दण्डपाणिप्रियतमायै नमः
८९६. ॐ दण्डपाणिमनोहरायै नमः
८९७. ॐ दण्डपाणिहृतप्राणायै नमः
८९८. ॐ दण्डपाणिसुसिद्धिदायै नमः
८९९. ॐ दण्डपाणिपरामृष्टायै नमः
९००. ॐ दण्डपाणिप्रहर्षितायै नमः
९०१. ॐ दण्डपाणिविघ्नहरायै नमः
९०२. ॐ दण्डपाणिशिरोधृतायै नमः
९०३. ॐ दण्डपाणिप्राप्तचर्यायै नमः
९०४. ॐ दण्डपाण्युन्मुख्यै नमः
९०५. ॐ दण्डपाणिप्राप्तपदायै नमः
९०६. ॐ दण्डपाणिवरोन्मुख्यै नमः
९०७. ॐ दण्डहस्तायै नमः
९०८. ॐ दण्डपाण्यै नमः
९०९. ॐ दण्डबाहवे नमः
९१०. ॐ दरान्तकृते नमः
९११. ॐ दण्डदोष्कायै नमः
९१२. ॐ दण्डकरायै नमः
९१३. ॐ दण्डचित्तकृतास्पदायै नमः
९१४. ॐ दण्डविद्यायै नमः
९१५. ॐ दण्डिमात्रे नमः
९१६. ॐ दण्डिखण्डकनाशिन्यै नमः
९१७. ॐ दण्डिप्रियायै नमः
९१८. ॐ दण्डिपूज्यायै नमः
९१९. ॐ दण्डिसन्तोषदायिन्यै नमः
९२०. ॐ दस्युपूज्यायै नमः
९२१. ॐ दस्युरतायै नमः
९२२. ॐ दस्युद्रविणदायिन्यै नमः
९२३. ॐ दस्युवर्गकृतार्हायै नमः
९२४. ॐ दस्युवर्गविनाशिन्यै नमः
९२५. ॐ दस्युनिर्णाशिन्यै नमः
९२६. ॐ दस्युकुलनिर्णाशिन्यै नमः
९२७. ॐ दस्युप्रियकर्यै नमः
९२८. ॐ दस्युनृत्यदर्शनतत्परायै नमः
९२९. ॐ दुष्टदण्डकर्यैनमः
९३०. ॐ दुष्टवर्गविद्राविण्यै नमः
९३१. ॐ दुष्टवर्गनिग्रहार्हायै नमः
९३२. ॐ दूषकप्राणनाशिन्यै नमः
९३३. ॐ दूषकोत्तापजनन्यै नमः
९३४. ॐ दूषकारिष्टकारिण्यै नमः
९३५. ॐ दूषकद्वेषणकर्यै नमः
९३६. ॐ दाहिकायै नमः
९३७. ॐ दहनात्मिकायै नमः
९३८. ॐ दारुकारिनिहन्त्र्यै नमः
९३९. ॐ दारुकेश्वरपूजितायै नमः
९४०. ॐ दारुकेश्वरमात्रे नमः
९४१. ॐ दारुकेश्वरवन्दितायै नमः
९४२. ॐ दर्भहस्तायै नमः
९४३. ॐ दर्भयुतायै नमः
९४४. ॐ दर्भकर्मविवर्जितायै नमः
९४५. ॐ दर्भमय्यै नमः
९४६. ॐ दर्भतनवे नमः

९४७. ॐ दर्भसर्वस्वरूपिण्यै नमः
९४८. ॐ दर्भकर्माचाररतायै नमः
९४९. ॐ दर्भहस्तकृतार्हणायै नमः
९५०. ॐ दर्भानुकूलायै नमः
९५१. ॐ दाम्भर्यायै नमः
९५२. ॐ दर्वीपात्रानुदामिन्यै नमः
९५३. ॐ दमघोषप्रपूज्यायै नमः
९५४. ॐ दमघोषवरदायै नमः
९५५. ॐ दमघोषसमाराध्यायै नमः
९५६. ॐ दावाग्निरूपिण्यै नमः
९५७. ॐ दावाग्निरूपायै नमः
९५८. ॐ दावाग्निनिर्णाशित-महाबलायै नमः
९५९. ॐ दन्तदंष्ट्रासुरकलायै नमः
९६०. ॐ दन्तचर्चितहस्तिकायै नमः
९६१. ॐ दन्तदंष्ट्रस्यन्दनायै नमः
९६२. ॐ दन्तनिर्णाशितासुरायै नमः
९६३. ॐ दधिपूज्यायै नमः
९६४. ॐ दधिप्रीतायै नमः
९६५. ॐ दधिचिवरदायिन्यै नमः
९६६. ॐ दधीचीष्टदेवतायै नमः
९६७. ॐ दधीचिमोक्षदायिन्यै नमः
९६८. ॐ दधीचिदैन्यहन्त्र्यै नमः
९६९. ॐ दधीचिदरदारिण्यै नमः
९७०. ॐ दधीचिभक्तिसुखिन्यै नमः
९७१. ॐ दधीचिमुनिसेवितायै नमः
९७२. ॐ दधीचिज्ञानदात्र्यै नमः
९७३. ॐ दधीचिगुणदायिन्यै नमः
९७४. ॐ दधीचिकुलसम्भूषायै नमः
९७५. ॐ दधीचिभुक्तिमुक्तिदायै नमः
९७६. ॐ दधीचिकुलदेव्यै नमः
९७७. ॐ दधीचिकुलदेवतायै नमः
९७८. ॐ दधीचिकुलगम्यायै नमः
९७९. ॐ दधीचिकुलपूजितायै नमः
९८०. ॐ दधीचिसुखदात्र्यै नमः
९८१. ॐ दधीचिदैन्यहारिण्यै नमः
९८२. ॐ दधीचिदुःखहन्त्र्यै नमः
९८३. ॐ दधीचिकुलसुन्दर्यै नमः
९८४. ॐ दधीचिकुलसम्भूतायै नमः
९८५. ॐ दधीचिकुलपालिन्यै नमः
९८६. ॐ दधीचिदानगम्यायै नमः
९८७. ॐ दधीचिदानमानिन्यै नमः
९८८. ॐ दधीचिदानसन्तुष्टायै नमः
९८९. ॐ दधीचिदानदेवतायै नमः
९९०. ॐ दधीचिजयसंप्रीतायै नमः
९९१. ॐ दधीचिजपमानसायै नमः
९९२. ॐ दधीचिजपपूजाढ्यायै नमः
९९३. ॐ दधीचिजपमालिकायै नमः
९९४. ॐ दधीचिजपसन्तुष्टायै नमः
९९५. ॐ दधीचिजपतोषिण्यै नमः
९९६. ॐ दधीचितापसाराध्यायै नमः
९९७. ॐ दधीचिशुभदायिन्यै नमः
९९८. ॐ दूर्वायै नमः
९९९. ॐ दूर्वादलश्यामायै नमः
१०००. ॐ दूर्वादलसमद्युतये नमः

इति दुर्गार्चनपद्धतौ दकारादि-दुर्गासहस्रनामावली समाप्ता ।

●

श्रीदुर्गा-मानस-पूजा

उद्यच्चन्दन-कुङ्कुमारुण-पयोधाराभिराप्लावितां
नानानर्घ्य-मणि-प्रवाल-घटितां दत्तां गृहाणाऽम्बिके ।
आमृष्टां सुर-सुन्दरीभिरभितो हस्ताम्बुजैर्भक्तितो
मातः सुन्दरि ! भक्त-कल्प-लतिके श्रीपादुकामादरात् ।।१।।
देवेन्द्रादिभिरर्चितं सुरगणैरादाय सिंहासनं
चञ्चत्-काञ्चन-सञ्चयाभिरचितं चारु-प्रभा-भास्वरम् ।
एतच्चम्पक-केतकी-परिमलं तैलं महानिर्मलं
गन्धोद्वर्तनमादरेण तरुणीदत्तं गृहाणाऽम्बिके ।।२।।
पश्चाद् देवि गृहाण शम्भुगृहिणि श्रीसुन्दरि प्रायशो
गन्ध-द्रव्य-समूह-निर्भरतरं धात्रीफलं निर्मलम् ।
तत्केशान् परिशोध्य कङ्कतिकया मन्दाकिनी-स्रोतसि
स्नात्वा प्रोज्ज्वल-गन्धकं भवतु हे श्रीसुन्दरि त्वन्मुदे ।।३।।
सुराधिपति-कामिनी-करसरोज-नालीधृतां
सचन्दन-सकुङ्कुमागुरुभरेण विभ्राजिताम् ।
महापरिमलोज्ज्वलां सरस-शुद्ध-कस्तूरिकां
गृहाण वरदायिनि त्रिपुरसुन्दरि श्रीपदे ।।४।।
गन्धर्वा-ऽमर-किन्नर-प्रियतमासन्तान-हस्ताम्बुज-
प्रस्तारैर्ध्रियमाणमुत्तमतरं काश्मीरजा-पिञ्जरम् ।
मातर्भास्वर-भानुमण्डल-लसत्कान्ति-प्रदानोज्ज्वलं
चैतन्निर्मलमातनोतु वसनं श्रीसुन्दरि त्वन्मुदम् ।।५।।
स्वर्णाकल्पित-कुण्डले श्रुतियुगे हस्ताम्बुजे मुद्रिका
मध्ये सारसना नितम्बफलके मञ्जीरमङ्घ्रिद्वये ।
हारो वक्षसि कङ्कणो क्वणरणत्कारौ करद्वन्द्वके
विन्यस्तं मुकुटं शिरस्यनुदिनं दत्तोन्मदं स्तूयताम् ।।६।।

ग्रीवायां धृत-कान्ति-कान्त-पटलं ग्रैवेयकं सुन्दरं
सिन्दूरं विलसल्ललाट-फलके सौन्दर्य-मुद्राधरम् ।
राजत्कज्जलमुज्ज्वलोत्पलदल-श्रीमोचने लोचने
तद्दिव्यौषधि-निर्मितं रचयतु श्रीशाम्भवि श्रीपदे ॥७॥
अमन्दतर-मन्दरोन्मथित-दुग्ध-सिन्धूद्भवं
निशाकर-करोपमं त्रिपुरसुन्दरि श्रीपदे ।
गृहाण मुखमीक्षितुं मुकुरबिम्बमाविद्रुमै-
र्विनिर्मितमघच्छिदे रति-कराम्बुज-स्थायिनम् ॥८॥
कस्तूरी-द्रव-चन्दनागुरु-सुधा-धाराभिराप्लावितं
चञ्चच्चम्पक-पाटलादिसुरभिर्द्रव्यैः सुगन्धीकृतम् ।
देवस्त्रीगण-मस्तक-स्थित-महारत्नादि-कुम्भव्रजै-
रम्भःशाम्भवि सम्भ्रमेण विमलं दत्तं गृहाणाम्बिके ॥९॥
कह्लारोत्पल-नाग-केसर-सरोजाख्यावली-मालती
मल्ली-कैरव-केतकादि-कुसुमै रक्ताश्वमारादिभिः ।
पुष्पैर्माल्यभरेण वै सुरभिणा नानारस-स्रोतसा
ताम्राम्भोज-निवासिनीं भगवतीं श्रीचण्डिकां पूजये ॥१०॥
मांसी-गुग्गुल-चन्दना-ऽगुरु-रजः-कर्पूर-शैलेयजै-
र्माध्वीकैः सहकुङ्कुमैः सुरचितैः सर्पिर्भिरामिश्रितैः ।
सौरभ्य-स्थिति-मन्दिरे मणिमये पात्रे भवेत् प्रीतये
धूपोऽयं सुरकामिनी-विरचितः श्रीचण्डिके त्वन्मुदे ॥११॥
घृतद्रव-परिस्फुरद्रुचिर-रत्न-यष्ट्यान्वितो
महातिमिरनाशनः सुरनितम्बिनी-निर्मितः ।
सुवर्णचषकस्थितः सघनसारवर्त्यान्वित-
स्तव त्रिपुरसुन्दरि स्फुरति देवि दीपो मुदे ॥१२॥
जाती-सौरभ-निर्भरं रुचिकरं शाल्योदनं निर्मलं
युक्तं हिङ्गु-मरीच-जीर-सुरभि-द्रव्यान्वितैर्व्यञ्जनैः ।

पक्वान्नेन स-पायसेन मधुना दध्याज्य-सम्मिश्रितं
नैवेद्यं सुरकामिनी-विरचितं श्रीचण्डिके त्वन्मुदे ।।१३।।
लवङ्ग-कलिकोज्ज्वलं बहुल-नागवल्लीदलं
सजातिफलकोमलं सघनसार-पूगीफलम् ।
सुधामधुरिमाकुलं रुचिर-रत्नपात्र-स्थितं
गृहाण मुखपङ्कजे स्फुरितमम्ब ताम्बूलकम् ।।१४।।
शरत्प्रभव-चन्द्रमःस्फुरित-चन्द्रिकासुन्दरं
गलत्सुरतरङ्गिणी-ललित-मौक्तिकाडम्बरम् ।
गृहाण नवकाञ्चन-प्रभवदण्ड-खण्डोज्ज्वलं
महात्रिपुर-सुन्दरि प्रकटमातपत्रं महत् ।।१५।।
मातस्त्वन्मुदमातनोतु सुभगस्त्रीभिः सदाऽऽन्दोलितं
शुभ्रं चामरमिन्दुकुन्दसदृशं प्रस्वेददुःखापहम् ।
सद्योऽगस्त्य-वसिष्ठ-नारद-शुक-व्यासादि-वाल्मीकिभिः
स्वे चित्ते क्रियमाण एव कुरुतां शर्माणि वेदध्वनिः ।।१६।।
स्वर्गाङ्गणे वेणु-मृदङ्ग-शङ्ख-भेरी-निनादैरुपगीयमाना ।
कोलाहलैराकलिता तवाऽस्तुविद्याधरी-नृत्यकलासुखाय ।।१७।।
देवि भक्तिरसभावितवृत्ते प्रीयतां यदि कुतोऽपि लभ्यते ।
तत्र लौल्यमपि सत्फलमेकं जन्मकोटिभिरपीह न लभ्यम् ।।१८।।
एतैः षोडशभिः पद्यैरुपचारोपकल्पितैः ।
यः परां देवतां स्तौति स तेषां फलमाप्नुयात् ।।१९।।

इति श्रीदुर्गा-मानस-पूजा समाप्ता ।

●

श्रीदुर्गाष्टोत्तर-शतनाम-स्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने ।
यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता भवेत् सती ।।१।।

ॐ सती साध्वी भवप्रीता भवानी भवमोचनी ।
आर्या दुर्गा जया चाद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी ।।२।।
पिनाकधारिणी चित्रा चण्डघण्टा महातपाः ।
मनो-बुद्धिरहङ्कारा चित्तरूपा चिता चितिः ।।३।।
सर्वमन्त्रमयी सत्ता सत्यानन्दस्वरूपिणी ।
अनन्ता भाविनी भाव्या भव्याऽभव्या सदागतिः ।।४।।
शाम्भवी देवमाता च चिन्ता रत्नप्रिया सदा ।
सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी ।।५।।
अपर्णानेकवर्णा च पाटला पाटलावती ।
पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीररञ्जिनी ।।६।।
अमेयविक्रमा क्रूरा सुन्दरी सुरसुन्दरी ।
वनदुर्गा च मातङ्गी मतङ्गमुनिपूजिता ।।७।।
ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा ।
चामुण्डा चैव वाराही लक्ष्मीश्च पुरुषाकृतिः ।।८।।
विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रिया नित्या च बुद्धिदा ।
बहुला बहुलप्रेमा सर्ववाहनवाहना ।।९।।
निशुम्भ-शुम्भहननी महिषासुरमर्दिनी ।
मधुकैटभहन्त्री च चण्ड-मुण्डविनाशिनी ।।१०।।
सर्वाऽसुरविनाशा च सर्वदानवघातिनी ।
सर्वशास्त्रमयी सत्या सर्वास्त्रधारिणी तथा ।।११।।
अनेकशस्त्रहस्ता च अनेकास्त्रस्य धारिणी ।
कुमारी चैककन्या च कैशोरी युवती यतिः ।।१२।।
अप्रौढा चैव प्रौढा च वृद्धमाता बलप्रदा ।
महोदरी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ।।१३।।

अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ।
नारायणी भद्रकाली विष्णुमाया जलोदरी ॥१४॥
शिवदूती कराली च अनन्ता परमेश्वरी ।
कात्यायनी च सावित्री प्रत्यक्षा ब्रह्मवादिनी ॥१५॥
य इदं प्रपठेन्नित्यं दुर्गानामशताष्टकम् ।
नासाध्यं विद्यते देवि त्रिषु लोकेषु पार्वति ॥१६॥
धनं धान्यं सुतं जायां हयं हस्तिनमेव च ।
चतुर्वर्गं तथा चाऽन्ते लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीम् ॥१७॥
कुमारीं पूजयित्वा तु ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम् ।
पूजयेत् परया भक्त्या पठेन्नामशताष्टकम् ॥१८॥
तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि सर्वैः सुरवरैरपि ।
राजानो दासतां यान्ति राज्यश्रियमवाप्नुयात् ॥१९॥
गोरोचना-ऽलक्तक-कुङ्कुमेन
सिन्दूर-कर्पूर-मधुत्रयेण ।
विलिख्य यन्त्रं विधिना विधिज्ञो
भवेत् सदा धारयते पुरारिः ॥२०॥
भौमावास्यानिशामग्रे चन्द्रे शतभिषां गते ।
विलिख्यं प्रपठेत् स्तोत्रं स भवेत् सम्पदां पदम् ॥२१॥

इति श्रीविश्वसारतन्त्रे दुर्गाष्टोतरशतनामस्तोत्रं समाप्तम् ।



सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच

देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनी ।
कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः ॥

देव्युवाच

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम् ।
मया तवैव स्नेहेनाऽप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते ।।

ॐ अस्य श्रीदुर्गा-सप्तश्लोकीस्तोत्र-मन्त्रस्य नारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः ।

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।।१।।
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्य-दुःखभय-हारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदाऽर्द्रचित्ता ।।२।।
सर्वमङ्गल-मङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।३।।
शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।४।।
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ।।५।।
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ।।६।।
सर्वाबाधा-प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्-वैरिविनाशनम् ।।७।।

इति सप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ।



दुर्गा-द्वात्रिंशन्नाम-माला

दुर्गा दुर्गतिशमनी दुर्गापद्-विनिवारिणी ।
दुर्गमच्छेदिनी दुर्ग-साधिनी दुर्ग-नाशिनी ॥१॥
दुर्गतोद्धारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा ।
दुर्गम-ज्ञानदा दुर्ग-दैत्यलोक-दवानला ॥२॥
दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी ।
दुर्गमार्गप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता ॥३॥
दुर्गम-ज्ञान-संस्थाना दुर्गम-ध्यान-भासिनी ।
दुर्गमोहा दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी ॥४॥
दुर्गमासुरसंहन्त्री दुर्गमायुधधारिणी ।
दुर्गमाङ्गी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी ॥५॥
दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी ।
नामावलिमिमां यस्तु दुर्गाया मम मानवः ।
पठेत् सर्वभयान् मुक्तो भविष्यति न संशयः ॥६॥

इति दुर्गा-द्वात्रिंशन्नाम-माला समाप्ता ।

श्रीसूक्तम्

ध्यानम्

अरुण-कमलसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा
कर-युगल-धृतेष्टा-ऽभीति-युग्माम्बुजा च ।
मणिमय-मुकुलाढ्या-ऽलंकृता कल्पजालै-
र्भवतु भुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रियै नः ॥

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्त्रजाम् ।
चन्द्रां हिरणमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१॥
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२॥
अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद-प्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥३॥

कां सोऽस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४॥
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनेमिं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ॥५॥
आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरा याश्च बाह्या ऽअलक्ष्मीः ॥६॥
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७॥
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥८॥
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥९॥
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥१०॥
कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥११॥
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥१२॥
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१३॥
आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१४॥
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम् ॥१५॥
यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ॥१६॥

इति श्रीसूक्तं समाप्तम् ।

देवी-पुष्पाञ्जलि-स्तोत्रम्

अयि गिरि-नन्दिनि नन्दितमेदिनि विश्व-विनोदिनी नन्दिनुते
गिरिवर-विन्ध्य-शिरोऽधि-निवासिनि विष्णुविलासिनि जिष्णुनुते ।
भगवती हे शितिकण्ठ-कुटुम्बिनि भूरिकुटुम्बिनि भूतिकृते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकंपर्दिनी ! शैलसुते ! ।।१।।

सुरवरवर्षिणि दुर्धरधर्षिणि दुर्मुखमर्षिणि हर्षरते
त्रिभुवनपोषिणि शङ्करतोषिणि कल्मषमोषिणि घोषरते ।
दनुज-निरोषिणि दुर्मद-शोषिणि दुर्मुनि-रोषिणि सिन्धुसुते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ।।२।।

अयि जगदम्ब ! कदम्ब-वन-प्रियवासिनि तोषिणि हासरते
शिखरि-शिरोमणि-तुङ्गहिमालय-श्रृङ्ग-निजालय-मध्यगते ।
मधु-मधुरे मधु-कैटभ-गञ्जिनि महिषविदारिणि रासरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।३।।

अयि निजहुंकृति मात्रनिराकृत-धूम्रविलोचन-धूम्रशते
समर-विशोषित-रोषित-शोणित-बीजसमुद्भव-बीजलते ।
शिव-शिव शुम्भ-निशुम्भ-महाहव-तर्पित-भूत-पिशाचरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि !शैलसुते ! ।।४।।

अयि शतखण्ड-विखण्डित-रुण्ड-वितुण्डित-शुण्ड-गजाधिपते
निज-भुजदण्ड-निपातित-चण्ड-विपाटित-मुण्ड-भटाधिपते ।
रिपुगजगण्ड-विदारण-चण्ड-पराक्रम-शौण्ड-मृगाधिपते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।५।।

धनुरनुषङ्ग-रणक्षणसङ्ग-परिस्फुरदङ्ग-नटत्कटके
कनक-पिशङ्ग-पृषत्कनिषङ्ग-रसद्भटश्रृङ्ग-हताबटुके ।
हत-चतुरङ्ग-बल-क्षितिरङ्ग-घटद्-बहुरङ्ग-रटद्-बटुके
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।६।।

अयि रणदुर्मद-शत्रुवधद्धुर-दुर्धर-निर्भर-शक्तिभृते
चतुर-विचार-धुरीण-महाशय-दूतकृत-प्रमथाधिपते ।
दुरित-दुरीह-दुराशय-दुर्मति-दानवदूत-दुरन्तगते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥७॥
अयि शरणागत-वैरिवधू-जन-वीरवराभव-दायिकरे
त्रिभुवन-मस्तक-शूलविरोधि-शिरोधि-कृतामल-शूलकरे ।
दुमि-दुमितामर-दुन्दुभिनाद-मुहुर्मुखरीकृत-दिङ्निकरे
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥८॥
सुरललना-ततथेयित-थेयित-थाभिनयोत्तर-नृत्यरते
कृतकुकुथा-कुकुथोदि-डदाडिक-ताल-कुतूहल-गानरते ।
धुधुकुट-धूधुट-धिन्धि-मितध्वनि-धीर-मृदङ्ग-निनादरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥९॥
जय जय जाप्यजये जयशब्द-परस्तुति-तत्पर-विश्वनुते
झणझण-झिंझिम-झिंकृत-नूपुर-शिञ्जित-मोहित-भूतपते ।
नटित-नटार्ध-नटीनटनायक-नाट-ननाटित-नाट्यरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१०॥
अयि सुमनः-सुमनः-सुमनः-सुमनः-सुमनोरम-कान्तियुते
श्रितरजनी-रजनी-रजनी-रजनी-रजनीकर-वक्त्रभृते ।
सुनयन-विभ्रमर-भ्रमर-भ्रमर-भ्रमर-भ्रमराभिदृते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥११॥
महित-महाहव-मल्ल-मतल्लिक-वल्लित-रल्लित-भल्लिरते
विरचित-वल्लि-कपालिक-पल्लिक-झिल्लिक-भिल्लिक-वर्गवृते ।
श्रुतकृतपुल्ल-समुल्लसितारुण-तल्लज-पल्लव-सल्ललिते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१२॥
अयि सुदतीजन-लालस-मानस-मोहन-मन्मथ-राजसुते ।
अविरल-गण्डगलन्-मदनेदुर-मत्त-मत्तङ्गजराजगते

त्रिभुवन-भूषण-भूतकलानिधि-रूप-पयोनिधि-राजसुते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१३॥
कमलदलामल-कोमलकान्ति-कलाकलितामल-भालतले
सकल-दलामल-कोमलकान्ति-कलाकलितामल-भालतले
सकल-विलास-कलानिलय-क्रम-केलि-चलत्-कलहंस-कुले
अलिकुल-सङ्कुल-कुन्तल-मण्डल-मौलिमिलद्-बकुलालिकुले
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१४॥
करमुरलीरव-वर्जित-कूजित-लज्जित-कोकिल-मञ्जुमते
मिलित-मिलिन्द-मनोहर-गुञ्जित-रञ्जित-शैल-निकुञ्जगते ।
निजगणभूत-महाशबरीगण-रङ्गण-सम्भृत-केलिरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१५॥
कटितट-पीत-दुकूल-विचित्र-मयूख-तिरस्कृत चण्डरुचे
जित-कनकाचल-मौलि-मदोर्जित-गर्जित-कुञ्जर-कुम्भकुचे ।
प्रणत-सुराऽसुर-मौलिमणि-स्फुरदंशु-लसन्नख-चन्द्ररुचे
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१६॥
विजित-सहस्र-करैक-सहस्र-करैक-सहस्रकरैकनुते
कृत-सुरतारक-सङ्गरतारक-सङ्गरतारक-सूनुनुते ।
सुरथ-समाधि-समान-समाधि-समान-समाधि-सुजाप्यरते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१७॥
पदकमलं करुणानिलये वरिवस्यति योऽनुदिनं सुशिवे
अयि कमले कमलानिलये कमलानिलयः स कथं न भवेत् ।
तव मदमेव परं पदमस्त्विति शीलयतो मम किं न शिवे
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१८॥
कनक-लसत्-कलशीकजलै-रनुषिञ्चति तेऽङ्गण-रङ्गभुवम्
भजति स किं न शची-कुच-कुम्भ-तटी-परिरम्भ-सुखानुभवम् ।

तव चरणं शरणं करवाणि सुवाणि पथं मम देहि शिवम्
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।१९।।
तव विमलेन्दुकलं वदनेन्दुमलं कलयन्ननुकूलयते
किमु पुरुहूत-पुरीन्दुमुखी-सुमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते ।
मम तु मतं शिवमानधने भवती कृपया किमु न क्रियते
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।२०।।
अयि मयि दीनदयालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे
अयि जगतो जननीति यथाऽसि मयाऽसि तथाऽनुमतासि रमे ।
यदुचितमत्र भवत्पुरगं कुरु शाम्भवि देवि दयां कुरु मे
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ।।२१।।
स्तुतिमिमां स्तिमितः सुसमाधिना नियमतो यमतोऽनुदिनं पठेत् ।
परमया रमया स निषेव्यते परिजनोऽरिजनोऽपि च तं भजेत् ।।२२।।

इति देवी-पुष्पाञ्जलि-स्तोत्रं समाप्तम् ।

देवी की आरती

जगजननी जय ! जय !! (मा ! जगजननी जय ! जय !!)
भयहारिणि, भवतारिणि भवभामिनि जय ! जय !! जग०
तू ही सत्-चित् सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा ।
सत्य सनातन सुन्दर पर-शिव सुर-भूपा ।।१।।जग०
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी ।
अमल अनन्त अगोचर अज आनन्दराशी ।।२।।जग०
अविकारी अघहारी, अकल, कलाधारी ।
कर्त्ता विधि, भर्त्ता हरि हर संहारकारी ।।३।।जग०
तू विधिवधू, रमा तू, तू उमा, महामाया ।
मूलप्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया ।।४।।जग०

राम, कृष्ण तू, सीता, व्रजरानी राधा! ।
तू वांछा-कल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा ।।५।।जग०
दश विद्या, नवदुर्गा, नाना शस्त्रधरा ।
अष्टमातृका, योगिनि, नव-नव रूप धरा ।।६।।जग०
तू परमधाम-निवासिनि, महाविलासिनि तू ।
तू ही श्मशान-विहारिणि, ताण्डव-लासिनि तू ।।७।।जग०
सुर-मुनि-मोहिनि सौम्या तू शोभाऽऽधारा ।
विवसन विकट-स्वरूपा, प्रलयमयी धारा ।।८।।जग०
तू ही स्नेहसुधामयि, तू अति गरलमना ।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि-तना ।।९।।
मूलाधार-विनासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रदे ।
कालातीता काली, कमला तू वरदे ।।१०।।जग०
शक्ति शक्तिधर तू ही, नित्य अभेदमयी ।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी ।।११।।जग०
हम अति दीनदुखी माँ! विपत-जाल घेरे ।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे ।।१२।।जग०
निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै ।
करुण कर करुणामयि! चरण-शरण दीजै ।।१३।।जग०

●

देवी-नीराजनम्

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामे गौरी ।
मैया जय मंगलकरणी, मैया जय आनन्दकरणी ।।
तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवरी ।।१।। जय अम्बे०
माँग सिन्दूर विराजत, टीको मृगमद को ।। मैया टीको०

उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीकौ ।।२।। जय अम्बे०
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै ।। मैया रक्ता०
रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै ।।३।। जय अम्बे०
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी ।। मैया खड्ग०
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुःख हारी ।।४।। जय अम्बे०
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती ।। मैया नासा०
कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति ।।५।। जय अम्बे०
शुम्भ-निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती ।। मैया महिषा०
धूम्र विलोचन नैना, निशिदिन मदमाती ।।६।। जय अम्बे०
चण्ड-मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे ।। मैया शोणित०
मधु-कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे ।।७।। जय अम्बे०
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी ।। मैया तुम०
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ।।८।। जय अम्बे०
चौंसठ योगिनी गावत, नृत्य करत भैरूँ ।। मैया नृत्य०
बाजत ताल मृदंगा, और बाजे डमरू ।।९।। जय अम्बे०
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता ।। मैया तुम०
भक्तन की दुःख हरता, सुख-सम्पति करता ।।१०।। जय अम्बे०
भुजा चार अति शोभित वरहु अभयधारी ।। मैया वर०
मन वांछित फल पावत, सेवत नर नारी ।।११।। जय अम्बे०
कंचन थाल विराजत, अगर कपुर बाती ।। मैया अगर०
श्री मालकेतु में राजत, कोटिरत्न ज्योति ।।१२।। जय अम्बे०
ये अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावैं ।। मैया जो०
कहत शिवानन्द स्वामी, सुख-सम्पति पावैं ।।१३।। जय अम्बे०

देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जानेस्तुति-कथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम् ॥१॥
विधेरज्ञानेन द्रविण - विरहेणा - ऽलसतया
विधेयाऽशक्यत्वात् तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि! द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥
परित्यक्ता देवा विविध-विधि-सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर-जननि कं यामि शरणम् ॥५॥

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥६॥
चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली-भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणि-ग्रहण-परिपाटी-फलमिदम् ॥७॥
न मोक्षस्याऽऽकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥८॥
नाऽऽराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्ष-चिन्तन-परैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब ! परं तवैव ॥९॥
आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णविशि ।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥
जगदम्ब! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।
अपराध-परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥
मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि ! यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

देव्यपराधक्षमापनम्

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ! ॥१॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैन न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ! ॥२॥
यद्दतं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम् ।
निवेदितं च नैवेद्यं तद् गृहाणाऽनुकम्पया ॥३॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ! ।
यत्पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥४॥
अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् ।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥५॥
अज्ञानाद् विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥६॥
कामेश्वरि ! जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे ।
गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि ! ॥७॥
गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च ।
आगता सुखसम्पत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥८॥
यदत्र पाठे जगदम्बिके ! मया
विसर्ग-बिन्द्वक्षर-हीनमीरितम् ।
तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः
सङ्कल्पसिद्धिश्च सदैव जायताम् ॥९॥
मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं
साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन् ।

तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे!
त्वत्प्रसादात् प्रसीद ॥१०॥
यस्याऽर्थं पठितं स्तोत्रं तवेदं शङ्करप्रिये ।
तस्य देहस्य गेहस्य शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥११॥

इति दुर्गार्चनपद्धतौ देव्यपराधक्षमापनं समाप्तम्।

●

शतचण्डी-सहस्रचण्डी-यज्ञानुक्रमणी

नित्यकर्म विधायैव प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।
गणेशं पूजयेदादौ स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥१॥
मातॄणां पूजनं कार्यं नान्दीश्राद्धमतः परम् ।
आचार्यमथ वृत्वैव ब्रह्माणं गाणपत्यकम् ॥२॥
सदस्यमुपद्रष्टारमृत्विजो वृणुयात्ततः ।
प्रवेशनं मण्डपस्य तावद् दिग्-रक्षणं पुनः ॥३॥
ततो मण्डपपूजादि ग्रहादिस्थापनं ततः ।
देवता-ग्रह-होमं च पूर्वाङ्गमिति कथ्यते ॥४॥
पूजास्विष्टं नवाहुत्यो बलिः पूर्णाहुतिस्तथा ।
संस्रवादि विमोकान्तं होमशेषं समापयेत् ॥५॥
पूर्णपात्रादिदानं च गोदानं च ततः परम् ।
श्रेयो मण्डपदानादि ह्यभिषेको विसर्जनम् ॥६॥
विप्रेभ्यो दक्षिणां दत्वा भोजयेद् विधिपूर्वकम् ।
शुभाशीर्ग्रहणं कुर्यादुत्तराङ्गक्रमो ह्ययम् ॥७॥

इति शतचण्डी-सहस्रचण्डी-यज्ञानुक्रमणी समाप्ता।

●

वेदी-क्रम:

आग्नेय्यां मातृकावेदी वास्तुवेदी च नैर्ऋते ।
वायव्यां क्षेत्रपालस्य ईशान्यां तु नवग्रहा: ।।

-कुण्डरत्नावली

नवग्रहचक्र-स्वरूपम्

वृत्तमण्डलमादित्यमर्धचन्द्रं निशाकरम् ।
त्रिकोणं मङ्गलं चैव बुधं च धनुषाकृतिम् ।।१।।
गुरुमष्टदलं प्रोक्तं चतुष्कोणं च भार्गवम् ।
नराकृतिं शनिं विन्द्याद् राहुं च मकराकृतिम् ।
केतुं खड्गसमं ज्ञेयं ग्रहमण्डलके शुभे ।।२।।

अपि च -

वृत्तमण्डलमादित्यं चतुरस्रं निशाकरम् ।
त्रिकोणं मङ्गलं चैव बुधं वै बाणसन्निभम् ।।१।।
गुरवे पट्टिशाकारं पञ्चकोणं भृगुं तथा ।।२।।
मन्दे च धनुषाकारं सूर्पाकारं तु राहवे ।
केतवे च ध्वजाकारं मण्डलानि क्रमेण तु ।।३।।

शतचण्डी-पूजन-हवन-सामग्री

२.२५ रोली
०.२५ मौली
धूपबत्ती २ पैकेट
केशर ४ मासा
१.२५ कपूर
०.१५ रूई
०.२५ अबीर (गुलाल)
०.२५ बुक्का (अभ्रक)
०.५० सिन्दूर
चावल ५ सेर
पान २५ प्रतिदिन
सुपारी बड़ी ३ सेर
पेड़ा ऽ।। सेर प्रतिदिन
बताशा १। सेर
ऋतुफल (१ दर्जन प्रतिदिन)
गोबर, गोमूत्र
दुग्ध ऽ।। सेर (प्रतिदिन)
दही १ पाव प्रतिदिन
घृत १। पाव
चीनी ऽ।
शहद आधा पाव
यज्ञोपवीत २५
अतर १ शीशी
गुलाब जल १ शीशी
पञ्चमेवा ऽ।। सेर
मिश्री ऽ।। सेर
पुष्प छुट्टा प्रतिदिन

माला १५ प्रतिदिन
कुशा, गंगाजल
तुलसी, दूर्वा
बिल्वपत्र प्रतिदिन
१.०० इलायची छोटी
१.०० लवंग
०.५० जावित्री
जायफल ४
नारियल ८
गिरिगोला ५
०.५० लालरंग
०.५० पीला रंग
०.५० हरा रंग
०.५० काला रंग
पञ्च पल्लव
(आम, गुलर, पाकर, वट, पीपल)
पञ्च रत्न की पुड़िया ५
(सोना, हीरा, मोती, पुखराज, नीलम)

सर्वौषधि -
०.१५ मुरा
०.१५ जटमांसी
०.१५ वच
०.१५ कूट
०.१५ शिलाजीत
०.१५ आमा हल्दी, दारु हल्दी

०.१५ सटी (कचूर)
०.१५ चम्पा
०.१५ नागर मोथा
सप्त मृत्तिका
(हाथी के स्थान की, घोड़े की स्थान की, बल्मीक (दीमक) की मिट्टी, नदी संगम की, तालाब की, गोशाला की, राजद्वार (चौराहा) की मिट्टी)
०.२५ मेंहदी पीसी
०.२५ हल्दी पीसी
०.२५ सुरुआरी का बीया
०.२५ काली मिर्च
०.१५ गुरुच
०.१५ पीली सरसों
०.२५ लाल चन्दन
अनार २
खोआ ऽ।।
तेल सुगन्धित ऽ।
काला उड़द ऽ।।
पापड़ २५
काठ की चौकी ५
काठ का पाटा ३
लोहे की कँटिया ४
केले के खम्भे ८
कम्बल १
सूत की डोरी १० हाथ
नवग्रह की लकड़ी –
(मदार की १०८, पलाश की १०८, खैर की १०८, अपामार्ग की १०८, पीपल की १०८, गूलर की १०८, शमी की लकड़ी १०८)
दूर्वा १०८
कुशा १०८
कलश-ताँबे या पीतल का ५
चाँदी या ताँबे का कलश १
कमण्डलु १
थाली मुरादाबादी १
थाली काँसे की १
कटोरा काँसे का बड़ा १
तस्तरी ५
काँसे की कटोरी २
(छायापात्र के लिए)
पूर्णपात्र (भगोना) १
भगोना खीर पकाने का १
कलछुल पीतल का १
आरतीदानी १
धूपदानी १
घंटा १, घड़ौल १, शंख १
रेशमी साड़ी १ (दुर्गाजी के लिए)
रेशमी ओढ़नी (दुर्गाजी के लिए)
कब्जा १
चुनरी १

धोती ७
अँगोछा ७
सफेद कपड़ा ३ गज
लाल कपड़ा १। गज
बन्दनवार १
पञ्चरंगा ध्वजा १
पञ्चरंगा चँदवा बड़ा १
चँदवा छोटा १
सौभाग्य पिटारी १
शीशा १, कंघी १
दुर्गा की फोटो बड़ी १
दुर्गाजी की मूर्ति सुवर्ण की १
सोने की नथिया १ (१।। तोले की)
चाँदी का सिंहासन १
चाँदी की छतरी १
चाँदी की चँवर १
चाँदी की धूपदानी १
चाँदी की आरतीदानी १
चाँदी की तस्तरी १
चाँदी की कटोरी १
चाँदी का पञ्चपात्र १
चाँदी की आचमनी १
चाँदी का अर्घा १
चाँदी का तष्टा १
चाँदी का चौकोर पत्र १
(१६ अँगुल लम्बा-चौड़ा)

वरण सामग्री -

धोती ११, दुपट्टा ११
अँगोछा ११, लोटा ११
गिलास ११, पञ्चपात्र ११
आचमनी ११
गोमुखी ११
माला ११
यज्ञोपवीत ११,
खड़ाऊँ ११
दुर्गा की पुस्तक ११
आसन ११

हवन सामग्री -

तिल २५ सेर
चावल १२।। सेर
यव ६। सेर
चीनी ३ सेर
घृत ५ सेर
पञ्चमेवा ऽ।।
कमलगट्टा ऽ।।
गुंगुल १। पाव
भोजपत्र १। पाव
चन्दन का चूरा ऽ।।
आम की लकड़ी २ मन

इति शतचण्डी-हवन-पूजन-सामग्री समाप्त।

विशेष-यह सामग्री शतचण्डी की है। सहस्रचण्डी, लक्षचण्डी एवं कोटिचण्डी में उत्तरोत्तर हवन, वरण एवं देय द्रव्य में वृद्धि कर लेनी चाहिए।

श्रीदेव्यथर्वशीर्षम्[1]

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ।।१।।

साब्रवीत्- अहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषत्मकं जगत् । शून्यं चाशून्यं च ।।२।।

अहमानन्दानानन्दौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं ब्रह्मा-ब्रह्मणी वेदितव्ये । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् ।।३।।

वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ।।४।।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि । अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ।।५।।

अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि ।।६।।

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते । अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एवं वेद । स दैवीं सम्पदमाप्नोति ।।७।।

ते देवा अब्रुवन् –

---

१. अथर्ववेद में देव्यथर्वशीर्ष पाठ का विशेष फल वर्णित है । इसके नित्यप्रति पाठ से देवी की कृपा शीघ्र प्राप्त होती है । यद्यपि सप्तशती पाठ का अङ्ग निश्चित कर कहीं इसका उल्लेख नहीं है, फिर भी सप्तशती पाठ से पहले इसका पाठ कर लेना अत्यधिक फलदायक सिद्ध होगा ।

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।८।।
तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं
वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् ।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्या-
महेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः ।।९।।
देवीं वाचमजनयन्त देवा-
स्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना
धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ।।१०।।
कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् ।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ।।११।।
महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।।१२।।
अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव ।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ।।१३।।
कामो योनिः कमला वज्रपाणि-
र्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः ।
पुनर्गुहा सकला मायया च
पुरूच्यैषा विश्वमातादिविद्योम् ।।१४।।

एषाऽऽत्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी । पाशाङ्कुश-धनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति ।।१५।।

नमस्ते अस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः ।।१६।।

सैषाऽष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः । सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च । सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः । सैषा सत्त्वरजस्तमांसि । सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी । सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः । सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि । कलाकाष्ठादिकालरूपिणी । तामहं प्रणौमि नित्यम् ।

पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ।
अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ।।१७।।
वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ।।१८।।
एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतपः शुद्धचेतसः ।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ।।१९।।
वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम् ।
सूर्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्तष्टात्तृतीयकः ।
नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः ।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ।।२०।।
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् ।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ।
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ।।२१।।
नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम् ।
महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ।।२२।।

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया । यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता ।

यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका। एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका। अत एवोच्यते अज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ।।२३।।

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी।
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ।।२४।।
तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ।।२५।।

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति। इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति-शतलक्षं प्रजप्त्वाऽपि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति।
शतमष्टोत्तरं चाऽस्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः।
दशवारं पठेद् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते।
महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ।।२६।।

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति। नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति। प्राण-प्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति। भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति। स महामृत्युं तरति य एवं वेद।

इति देव्यथर्वशीर्षं समाप्तम्।

सप्तशती-द्वारा-प्रश्नोत्तर-ज्ञानम्

सम्पूज्य विधिवद् देवीं कुमारीं रूपधारिणीम् ।
कृत्वाऽष्टदलमुर्वीस्थं तत्र तत्पुस्तकं न्यसेत् ॥१॥

पूजितायाः करे दद्यात् कन्यकायास्तु मुद्रिकाम् ।
शलाकां हेममय्यां च गजदन्तस्य वा शुभाम् ॥२॥

द्वादशाङ्गुलमात्रां तु विन्यसेत् पुस्तकान्तरे ।
सम्पश्येत् प्रथमां पङ्क्तिं यत्स्वरूपं कथानकम् ।
आदिशेत् तत्स्वरूपं हि फलं शास्त्रविशारदः ॥३॥

इति सप्तशती-द्वारा-प्रश्नोत्तरज्ञानं समाप्तम् ।

सप्तशती द्वारा प्रश्नोत्तर विचार – साधक को चाहिए कि, सर्वप्रथम देवीस्वरूपा कुमारी कन्या का विधिवत् गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि से पूजन कर, पृथ्वी पर अष्टदल कमल का निर्माण कर, उस पर दुर्गा-सप्तशती की पुस्तक को स्थापित करे ॥१॥ तत्पश्चात् उस कन्या के हाथ में सुवर्ण मुद्रिका (सोने की अँगूठी) तथा सुवर्णशलाका (सोने की सलाई) अथवा हाथी दाँत की सलाई रखे ॥२॥ अनन्तर दुर्गा-सप्तशती के पुस्तक को खोलकर उसके मध्य निर्माण करे, अर्थात् बारह अंगुल सीमित स्थान पर बारह रेखाएँ खींच कर प्रथम रेखा में बारह अंगुल मात्रा की पंक्ति के अनुसार उसका जो भी स्वरूप एवं कथानक-श्लोक में आये तदनुसार शास्त्र-विशारद साधक उसका फल प्रश्नकर्ता को बताये ॥३॥

इस प्रकार सप्तशती-द्वारा प्रश्नोत्तर-विचार समाप्त ।

ग्रन्थकारसंस्तवः

देवरिया-जनपदके ख्याते ग्रामे मझौलिकाऽभिख्ये ।
उद्भटशूरा मल्ला यत्राऽऽसन् विश्वविख्याताः ॥ १ ॥
विद्या-सदाचारगुण-प्रसिद्धा लोकद्वयी साधनकर्मसिद्धाः ।
यत्राऽभवँल्लोक-ललामभूता, विप्रा जगद्वन्दित-पादपद्माः ॥ २ ॥
पितामहोऽभून्मम लोकवित्तः, **श्रीकान्त**नामा-ऽऽगममर्म-विज्ञः ।
तदात्मजौ द्वौ परमाऽर्थनिष्ठौ, जातौ प्रतीक्ष्याऽर्चनरक्तचितौ ॥ ३ ॥
श्रीसन्तशरणनामा ज्यायानासीन्नितान्त-विख्यातः ।
शास्त्राऽनुशीलनपरः शुभकर्मपरायणः सततम् ॥ ४ ॥
श्रीसत्यनारायणनामधेय आसीत्कनीयाञ्शुभभागधेयः ।
द्वावप्यभूतां पितृभक्तिभाजौ, लोकोपकारे परमप्रवीणौ ॥ ५ ॥
श्रीसन्तशरणविदुषो द्वौ पुत्रौ भक्तिसम्पन्नौ ।
श्रीलजगन्नाथ इति ज्यायानासीद्गुणाऽग्रणीर्धीमान् ॥ ६ ॥
तदनुजनुर्गुरुभक्तः **शिवदत्तो**ऽहं समाख्यया प्रथितः ।
पित्रोः परिचरणपरः शास्त्राऽम्बुधिमज्जने रसिकः ॥ ७ ॥
वागीश्वरी नाम ममाऽऽद्यपत्नी, **सावित्रि**काया प्रसवित्रिकाऽऽसीत् ।
सा **द्रौपदी** नाम मदन्यपत्नी, **पुष्पा**प्रसूर्द्वे अपि मुक्तिभाजौ ॥ ८ ॥
पौरस्त्य-पाश्चात्त्य-विशिष्टविद्या कलाप्रवीणस्य विचक्षणस्य ।
सत्यव्रतस्याऽस्ति कलत्ररत्नं **सावित्रि**का नाम मदीयकन्या ॥ ९ ॥
कनीयसी मे दुहिताऽस्ति **पुष्पा**, श्रीमद्-**रमेशा**ख्यबुधस्य पत्नी ।
उभे मदीये तनये, स्वधर्मं, सम्पाद्य सौभाग्य-समन्विते स्तः ॥१०॥
आचार्योऽहं शब्दशास्त्रे तथैव, साहित्याऽब्धिर्ग्रन्थनिर्माणशीलः ।
तन्त्रे, स्तोत्रे, व्याकृतौ धर्मशास्त्रे, सन्ति ग्रन्था निर्मिता मामकीनाः ॥११॥
अद्याऽवधि ग्रन्थशताऽधिकं मे प्रकाशितं भूरिपरिश्रमेण ।
अशान्तयत्नेन कृतिं करोमि शास्त्रोक्तकृत्यं विदधामि नित्यम् ॥१२॥
स्वचित्त-शिष्टा-ऽऽस्तिक-तोषणाय निरन्तरं शास्त्रचयं समीक्ष्य ।
मया प्रणीता विविधाः प्रबन्धाः संप्रार्थये तत्र सतां सुदृष्टिम् ॥१३॥

●

दुर्गार्चन-पद्धतिस्थ-वैदिकमन्त्राणामनुक्रमणी

इति दुर्गार्चन-पद्धतिस्थ-वैदिकमन्त्राणामनुक्रमणी समाप्ता ।

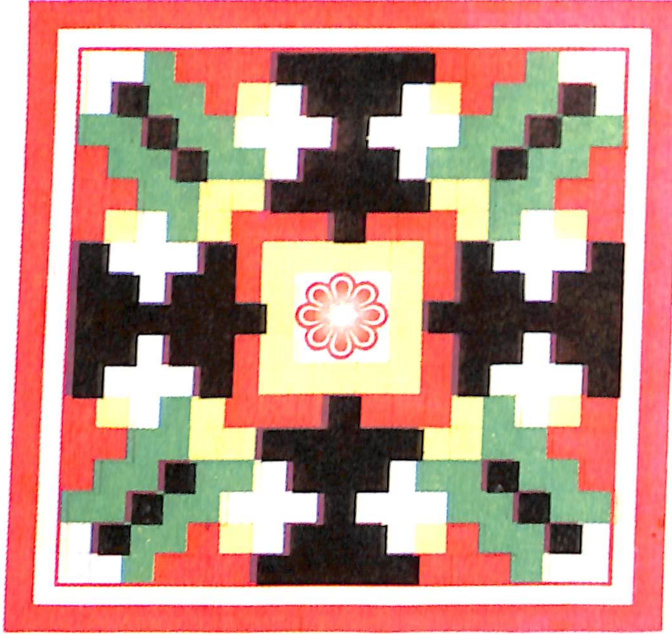
दुर्गार्चनपद्धतिस्थ-पौराणिक-श्लोकानामनुक्रमणी

इति दुर्गार्चनपद्धतिस्थ-पौराणिकश्लोकानामनुक्रमणी समाप्ता ।

इति दुर्गार्चनपद्धतौ परिशिष्टं समाप्तम् ।



चतुर्लिङ्गतोभद्रचक्रम्



रेखा त्वष्टादश प्रोक्ताश्चतुर्लिङ्गसमुद्भवे। कोणेन्दुस्त्रिपदैः श्वेतस्त्रिपदैः कृष्णशृङ्खला ।।१।।

वल्ली सप्तपदा नीला भद्रं रक्तं चतुष्पदम् । भद्रपार्श्वे महारुद्रं कृष्णामष्टादशैः पदैः ।।२।।

शिवस्य पार्श्वतो वापी कुर्यात् पञ्चपदां सिताम् । पदमेकं तथा पीतं भद्रवाप्योस्तु मध्यतः ।।३।।

शिरसि शृङ्खलायाश्च कुर्यात् पीतं पदत्रयम् । लिङ्गानां स्कन्धतः कोष्ठा विंशती रक्तवर्णका ।।४।।

परिधिः पीतवर्णैस्तु पदैः षोडशभिः स्मृता । पदैस्तु नवभिः पश्चाद् रक्तं पद्मं सकर्णिकम् ।।५।।

चतुःषष्टिपदं वास्तुमण्डलचक्रम्

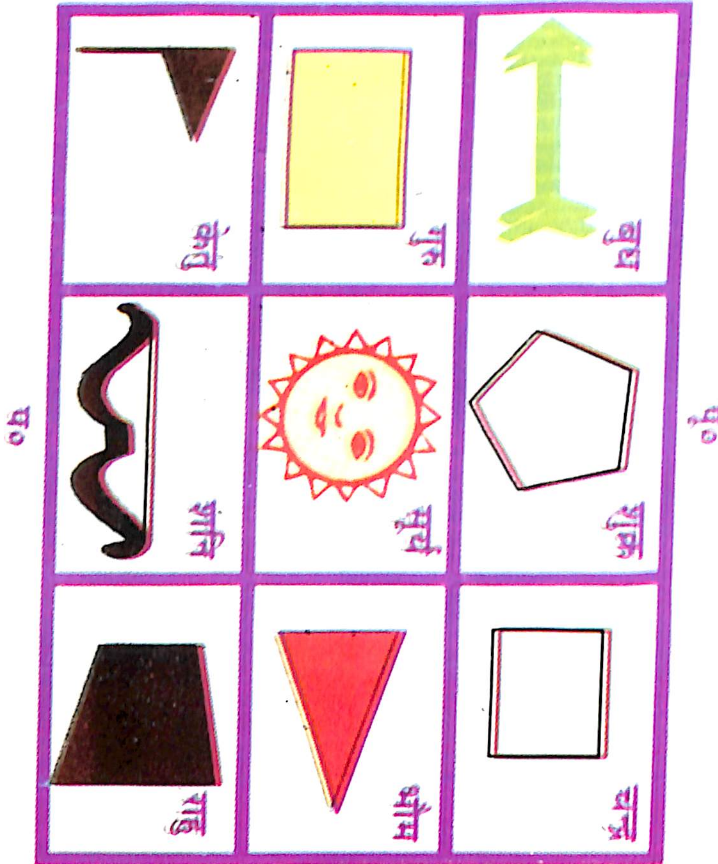
हर प्रकार की धार्मिक पुस्तकों के मिलने का पता :

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार, कचौड़ीगली, वाराणसी-२२१ ००१

फोन नं० : २३९२४७१, २३९२५४३



नवग्रहचक्रम्



शुक्रार्कौ प्राङ्मुखौ ज्ञेयो, गुरुसौम्यावुदङ्मुखौ । प्रत्यङ्मुखौ शनिः सोमः, शेषाः दक्षिणतो मुखाः ।।१।।
आदित्याऽभिमुखाः सर्वे, साऽधि प्रत्यधिदेवताः । स्थापनीया मुनिश्रेष्ठाः, नाऽन्तरेण पराङ्मुखाः ।।२।।

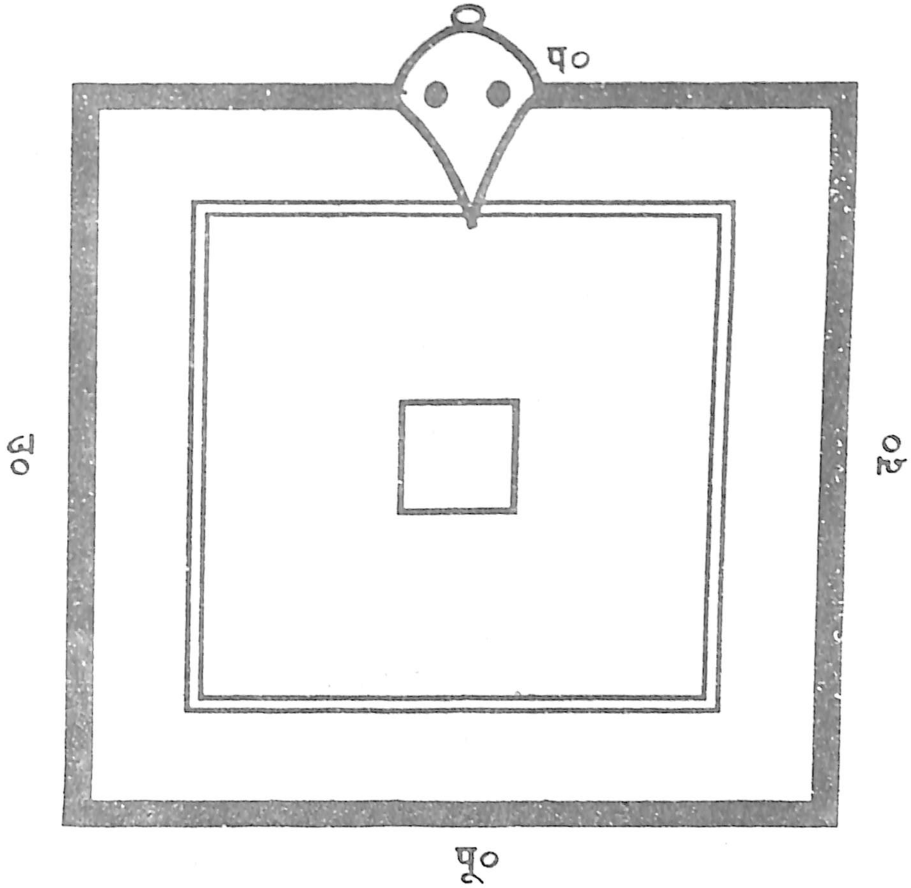
योगिनीयन्त्रम्

ॐ दिव्ययोगिन्यै नमः १	ॐ महायोगिन्यै नमः २	ॐ सिद्धयोगिन्यै नमः ३	ॐ गणेश्वर्यै नमः ४	ॐ प्रेताक्ष्यै नमः ५	ॐ डाकिन्यै नमः ६	ॐ काल्यै नमः ७	ॐ कालरात्र्यै नमः ८
ॐ निशाचर्यै नमः ९	ॐ झङ्कार्यै नमः १०	ॐ रौद्रवेताल्यै नमः ११	ॐ भूतल्यै नमः १२	ॐ भूतऽम्बर्यै नमः १३	ॐ ऊर्ध्वविभ्यै नमः १४	ॐ विरूपाक्ष्यै नमः १५	ॐ शुष्काङ्ग्यै नमः १६
ॐ नरभोजिन्यै नमः १७	ॐ भट्टार्यै नमः १८	ॐ वीरभद्रायै नमः १९	ॐ धूम्राक्ष्यै नमः २०	ॐ कलहप्रियायै नमः २१	ॐ राक्षस्यै नमः २२	ॐ घोररक्ताक्ष्यै नमः २३	ॐ विश्वरूपायै नमः २४
ॐ भयङ्कर्यै नमः २५	ॐ चण्डिकायै नमः २६	ॐ वीरकौमार्यै नमः २७	ॐ वाराह्यै नमः २८	ॐ मुण्डधारिण्यै नमः २९	ॐ सासुर्यै नमः ३०	ॐरोद्रझङ्कार-भाषिण्यनमः ३१	ॐ त्रिपुरान्त-कायै नमः ३२
ॐ भैरवध्वं-सिन्यै नमः ३३	ॐ क्रोधदुर्मुख्यै नमः ३४	ॐ प्रेतवाहिन्यै नमः ३५	ॐ खट्वाङ्ग्यै नमः ३६	ॐदीर्घलम्बोष्ठ्यै नमः ३७	ॐ मालिन्यै नमः ३८	ॐ मन्त्रयोगिन्यै नमः ३९	ॐकालाग्नि-गहण्यै नमः ४०
ॐ क्षत्रयै नमः ४१	ॐ कङ्काल्यै नमः ४२	ॐ भुवनेश्वर्यै नमः ४३	ॐ कटक्यै नमः ४४	ॐ कीटिन्यै नमः ४५	ॐ रौद्र्यै नमः ४६	ॐ यमदूतयै नमः ४७	ॐ करालिन्यै नमः ४८
ॐ घोराक्ष्यै नमः ४९	ॐ कार्मुक्यै नमः ५०	ॐ काकदृष्ट्यै नमः ५१	ॐ अधोमुख्यै नमः ५२	ॐ मुण्डाग्रधा-रिण्यै नमः ५३	ॐ व्याघ्र्यै नमः ५४	ॐ किंकिण्यै नमः ५५	ॐ प्रेतभाषिण्यै नमः ५६
ॐ कालरूपायै नमः ५७	ॐ कामाख्यायै नमः ५८	ॐ उद्रिण्यै नमः ५९	ॐयोगपीठि-कायै नमः ६०	ॐ महालक्ष्म्यै नमः ६१	ॐ एकवीरायै नमः ६२	ॐ कालरात्र्यै नमः ६३	ॐ पीठिकायै नमः ६४

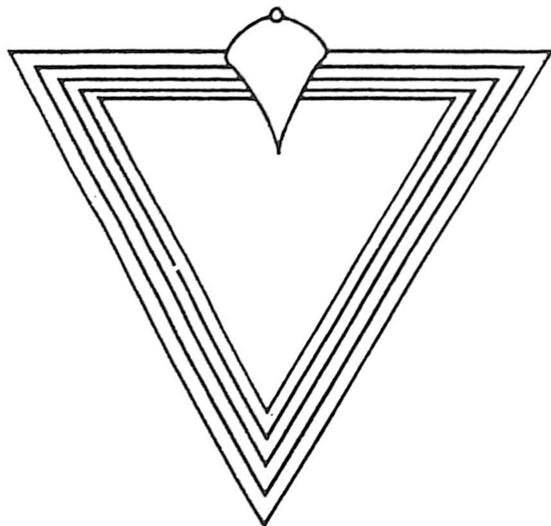
क्षेत्रपालयन्त्रम्

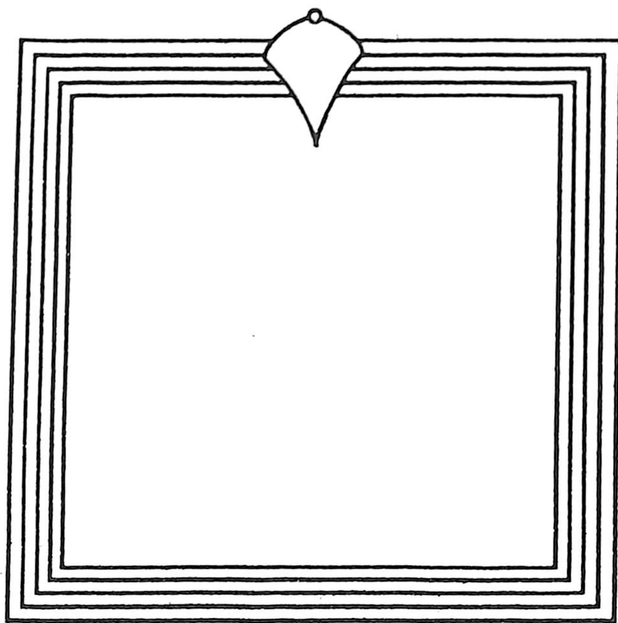
ॐ अजराय नमः १	ॐआपकुम्भाय नमः २	ॐ इन्द्रस्तुतये नमः ३	ॐ ईडाचाराय नमः ४	ॐ उक्तसंज्ञाय नमः ५	ॐ ऊष्मादाय नमः ६	ॐ ऋषिसूद-नाय नमः ७
ॐ ऋमुक्ताय नमः ८	ॐ लृप्तकेशाय नमः ९	ॐ लृपकाय नमः १०	ॐ एकदंष्ट्रकाय नमः ११	ॐ ऐरावताय नमः १२	ॐ ओघबन्धवे नमः १३	ॐऔषधीशाय नमः १४
ॐ अञ्जनाय नमः १५	ॐ अस्त्रुवागय नमः १६	ॐ कवलाय नमः १७	ॐ खरुखान-लाय नमः १८	ॐ गोमुख्याय नमः १९	ॐ घण्टादाय नमः २०	ॐ ङमनसे नमः २१
ॐ चण्डवार-णाय नमः २२	ॐ छटाटोपाय नमः २३	ॐ जटलाय नमः २४	ॐ झङ्गीवाय नमः २५	ॐ ग्रहश्वराय नमः २६	ॐ टङ्कपाणये नमः २७	ॐ ठानबन्धवे नमः २८
ॐ डामराय नमः २९	ॐ ढक्कारवाय नमः ३०	ॐ णवार्णवाय नमः ३१	ॐ तडिद्दहाय नमः ३२	ॐ थिराय नमः ३३	ॐ दन्तुराय नमः ३४	ॐ धनदाय नमः ३५
ॐ नतिकृता-न्ताय नमः ३६	ॐ पण्डकाय नमः ३७	ॐ फट्काराय नमः ३८	ॐ वीरसङ्घाय नमः ३९	ॐ भृङ्गाय नमः ४०	ॐमेघभासुराय नमः ४१	ॐ युगान्ताय नमः ४२
ॐ रौद्यवाय नमः ४३	ॐ लम्बोष्ठाय नमः ४४	ॐ वसवाय नमः ४५	ॐ शूकनन्दाय नमः ४६	ॐ षडालाय नमः ४७	ॐ सुनाम्ने नमः ४८	ॐ हम्बुकाय नमः ४९

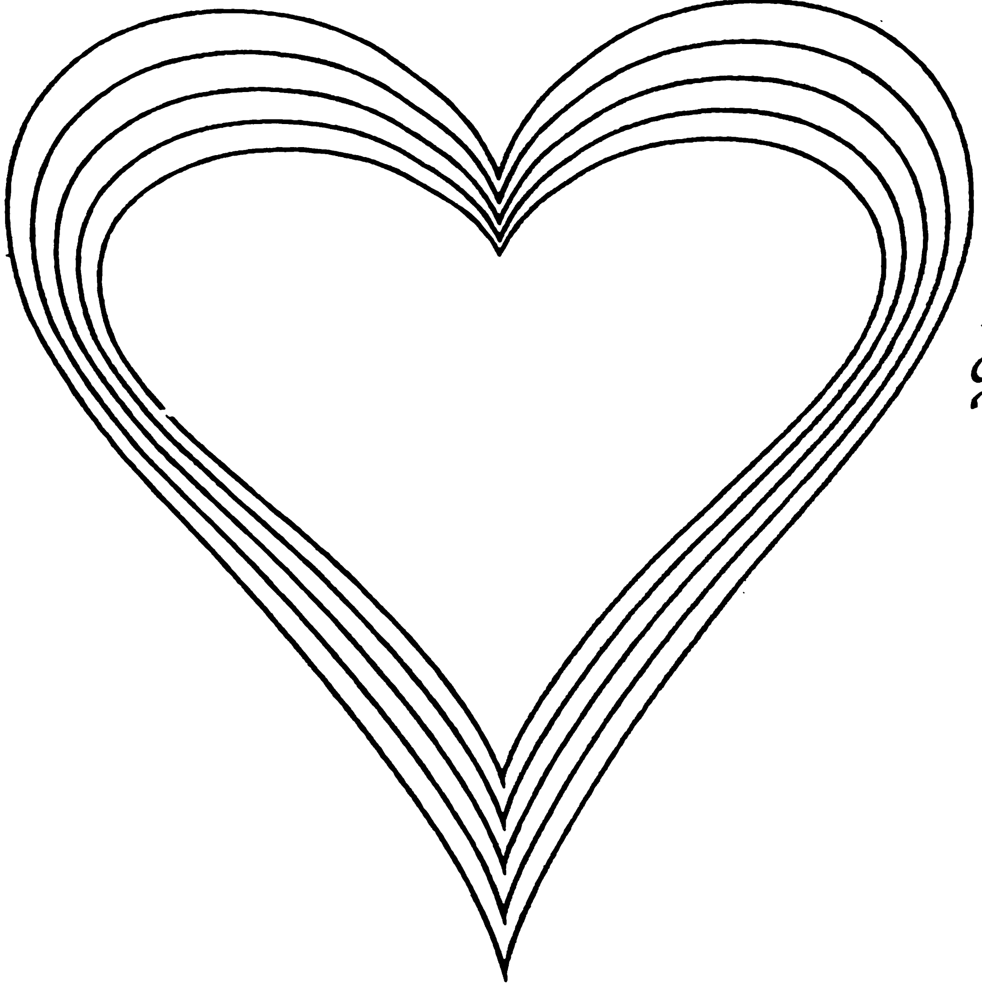
कुण्डस्वरूपम्



योनि १२ अंगुली ऊँची	१२ अंगुल लम्बी	८ अंगुल चौड़ी रक्तवर्ण
सफेद ऊपर की सीढ़ी	४ अंगुल चौड़ी	४ अंगुल ऊँची १
लाल उसके नीचे की	३ अंगुल चौड़ी	३ अंगुल ऊँची २
काली उसके नीचे की	२ अंगुल चौड़ी	२ अंगुल ऊँची ३


पश्चिम
त्रिकोणम्


पश्चिम
चतुष्कोणात्मम्


पश्चिम
योनिकुण्डम्

विश्वकर्मा प्रकाश भाषा टीका	७५.००
मुहूर्तचिन्तामणि भाषा टीका	६०.००
लघु संग्रह भाषा टीका	५०.००
घाघ-भड्डरी की कहावतें भाषा टीका बड़ा	२५.००
स्त्री-जातक भाषा टीका	२५.००
लग्नचन्द्रिका भाषा टीका	४०.००
चमत्कारचिन्तामणि भाषा टीका	८.००
होडाचक्र भाषा टीका	४.००
जन्मपत्रप्रबोध भाषा टीका	६.००
महावीर प्रश्नावली	२.००
राशिमाला	४.००
शीघ्रबोध भाषा टीका	२५.००
हनुमान ज्योतिष	१०.००
शिवस्वरोदय भाषा टीका	२५.००
ग्रहशान्ति पद्धति भाषा टीका	८०.००
यज्ञ-मन्त्र-संग्रह	२००.००
प्रभु विद्या प्रतिष्ठार्णव (सर्वदेव प्रतिष्ठा मयूख)	२००.००
विधान प्रकाश भाषा टीका	१००.००
गरुड पुराण भाषा टीका	४०.००
कुण्ड निर्माण स्वाहाकार पद्धति भाषा टीका	५०.००
विष्णुयाग पद्धति भाषा टीका	२००.००
विवाह पद्धति भाषा टीका	२५.००
पञ्चरत्न-विवाह पद्धति भाषा टीका	२५.००
श्राद्ध-विवेक भाषा टीका	२.००
प्रेतमंजरी भाषा टीका	३०.००
उपनयन पद्धति भाषा टीका	२५.००
वाशिष्ठी हवन पद्धति भाषा टीका	२५.००
नित्यकर्म पद्धति भाषा टीका	१०.००
गणपति प्रतिष्ठा पद्धति भाषा टीका	२५.००
कुम्भ विवाह प्रयोग भाषा टीका	८.००
धनिष्ठादि पञ्चक शान्ति भाषा टीका	२०.००
पार्वण श्राद्ध पद्धति भाषा टीका	८.००
विश्वकर्मा-कथा पूजा पद्धति भाषा टीका	८.००
गृहवास्तु शांति पद्धति भाषा टीका	३०.००
सुगम वास्तु शांति प्रयोग भाषा टीका	१५.००
मूलशान्ति भाषा टीका	५.००
शुक्लयजुर्वेदीय सन्ध्योपासन भाषा टीका	५.००
सर्वदेव पूजा पद्धति भाषा टीका	५.००
गोदान-तुलादान पद्धति	४.००
देवर्षि-पितृ-तर्पण भाषा टीका	४.००
पार्थिव पूजन विधि भाषा टीका	४.००
पञ्चदेवता पूजा पद्धति भाषा टीका	४.००
सत्यनारायण व्रत कथा ७ अध्याय भाषा टीका	८.००
सत्यनारायण व्रत कथा ५. अध्याय, भाषा टीका	६.००
सत्यनारायण व्रत कथा ५ अध्याय 'शिवदत्ती' टीका	१५.००
सविधि सत्यनारायण विवाह पद्धति सहित	१५.००
अन्नपूर्णा व्रत-कथा भाषा टीका	१५.००
शिवरात्रि व्रत कथा भाषा	८.००
त्रिलोकीनाथ व्रत कथा भाषा	५.००
सङ्कष्टी गणेश चतुर्थी व्रत-कथा भाषा टीका	६०.००
सङ्कष्टी गणेश चतुर्थी व्रत-कथा भाषा	२५.००
करवाचौथ-अहोई-अष्टमी-दीपावली-कथा	५.००
वट सावित्री व्रत-कथा भाषा टीका	८.००

मुद्रक - **भारत प्रेस**, कचौड़ीगली, वाराणसी-१